40

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥
॥ श्री गोपीजन वल्लभाय नमः ॥
॥ श्रीमदाचार्यचरण कमलेभ्यो नमः ॥
॥ श्री गुसांईजी परमदयालवे नमः ॥

પુષ્ટિ [illegible] પુસ્તકાલય
શ્રી ઠકરાઈ ભાટીયા [illegible], શ્રી વલ્લભ સુખધામ,
એસ. વી. રોડ, [illegible]
કાંદીવલી (વેસ્ટ), મુંબઈ-૪૦૦ ૦[illegible]

श्रीमद् वल्लभाचार्यजी के

चरण चिन्ह

की भाव-भावना

श्रीवल्लभजी कृत

संकलनकर्त्ता
प.भ. श्रीवल्लभपाद पद्म मिलिन्द

– प्रकाशक –
वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास
द्वारा - श्री गोवर्धननाथजी का मन्दिर
१, साउथ यशवंतगंज, इन्दौर (म.प्र.) ४५२ ००२

प्रकाशक –

वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास
सहयोगी संस्था :
अंतर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद्
शाखा-इन्दौर

प्रथम संस्करण – २००० प्रतियाँ
ईसवी सन् २०००
द्वितीय संस्करण – २००० प्रतियाँ
विक्रम संवत् २०६२
वल्लभाब्द ५२८
ईसवी सन् २००५

न्यौछावर – ४० रुपये (डाक व्यय अतिरिक्त)

प्राप्ति स्थान –

वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास
श्री गोवर्धननाथजी का मन्दिर,
१, दक्षिण यशवंतगंज, इन्दौर-४५२ ००२ (म.प्र.)

मुद्रक –

अप्सरा फाईन आर्ट प्रिंटर्स
८९, एम.जी. रोड, जेलरोड चौराहा,
इन्दौर (म.प्र.) फोन : ०७३१-२४३४१४७, २४९००३९

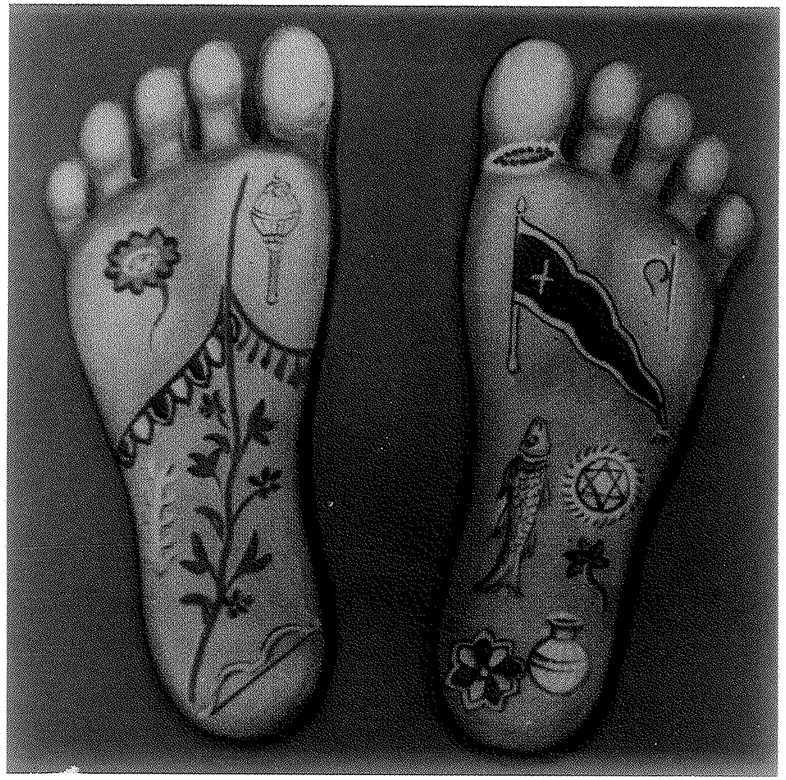

श्रीमद् वल्लभाचार्यजी के चरण चिन्ह

॥ श्री हरिः ॥
॥ श्री गोवर्धननाथो विजयते ॥

शुभाशीर्वचन

अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि आपश्री ने वैष्णव मित्र मंडल सार्वजनिक न्यास, इन्दौर के द्वारा पुष्टिमार्गीय ग्रंथों का प्रचार-प्रसार हो इस हेतु प्रकाशन प्रारम्भ करवाया तथा उस प्रकाशन संस्था को इतना यश प्राप्त हुआ कि प्रतिवर्ष आजीवन सदस्यों की संख्या में अभिवृद्धि होती ही जा रही है तथा वैष्णव वृन्द को ग्रंथों से इतना अधिक लाभ प्राप्त हो रहा है कि श्री वल्लभजी कृत श्री महाप्रभुजी के त्रितयात्मक स्वरूप के युगल चरण चिन्ह की भाव भावना के प्रथम संस्करण का प्रकाशन वि.सं. २०५९ में २००० प्रतियों में किया गया और ये सभी प्रतियाँ समाप्त हो गईं और वैष्णवों की मांग के कारण पुनः अब द्वितीय संस्करण छपवाने की आवश्यकता प्रतीत हो रही है।

पुष्टि सम्प्रदाय की दृष्टि से श्री वल्लभजी ने वाम चरण में आठ तथा दक्षिण चरण में सात इस प्रकार से १५ चिन्हों का ब्रज भाषा में वर्णन इस ग्रंथ में किया है जो नीचे लिखे दो दोहों में निरूपित है :

कमल, वज्र, अरु गदा पताका-तोरण अति मन भावे ।
सुखदवल्ली, धनुष श्री वल्लभ के दक्षिण चरण चित्त लावे ।।१।।

ध्वज, अंकुश, अरु मीन, सुदर्शन, अष्ट दल अति सुख रूप ।
कमल, कुंभ, जव श्री महाप्रभुजी के वाम चरण में अनूप ।।२।।

वैसे तो चरण चिन्हों की महिमा ज्योतिष शास्त्र में निरूपित की गई है, किन्तु भावात्मक रूप में विशद् वर्णन प्राप्त नहीं है ।

श्रीनाथजी के दोनों चरण चिन्हों का वर्णन श्री हरिरायजी महाप्रभुजी ने अपने **'चरण-चिन्ह'** नामक ग्रंथ में किया है । उन्होने ९ दाहिने तथा ७ चिन्ह वाम (बांये) चरण में निरूपित किये हैं ।

अतः श्री महाप्रभुजी के दोनों चरण चिन्हों की भाव-भावना का सदा स्मरण करना ही वैष्णवजनों का परम कर्त्तव्य है ।

शुभकामना सहित

स्नान यात्रा **गो. रुक्मणी बहूजी**
वि.सं. २०६२

|| श्री हरि: ||
|| श्री गोवर्धननाथो विजयते ||

नम्र निवेदन

प.भ. वैष्णव वृंद,

श्री आचार्यश्री के चरण चिन्ह का भावनात्मक वर्णन प.भ. श्री वल्लभजी कृत एवं प.भ. श्री मिलिन्दजी द्वारा संकलित ग्रंथ ''श्रीमद् वल्लभाचार्यजी के चरण चिन्ह की भाव भावना'' का न्यास पुनः मुद्रण कर रहा है । इससे यह ज्ञात होता है कि पू.पा.नि.ली.गो. १०८ श्री विठ्ठलेशरायजी महाराजश्री इन्दौर द्वारा स्थापित न्यास अपने लक्ष्य की ओर सतत् अग्रसर हो रहा है, क्योंकि वैष्णव न्यास द्वारा प्रकाशित ग्रंथों में विशेष रुचि ले रहे हैं साथ ही एकाग्रचित्त से अध्ययन कर स्वमार्ग के प्रति आकर्षित भी हो रहे हैं । इससे संतोष है ।

हमारा यह हमेशा प्रयास रहा है कि न्यास ऐसे ग्रंथों का पुनर्मुद्रण करें जिनकी उपलब्धि नगण्य है । अतः मैं आपसे अपील करता हूँ कि यदि आपके पास अथवा अपने परिचित या किसी संस्था में ऐसे ग्रंथ बिराज रहे हों तो आप कृपया मुझे जानकारी देवेंगे ताकि हम उनसे आग्रहपूर्वक निवेदन कर ग्रंथ को प्राप्त करें और फिर उसके प्रकाशन की व्यवस्था करेंगे ।

हमारे आजीवन सदस्यों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है और एक निर्धारित अन्तिम लक्ष्य में अब कुछ ही संख्या शेष है अतएव आपसे मेरा अनुरोध है कि आप शीघ्रता से न्यास के आजीवन सदस्य बनें और भेंट स्वरूप प्राप्त अनमोल ग्रंथ से लाभान्वित हो ।

मैं श्री राधेश्यामजी आचार्य को धन्यवाद देता हूँ कि आपने इस ग्रंथ का पुनः वाचन कर प्रथम संस्करण की त्रुटियों को दूर करने का प्रयास किया है ।

ज्येष्ठा पूनम
संवत् २०६२

श्री वल्लभ चरणानुरागी
दासानुदास
बालकिशन गब्बड़
का जय श्रीकृष्ण
सचिव
वैष्णव मित्र मंडल सार्वजनिक न्यास
इन्दौर

॥ श्री हरिः ॥
॥ श्रीगोवर्धननाथो विजयते ॥

पूज्य पाद गोस्वामी श्री १०८ श्री विट्ठलेशरायजी महाराजश्री
के

शुभाशीर्वचन

अत्यंत प्रसन्नता की बात है कि वैष्णव मित्र मंडल सार्वजनिक न्यास, सहयोगी संस्था अंतर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद शाखा ने श्रीवल्लभजीकृत श्रीमहाप्रभुजी के त्रितयात्मक स्वरूप के युगल चरण चिन्ह की भाव-भावना का प्रकाशन पुष्टि-सृष्टि के परम हितार्थ किया है। वैसे तो चरण चिन्हों की महिमा ज्योतिष शास्त्र में निरूपित की गई है, किन्तु भावात्मक रूप में विशद वर्णन् प्राप्त नहीं है। पुष्टि सम्प्रदाय की दृष्टि से श्रीवल्लभजी ने वाम चरण में आठ और दक्षिण चरण में सात इस प्रकार से १५ चिन्हों का ब्रज भाषा में वर्णन इस ग्रंथ में किया है जो निम्न दो दोहों में उल्लेखित है :-

कमल, वज्र, अरु गदा पताका-तोरण अति मन भावे ।
सुखदवल्ली, धनुष श्रीवल्लभ के दक्षिण चरण चित्त लावे ॥१॥

ध्वज, अंकुश अरु मीन, सुदर्शन, अष्ट दल अति सुख रूप ॥
कमल कुंभ जव श्रीमहाप्रभुजी के वामचरण में अनूप ॥२॥

श्रीनाथजी के दोनों चरण चिन्हों का वर्णन श्रीहरिरायजी महाप्रभुजी ने अपने 'चरण चिन्ह' नामक ग्रंथ में किया है। उन्होंने ९ चिन्ह दाहिने और ७ चिन्ह वाम (बायें) चरण में निरूपित किये हैं। अतः महाप्रभुजी के दोनों चरण चिन्हों की भाव-भावना का सदा स्मरण करना ही वैष्णवजनों का परम कर्त्तव्य है।

शुभकामना सहित

वैशाख शुक्ल तृतीया
वि.सं. २०५९

गो. विट्ठलेशराय

|| श्री कृष्णाय नमः ||
|| श्री गोवर्धननाथो विजयते ||

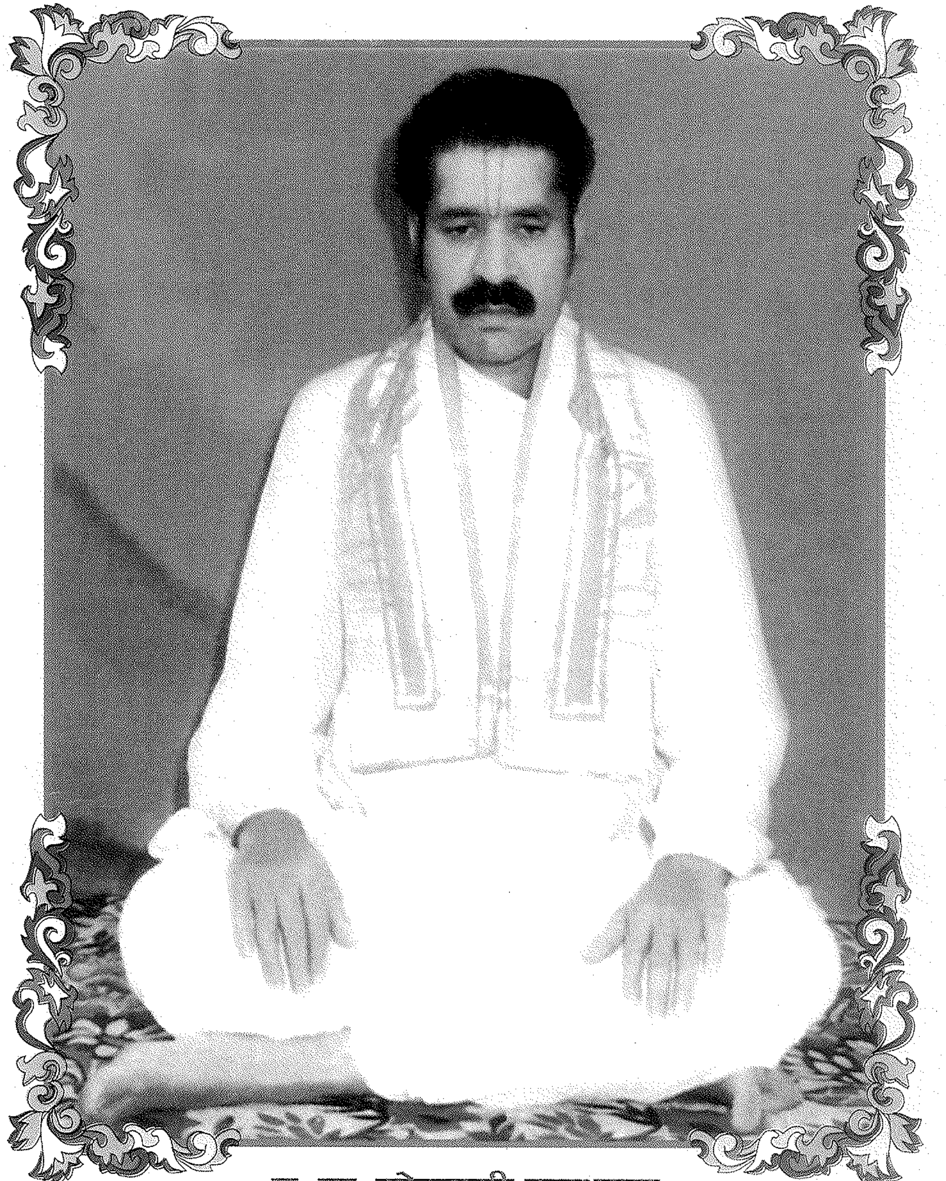

पू. पा. गोस्वामी कुलभूषण
श्री १०८ श्री विट्ठलेशरायजी महाराजश्री
प्राकट्य - श्रावण कृष्ण एकादशी वि. सं. २००५ ❁ नि.ली.गो.पू.पा. २०५९

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥
॥ श्री गोपीजन वल्लभाय नमः ॥
॥ श्री गोवर्धननाथो विजयते ॥

नम्र निवेदन -

वैष्णव मित्र मंडल सार्वजनिक न्यास के प्रकाशन में परम भगवदीय श्रीवल्लभजीकृत श्रीमहाप्रभुजी के चरण चिन्हों की भाव-भावना ग्रन्थ को प्रकाशित करने में अत्यंत ही प्रसन्नता प्रकट की है। यह अलभ्य ग्रंथ हमें संकलनकर्ता प.भ. श्रीवल्लभ पाद पद्म मिलिन्द के प्रयासों से प्राप्त हुआ है और उन्हें मधुवन की बैठक वाले महानुभाव श्री ताराचन्द्रजी बावा से प्राप्त हुआ। श्री मिलिन्दजी ने भी अपनी भावना को उनकी भावना से सम्मिलित कर लिया है। सम्पूर्ण ग्रंथ भाव-भावना से ओतप्रोत है।

ग्रंथ में श्रीमहाप्रभुजी के दोनों चरणों में १५ चिन्हों का वर्णन किया गया है। एक-एक चिन्ह का विश्लेषण ब्रजभाषा में किया गया है। प्रत्येक चिन्ह के भाव को उदाहरणों द्वारा निरूपित किया गया है। जगह-जगह पर श्रीमहाप्रभुजी के गुण रूप आदि को स्पष्ट करते हुए पदों का आधार लिया है। प्रत्येक चिन्ह के निरूपण के अंत में गुजराती भाषा का धोल दे दिया गया है जो चिन्ह की भावना को प्रतिपादित करता है।

आपश्री की आज्ञा से प्रकाशित यह ग्रंथ वैष्णव महानुभावों को लाभान्वित करेगा और पुष्टि सम्प्रदाय की भाव-भावना को समझने में सहायक सिद्ध होगा ।

मैं न्यास की ओर से प.भ. श्री मिलिन्दजी, ताराचंदजी (बावा) श्री आचार्यजी और मेरे सहयोगियों को धन्यवाद देता हूं।

वैशाख शुक्ल तृतीया
वि.सं. २०५९

बालकिशन गब्बड़
मंत्री, वै.मि.मं.सा. न्यास

॥श्रीमदाचार्यचरण कमलेभ्यो नमः॥

प्राक्कथन

निःसाधन 'प्रमेय' वरणीय अंतरंग भक्तों के लिये भगवद् प्राप्ति में भगवद् स्वरूप ही साधन रूप है, उनके अनिष्ट निवारण में, चरण चिन्ह कारण रूप है। जब अनिष्ट की निवृत्ति हो जाती है, तब उन भक्तों के सारे इन्द्रिय, अन्तःकरणादि आनंदमय हो जाते हैं। उन्हें भी अपने प्रियतम् के बिना एक-एक क्षण युग के समान बितता है। धर्मी संयोग में लीला सहित स्वरूपानुभव है और धर्मी विप्रयोग में केवल स्वरूप का ही अनुभव है।

संगम रस सम संगम नहीं, परि विरह जुं रस की रास।
जहां विरह प्रितम तहाँ, रहत निरंतर पास॥

जिसे प्रेम की एक बिन्दु मिल गई हो, वह व्यक्ति जगत के काम का नहीं रहता है, और न ही जगत उसके काम का है। जिसके हृदय में यह प्रेम प्रकट होता है, वे भक्त तो अपना जगत ही निराला बना लेते हैं। यह सर्वात्मभाव है। वे दूसरों को देखते ही नहीं, दूसरों को जानते नहीं, वे ही भूमा (सर्वात्मभाव) है। दिव्य प्रेम सर्वाज्ञात गूढ़ तत्व है, सो अनुभव वैद्य हैं।

दैवी जीव के भीतर आनंद अंश गुप्त है, उसके प्रकट होते ही अणु जीव में कोटि ब्रह्माण्ड प्रतीत होता है। सर्वात्मभाव प्राप्त होते ही ब्रह्मत्व को प्राप्त हो जाता है। परब्रह्म का समस्त विग्रह आत्मरूप है, इनके विग्रह में आत्मा के बिना कुछ है ही नहीं।

भगवान् पुष्टि पुरुषोत्तम 'रसौवैसः' रसरूप हैं, भक्त का जैसा

भाव हो, वैसा स्वरूप धारण कर, वैसा ही अनुभव करवाते हैं। इस मार्ग में भाव की ही प्राधान्यता है। जिस भाव से भक्त भगवान् का भजन करता है, उसी भाव से भगवान् भी भक्त का भजन करते हैं।

मनुष्य को तदीय जन का संग करना चाहिए, लेकिन इस काल में वे दुर्लभ हैं, इसलिए भक्तों को महाप्रभुजी की वाणी में निष्ठा रखके उसी का संग करना चाहिए–

रसिक युथ बहुना मिले, सिंह टोल नहीं होय।
विरह वेल जहां तहां नहीं, घट घट प्रेम न होय।

विरह की समस्त अवस्थाएँ स्वरूप आदि का सउदाहरण, सुन्दरवर्णन प्रस्तुत ग्रन्थ में किया है।

चरण चिन्हों के माध्यम से पुष्टि मार्ग की ओर प्रवृत्त होने वाले भक्तों के लिए मार्गदर्शन तथा पुष्टि सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। यह ग्रन्थ भी श्रीमदाचार्य चिन्तन के ग्रन्थ की तरह मननीय है।

स्वतंत्र, सबकी आत्मा रूप, सर्वान्तरयामी, सब के आधार, सबके आधेय, सबके भोक्ता, सबके दाता श्री वल्लभ ही हैं। दैन्य ही आपकी प्रसन्नता का साधन है, दीनता प्रभु के वियोग में हृदय में अनुभव से होती है। सेवा, स्मरण, गुणगान, स्वरूप, चिंतवन आदि जो भगवद् धर्म के आचरण रूप साधन किये जाते हैं, वे सब दैन्य भाव जाग्रत करने के लिए ही हैं।

श्रीकृष्ण, श्रीस्वामिनीजी, श्रीयमुनाजी तथा श्रीवल्लभ के स्वरूपात्मक विषयों तथा सिद्धान्तिक गूढ़ रहस्यों का प्रेम, लक्षणा, स्वतंत्र भक्ति के रूप में किया गया वर्णन, जिसमें अवगाहन करके ही आनन्द की प्राप्ति कर सकते हैं। पुष्टि मार्ग के अंतरंग तत्वों का मनन–चिन्तन करना हो तो धैर्यपूर्वक इस ग्रन्थ का अध्ययन कर लाभ उठा सकते हैं।

चरण चिन्ह की भाव–भावना ग्रंथ श्रीवल्लभजीकृत है जो महानुभाव श्रीताराचंद बावा (मधुबन की बैठक वाले) की कृपा से प्राप्त हुआ। संकलनकर्ता श्रीवल्लभ पाद पद्म श्रीमिलिन्दजी ने विस्तार देकर स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इन्होंने अपने विषय को कोष्टक में दिया था। चूंकि विषय के धारा प्रवाह के लिये अधिकतर कोष्टक हटा दिये गये हैं, जिसे संकलनकर्ता क्षमा करेंगे।

वैशाख शुक्ल तृतीया
वि.सं. २०५९

राधेश्याम आचार्य
एम.ए., एल–एल.बी., साहित्य रत्न
विद्यावाचस्पति सी.टी. (डेफ. डम)

वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास, इन्दौर
द्वारा प्रकाशित ग्रंथ

		न्यौछावर
१)	दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता तीन जन्म की भावना (तीन भागों में)	रु. २५५ = ००
२)	चौरासी वैष्णवन की वार्ता तीन जन्म की भावना	रु.१२५ = ००
३)	इकतालीस बड़े शिक्षापत्र	रु. ९० = ००
४)	निजवार्ता, घरूवार्ता एवं बैठक चरित्र	रु. ७५ = ००
५)	कीर्तन मणिरत्नमाला	रु. ७० = ००
६)	षोडश ग्रंथ (हिन्दी अनुवाद सहित) (मूल पदच्छेद अन्वयार्थ एवं भावार्थ)	रु. ३० = ००
७)	श्रीपुरुषोत्तम सहस्रनाम स्तोत्र (हिन्दी अर्थ सहित)	रु. ७ = ००
८)	इतना तो कीजिए	रु. ३ = ००
९)	नित्य स्तोत्र एवं पद संग्रह	रु. १० = ००
१०)	कीर्तन संग्रह (चार भागों में)	रु.४०० = ००
११)	गोपी गीत	रु. ३५ = ००

(डाक खर्च अतिरिक्त लगेगें)

१५०१ रुपये में आजीवन सदस्य बनकर प्रतिवर्ष वल्लभ जयंती पर एक ग्रंथ भेंट स्वरूप प्राप्त कीजिए ।

संपर्क – मुकुन्दभाई गोवर्धनभाई सोनी
वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास,
श्री गोवर्धननाथजी का मन्दिर,
१, साऊथ यशवंतगंज, इन्दौर (म.प्र.) ४५२ ००२

वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास, इन्दौर
द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों के प्राप्ति स्थलों की सूची

प.भ. श्री चन्द्रकान्त भाई शाह द्वारा दी बुक सिन्डीकेट
४-३-३७८/१, पुराना देवका महल बैंक स्ट्रीट, हैदराबाद - ५०० ०९५
फोन : ०४०-२५९५५९५१, २४६०७११४

प.भ. श्री मनमोहनजी बागड़ी द्वारा कॉमर्शियल इंटरप्राइज़ेस
३७/३९ इज़रा स्ट्रीट, दूसरा माला, कलकत्ता - ७०० ००१
फोन : ०३३-२६९५५९१ (नि) २१५३९१०, २३५२७७४
(९८३१०८९०६८)

श्री वल्लभाचार्य ट्रस्ट
मोरी हवेली, कंसारा बाजार, मांडवी (कच्छ) ३७०४६५

प.भ. श्रीमती शशीकला बेन बिहारीलाल खंडेलवाल
अपर गोविन्द नगर, मिलेनियम गार्डन फ्लेट नं. ६०१ मलाड (इस्ट)
फोन : ०२२-२८७७६७५९, २८७७४७४६

प.भ. श्री गोविन्ददासजी मोदानी
१३८, मुकर्जी मार्ग, ब्यावरा (राजगढ़) फोन : ०७३७४-२३२१२०

प.भ. श्री मनोहर भाई श्राफ
द्वारा श्री अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद्
१५ ई, शंकरबारी लेन, रघुवंशी हॉल, जे.एस.एस. रोड, चीरा बाजार
मुंबई-४०००२ फोन : २२०७८०९८, २२३७२०५८

प.भ. श्री नारायणदासजी राठी
नमकीन सेन्टर सीता बर्डी मेनरोड, नागपुर - ४४० ०१२
फोन : (०७१२) २५४५४८१, २५३७१५४ (आ.) २४२१६९८ (नि.)

प.भ. श्री सोनी मनसुखलाल मावजी भाई
द्वारा - श्रृंगार ज्वेलर्स सोनी बजार, राजकोट - ३६० ००१ फोन : २२५८२१९

अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् शाखा पिपरिया
नन्दालय सिमेन्ट रोड, पिपरिया - ४६१८५८५ फोन : २४६१७७५

प.भ. श्रीमती ज्योत्सना बेन प्रमोदकुमार सोनी
ए-१४७, डेरावाल नगर, जी.टी.कर्नाल रोड, गोला रेस्टोरेन्ट के सामने,
नई दिल्ली - ११० ००१ फोन : ०११-२७४५४१२७

प.भ. श्री गोपाललालजी कल्ला (एडवोकेट)
कल्लों की गली, फागली हाउस, जोधपुर - ३४२ ००१

प.भ. श्री गिरिराजशरणजी रस्तोगी
श्री गोवर्धननाथजी हवेली, सुभाष मार्ग लखनऊ, २४००१८

प.भ. श्री गिरधर गोपाल बापूलाल नीमा
१६७, पटनी बाजार, उज्जैन - ४५६००६ फोन : २५५४७०३

प.भ. श्री नन्दकिशोर ब्रिजमोहन गोयनका
द्वारा गोयनका बिल्डर्स बालाजी प्लाट्स खामगांव
फोन : २५४८१३ (नि.) २५२३८१, २५४३९४ (दु.)

पुष्टिमार्गीय श्रीकृष्ण पुस्तकालय
जीवागंज, मंदसौर - ४५८००२

प.भ. श्री राधाकृष्णजी अग्रवाल (काजूबाजू)
द्वारा मे. नवनीतदास मुकुन्ददास लखी चोतरा चौक, वाराणसी-२२१००१
फोन : (ऑ.)२४२०१३४, (नि.) २४००६३६

प.भ. श्री श्यामजीभाई पटेल
४०४, हरिओम अपार्टमेंट, रिषब टॉवर के सामने, राधेर रोड, सूरत-३९०००५
फोन : २७७८७२६

प.भ. श्री सुरेशकुमार कनुभाई सोनी
A/८, पंचतीर्थ अपार्टमेन्ट प्रभुकुन्ज कालोनी,
आवकार हाल रोड, मणीनगर, अहमदाबाद -३८० ००८
फोन : ०७९-५४६४९२०

प.भ. श्रीमती उर्मिला देवी दम्माणी द्वारा-अशोक कुमारजी दम्माणी
गोदापारा, खेतान गैरेज कॉम्प्लेक्स, रायपुर
फोन : ०७७१-२५३६२३६, २४२८०३४

श्री महाप्रभुजी की बैठक (मठ)
कर्नाटक, धर्मशाला के पीछे, मेढर मिट्ठा रोड, तिरुमाला - ५१७ ५०४
फोन : ०८५७४-२७७३१७

श्री महाप्रभुजी की बैठक
कार्यालय बैठकजी, चम्पारण फोन : २७८११, २७८२१, २७८४२

प.भ. श्रीमती साधनाबेन राठी
१०, मुरगप्पन स्ट्रीट, एलीफेन्टगेट, मद्रास -७९
फोन : ०४४-२५३६७८२८, २५३८१८१८

प.भ. श्री सोनी छोटु भाई जमनादास धोड़किया
"प्रमेयबड़" बड़चौक के पास, राजमार्ग, उपलेटा - ३६० ४९०
फोन : ०२८२६ - २२०३८६

प.भ. श्री कैलाश नारायणजी खंडेलवाल
जनकगंज अस्पताल के पास, जनकगंज लश्कर, ग्वालियर - ४७४ ००१
फोन : २३३११७८, २४२५०८३, २४२८१७८

प.भ. श्री मदनदासजी मोहता
रामपुरा, भेरुगली, कोटा - ३२४ ००६
फोन : २३८०८३८ (आ.) २३८०५८७ (घर)

प.भ. श्री गिरधरलालजी व्यास श्रीधर
श्री बांकेबिहारीजी का मंदिर, मंदिर पैलेस, जेसलमेर - ३४५ ००१

प.भ. श्री मथुरादासजी किशनदासजी पारिख
श्री विट्ठल मार्ग, खाराकुवा, उदयपुर (राजस्थान) ३१३ ००१
फोन : २५६११२४

प.भ. श्री श्यामदासजी राठी द्वारा श्री सुखलाल राठी प्रा. ट्रस्ट
धुलारावजी का घेर बापु बजार, जयपुर (राजस्थान)
फोन : २५७३०५० (आ.) २५६४३१८ (नि.)

श्री गोवर्धननाथजी की हवेली
घास मंडी रोड, खरगोन (म.प्र.)

प.भ. श्री उधोदास मूंधडा सेवा संस्थान
नाथुसर गेट के बाहर, मूंधडा की बगीची, बीकानेर (राजस्थान) ३३४ ००४

प.भ. श्री गोविन्ददास विठ्ठलदास नागर
टेरेस फ्लेट, गंगोत्री अर्पाटमेन्ट्स २५९, रास्ता पेठ, पुणे - ४११ ०११
फोन : ०२० - २६१३०४७५

प.भ. श्री हर्षदभाई चांगोला
द्वारा डी. कान्तिलाल एण्ड कुं. चिताखाना चौक, जुनागढ़ - ३६२ ००१
फोन : २६३१८४१ (नि.) २२७२९७ (गो.) २६५१२१८ (दु.)

प.भ. श्री शैलेषभाई द्वारा मे. जमनादास हरिदास
न्यू क्लाथ मार्केट, अहमदनगर - ४१४ ००१
फोन : ३४१८६०, ३४४४९१ (दु.) ३४१८६० (नि.)

प.भ. श्री जनकभाई शान्तिलाल शाह
५, गौरी पार्क सोसायटी, प्रभुली सो नं. १ के पास,
हरद्वार नगर के रोड पर हरणी रोड, बड़ोदरा - ३९० ०२२ फोन : २४८५६८०

प.भ. श्री बालकृष्णाजी अग्रवाल
द्वारा गर्ग ट्रेडर्स ५३/२७, नयागंज, कानपुर - २०८००१
फोन : (०५१२) २३१०५५५ (आ.) २३६४७२६ (नि.)

पुष्टि साहित्य विक्रय केन्द्र
नन्दन चौक, गोकुल - २८१३०३

प.भ. श्री लक्ष्मीनारायणजी धाकड़
श्रीवल्लभाश्रय सदन ग्रा. भौंरा, पो. बनेहा (जिला गुना) ४७३००१

वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास, इन्दौर

द्वारा

वल्लभीय प्रकाशन योजना में १५०१/- रू.

में आजीवन सदस्य बनकर प्रति वर्ष श्रीवल्लभ जयन्ति पर एक ग्रंथ भेंट स्वरूप प्राप्त कीजिए। शीघ्र ही सदस्यता शुल्क भेजिए।

श्री गोवर्धननाथ मन्दिर

१, साऊथ यशवंतगंज, इन्दौर (म.प्र.) पिन कोड : ४५२ ००२

युगल-स्वरूप के भावनात्मक दर्शन

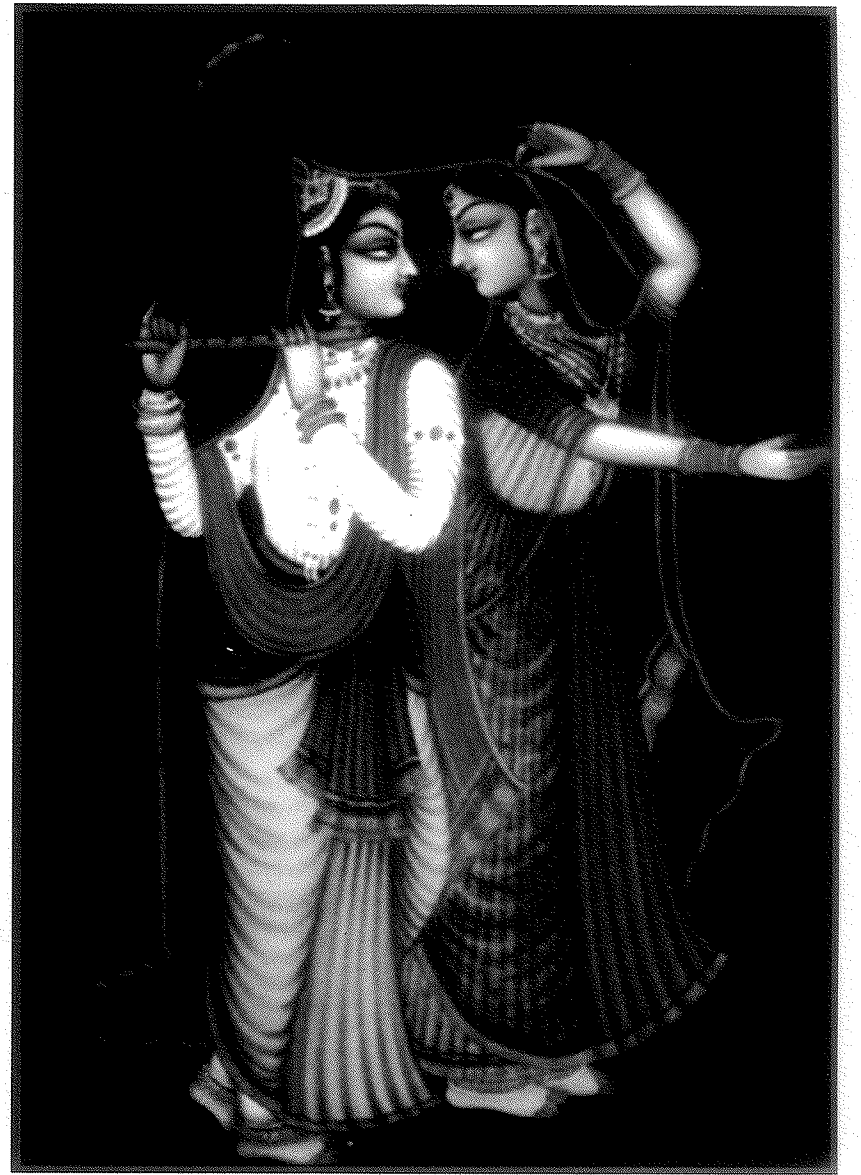

अनुक्रमणिका

कमल १

वज्र १४

गदा २९

पताका ३३

तोरण ३८

सुखदवल्ली ५३

धनुष चिन्ह ६२

ध्वज ७१

अंकुश ८०

मीन १०२

सुदर्शन १२५

अष्टदल १३३

कमल १६१

कुंभ १९१

यव २१७

॥ श्रीमदाचार्य चरण कमल रेणुभ्यो नमः ॥

त्रितयात्मक कृष्णस्य स्वरूप श्री महाप्रभुजी के युगल चरण चिन्ह को वर्णन ।

(प.भ. श्रीवल्लभजी कृत)

त्रिविधस्वरूपको ध्यान सदा हृदय में जे करें
गर्भ वास कबहूना आवे अरु विषय वासना टरे ॥

चरण चिन्ह को दोहा

कमल, वज्र, अरु, गदा, पताका - तोरण अति मनभावे,
सुखदवल्ली धनुष श्रीवल्लभ के दक्षिण चरण चित्त लाये ॥१॥
ध्वज, अंकुश, अरुमीन, सुदर्शन, अष्टदल, अति सुखरूप,
कमल कुंभ जव श्रीमहाप्रभुजी के वाम चरण में अनूप ॥२॥

दक्षिण चरण चिन्ह - ७

कमल, वज्र, गदा, पताका,
तोरण, सुखदवल्ली, धनुष ।

वामचरण चिन्ह - ८

ध्वज, अंकुश, मीन, सुदर्शन,
अष्टदल, कमल, कुंभ, जव ।

श्री महाप्रभु श्रीमद् वल्लभाचार्यचरण

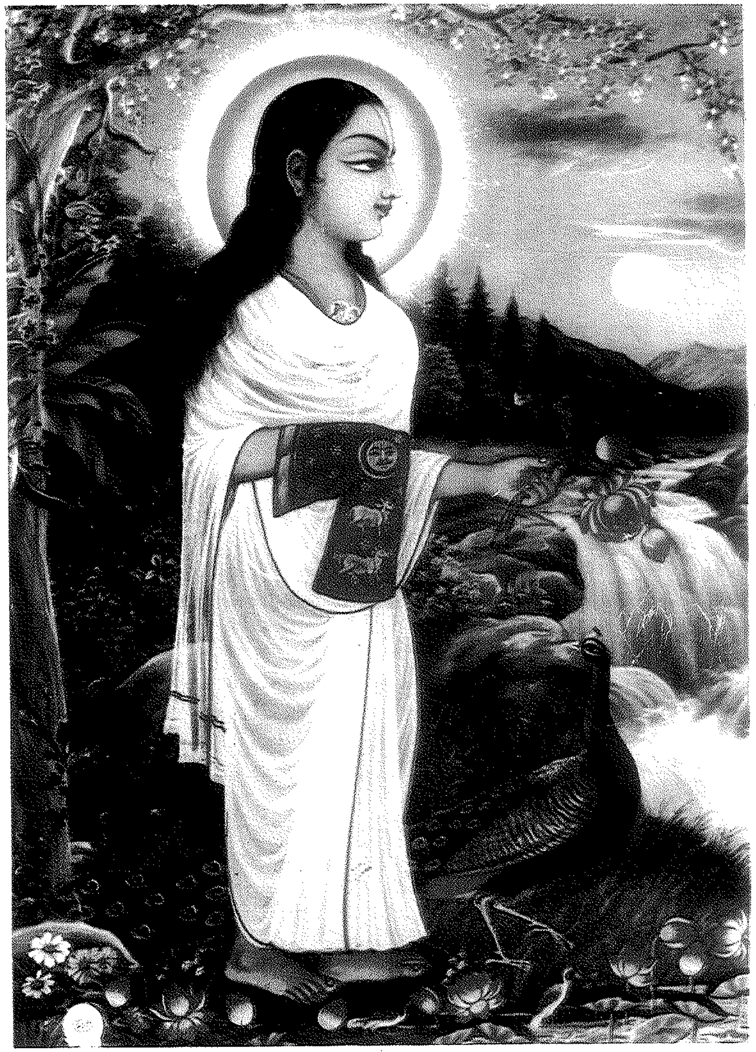

कमल

दक्षिण चरणमें प्रथम चिन्ह कमल को है ताको भाव कहत हैं,

जैसे भगवान् आदि नारायणकी नाभीमें सू कमल प्रकट भयो, यह कमल में सूब्रह्मा प्रगट भये । यह ब्रह्माने सृष्टि प्रगट कीनी । तैसे रसात्मक, आधिदैविक, नित्य लीलाधाम संबंधी सृष्टि, प्रियाप्रीतम श्रीयमुनाजी, श्रीगिरिराजजी कुंज-निकुंज, पशु पक्षी वृन्दावन तथा कोटानकोटि व्रजभक्तन के युथ यह आपके चरणचिन्ह कमल में ते प्रगट भये हैं ।

चौर्यासी कोस व्रज तथा वृन्दावन के विहाररस समुहात्मक यह कमल चिन्ह है, अथवा यह कमल चिन्हमें सू संपूर्ण नित्य लीला धाम संबंधी विहार रस प्रकट होय है, फेरी यह संपूर्ण विहार रस सों परिपूर्ण यह कमल चिन्ह है, जैसे बीजमें सू वृक्ष प्रगट होवे हैं । यह वृक्षमें अनेक शाखा-पत्र-पुष्प-फल को विस्तार होय है । सो विस्तृत वृक्ष बीजकें भीतर प्रगट भये पहेले अव्यक्त रूपते रह्यो भयो है । तैसे कमल चिन्हमें सू शृंगार कल्पद्रुम गोलोक धामकी सकल सृष्टि प्रगट होय है। फेरी यह बहार प्रगट भयो सम्पूर्ण विहार शृंगार कल्पद्रुम रूपे यह कमल चिन्ह में अव्यक्तपने रह्यो भयो है । और कमल के भीतर जैसे अनेक पराग है तैसे आपके कमल चिन्ह में अनंत पराग है । सो प्रत्येक परागमें सू शृंगार

कल्पद्रुम प्रगट होय है । जाकी अचिन्त्य और अनंत शक्ति है । और जाके रोमरोम प्रति कोटिशः ब्रह्मांड प्रगट होय है। तिनके चरण-कमलके परागमें सू शृंगार कल्पद्रुम प्रगट होनो कोई असंभावित बात नहीं है । जाको वर्णन (श्रीगोकुलेशजी) ने सर्वोत्तमजीकी वृहद टीकामें दुर्लभांधिसरोरुह नाम में कियो है । ताते युगल प्रिया-प्रीतम ने हू या चरणकमल को आश्रय कियो है । सो आपके चरणकमल के तलवा श्री स्वामिनीजी के अधर के भावते आरक्त हैं । और श्रीठाकुरजी के भाव ते चरण को उपरी भाग श्याम विराजमान है । तातें युगल आपके चरण-कमलको आश्रित है तामें समस्त लीला परिकर हू आय गयो सो श्रीपद्मनाभदासजीने पदमें कह्यो है :- पद्मनाभदास चरण रुहरागमें परम सौभाग्य अलंकृत दमला प्रभुदास उभय मधुकर मधुपान-अभय-अदेय दियेदान [कोटिमें विरल श्री पद्मनाभदास परमहंस हैं परात्पर परम तत्वको ग्रहण करतो यह परमहंसत्वपने सू श्रीवल्लभ चरण सरोवरमें ही रहे हैं। जैसे राजहंस मानसरोवर में ही रहे हैं और मुक्ता को ही चुगे है । यह दुग्ध तथा जलकू पृथक करके दूध ही को पान करे है । पद्मनाभदासजी श्रीवल्लभचरण सरोवर के हंस होयवे सु श्रीवल्लभ के (सुधा) स्वरूप के चरण कमल मकरंद रूह राग को भोग करवे वारे है यह मकरंद अदेय है । अवधि रहित परम सौभाग्यरूप है। ताते अति अंतरंग पतिव्रत भाव स्वकियजन को ही यह मकरंद भोग को सौभाग्य प्राप्त हैं]

अब आगे कहत है, आपके यह चरणकमल को ध्यान

अहर्निश करवे सू भक्तजनको हृदय अत्यंत शुद्ध होय जाय है (शुद्ध कहेवे ते मधुराकृति श्री वल्लभ के स्वरूपारिक्त अन्य संबंध की गंध रहित जाननो) तब आपके दुर्लभ चरण वे भक्तनके हृदयमें आप बिराजे हैं और भक्ति रस मकरंद प्रगट करे है । ताको पान करवे कू श्रीठाकुरजी मधुप रूप होय के भक्तनके हृदयमें आय बिराजे हैं, कारण के श्रीठाकुरजी यह निर्गुण भक्तिरस (मकरंदपान) में आसक्त हैं। यह पान करवे को सहज स्वभाव है । ताते आप स्वतः भक्त हृदयमें विरुद्ध (वशीभूत) होय जाय हैं । भक्तन कू कछू प्रयास नाही करनो पडे है । जब यह चरणकमल ही भक्तनके हृदयमें बिराजमान भये तबवे भक्तनको हृदय कोटि अमृत समुद्रतुल्य भयो तामें ते अनेक विध मधुर रसात्मक भावके उत्तरोत्तर तरंगरूप मनोरथ प्रकट होय है । ताको अनुभव करके आगे वे भक्त अलौकिक सामर्थ्य कू प्राप्त हो जाय है । (अलौकिक सामर्थ्य सर्वात्मभावरूप है) सर्वात्मभावको भक्तनकी प्रत्येक रोम आत्मारूप है । और आत्मा व्यापक है तथा सागरवत है । व्यापक और सागर यह दो विशेषणों से आत्मतत्व की महान विशालता और गहनता को निरूपण भयो। यहां पर जो आत्मतत्व की व्यापकता को कथन है सो निराकार अभिष्ट नहीं है । परन्तु साकार व्यापकता समजनो । जाको प्रमाण सर्वोत्तमजीकी वृहद टीकामें साकार ब्रह्मवादैकः तथा वेद पारगः नामते प्राप्त होयगो ।

अब **रसोवैसः** परब्रह्म स्वरूप श्रीमहाप्रभुजी. जो अति सूक्ष्म रसात्मक अनंत ब्रह्मांडो में व्यापक और शृंगाररस के

अनंत वृद्धि युक्त हैं । श्रीवल्लभ के चरण कमल जो भक्त के हृदयमें बिराजमान है वे भक्त श्रीमहाप्रभुजीमें तद्रुप होवे सू श्री वल्लभकी समानता कू प्राप्त हो जाय है। तब वे भक्तनमें हू व्यापकत्व धर्म प्रकट होय है और ताकी रोम रोम हू रसात्मक ब्रह्मांडरूप हो जाय है ।

तातें (नि-शा-पज-में) कह्यो है - श्लोक

आनंदी शोभिव्यक्तौतु तत्र ब्रह्मांडो कोट्यः।
प्रति रछेंदो व्यापकत्व य तस्य येरेनपरिच्यतत॥

दैवी जीवात्मा के भीतर आनंद अंश गुप्त है। सो प्रगट होते ही अणु जीव में कोटी ब्रह्मांड प्रतीत होत है। परीच्छेदता जीव भावकी स्थिति में रहे है। सर्वात्मभाव प्राप्त होते ही ब्रह्मत्व को प्राप्त होय है। तब व्यापकता कू प्रगट होय है। या समय वे भक्त पने में सू भावात्मक कोटि स्वरूप प्रगट करके ताके साथ भावानंद रसानंद को अनुभव करे है। सर्वात्मभावी भक्तोंमें भावन को आधिपत्य है। भक्तनको भोग मुख्य है। और भगवान को भोग गौणरूप से है। अर्थात् भक्त भोक्ता है और भगवान भोग्य है। लीला प्रपंच प्रकट करवे को सामर्थ्य भगवानने भक्तन कू दे दियो है और भक्तनकी इच्छानुकूल लीलारस को आप अनुभव करे हैं ।

जाको प्रमाण श्री हरिरायचरणोक्त बहीरंग लीला प्रपंच अंतरंग, लीला प्रपंच नामके ग्रंथ में सू प्राप्त होयगो तासू प्रभू जैसे अचिंत्य अनंत शक्तियुक्त और निरवधि आनंद वारे है, तैसे आपश्री वल्लभ के तादृशीजन होय जाय है, ताको निरूपण श्री गोकुलेश प्रभुने सर्वोत्तमजी की वृहद टीकामें पतिव्रता पतिः नाम ते कियो है। ‘‘स्त्री गूढभावो पुष्टिमार्ग तत्व’’ यह स्त्री गूढ भाव स्वरूप स्त्री भावात्मक भगवान हैं। परमानंद स्वरूप हैं, ये ही पुष्टिमार्गमें परमतत्व है और स्त्री भावात्मक भगवान को स्वरूप श्रीवल्लभ के तादृश भक्त स्वयं होय जाय है । जाको वर्णन तामस प्रमेय प्रकरण वेणुगीत ‘‘बर्हापीड’’ श्लोक में कियो हैं । अर्थात् ‘‘श्रुति आत्मान व्देधा पातयत पतिश्रम पत्नि आभवत मिति प्रमाणं।’’ श्रुतिभ्योनेहु परब्रह्म को अचिंत्य अनंत शक्तियुक्त महिमा दिखायो है। परब्रह्म श्री लक्ष्मणसुत की एक एक रोम आकाश सम व्यापक है। यह व्यापक एक रोम रूप आकाश में अनंत ब्रह्मांड विचरण करे हैं। जाको महिमा को अंत स्वयं भगवान हू नहीं कर सके। सो सब रसात्मक महिमा सर्वात्मभावी भक्तों में रह्यो है। अनंत रस समुद्र रूप और अनंत रसात्मक ब्रह्मांड की रससंपत्ति स्त्री भावात्मक भगवत स्वरूप श्रीस्वामिनीजीमें रही भई है। तातें सर्वात्मभावी भक्त को महिमा अगाध है। जब तो तामस फलप्रकरणमें ‘‘नपास्येऽहं निरवध्य संयुजाम्।’’ यंह श्लोकमें स्वयं भगवान सर्वात्मभावी भक्तों की स्तुति करे हैं और श्रीमुखते कहत हैं मैं तुम्हारा ऋणी हूँ, तुम्हारे निरवधि भाव संयुक्त भजन को बदलो में नहीं दे सकूं हूं। सो काहे ते १ जो सर्वात्मभावी भक्त प्रतिक्षण कोटा न कोटि स्वरूप प्रकट करे हैं। अपने प्रियतम प्रभु कू निरवधि रसानुभव करावे है। ऐसो अलौकिक सामर्थ्य प्राप्त होयवे सू भगवान यह भक्तनके भजन को बदलो दे सके ऐसे नहीं है। या तो फिर यह धर्म

ऐश्वर्यवान भगवान जो न कर सके ऐसो कार्य करवे को सामर्थ्य स्त्री भावात्मक भगवान स्वरूप श्रीस्वामिनीजी कूं प्राप्त है। भगवान नहीं कर सके ऐसो कार्य कहा ? पुरुष में सू दूसरो पुरुष प्रकट नहीं होय सके है सो कार्य में भगवान अशक्य है। अथवा भगवान स्वयं दूसरो भगवान प्रकट करे तो भगवतपनो ही नहीं रहे। अनंतरूप होते हुए भी एक ही रूप है। और एक ही अनंत रूप होय है। एक को अनंत रूपसो प्रागट्य श्री स्वामिनीओं में सू होय है। क्योंकि अंतरंग लीला प्रपंच भक्ताधिन है। तातें दूसरो अपने समान पुरुष प्रकट करवे में भगवान स्वयं अशक्य है। और श्रीस्वामिनीजी प्रभुन के कोटान कोटि स्वरूप प्रकट करे तेसे सामर्थ्य कू प्राप्त है। सो अनंत रूप सो अनंत प्रकारसो अनंत रसानुभव प्रभुन को करावे हैं। ताको बदलो भगवान कैसे दे सकें...?

याते भगवान ने (भा-११-१६-३९में) कह्यो है, हे उद्धव क्षण क्षण में प्रकट होयवे वारे कोटि ब्रह्मांडरूप विभुति ताको अन्तःमें हू नाही कर सकूं हूँ तो और की कहा सामर्थ्य? यह कोटि रसात्मक ब्रह्मांडरूप विभुति स्त्री भावात्मक भगवतस्वरूप श्रीस्वामिनीजीओमें सू प्रकट होय है। भगवान तो ऐश्वर्यरहित परतंत्र होय के श्रीस्वामिनीजी के हृदय संपुट में बिराजे हैं। तातें यह भक्तन को महिमा अनंत रहित है। गायत्री भाष्यमें हू कह्यो है के मे भक्त में सू रसात्मक भक्त को प्रसव होय है ताको स्वरूप अगाध है। और तामस साधन प्रकरण श्री सुबोधिनीजी में पंचधा विद्या के निरूपण में कह्यो है कि सब सू भक्त अधिक है।

यह प्रमाणातिरिक्त प्रमेय स्वतंत्र भक्तिमार्गमें श्रीस्वामिनीजीओं की ही मुख्यता है। यह सर्वात्मभावको वर्णन व्यास सूत्रभाष्य तृतीय अध्याय के लींग भुष्त्वाधिकरण में कियो है । वहां सर्वात्मभावकी महिमा दिखायो हैं । श्रीवल्लभ के स्वकियेन में यह सर्वात्मरूप अलौकिक सामर्थ्य प्राप्त हो जायवे की वजह सू अचिंत्य सामर्थ्यवान अगणित आनंदस्वरूप श्री के संग रमण विलास करे है। सो मनोरथांत फल कू प्राप्त होय है। तातें ऐसे भक्तन को हृदय है सो व्रज तुल्य है। (व्रज कहेवे ते रसात्मक प्रभु की रमण राजधानी लीलाधाम जाननो) ता सुं श्रीवल्लभ कू ऐसा भक्त अतिप्रिय है। अब आगे कहत हैं यह मनोरथांत फल कैसे प्राप्त होय...? चरण सब मांज श्री वल्लभाधिश के रैंन अरू दिवस निज शिरसे धरीए, पुरुषार्थ की अवधि रूप सकल फल दायक आपके युगल चरणकमल हृदय स्थित होयवे सू ताप भाव प्रकट होयगो। तासुं श्रीमहाप्रभुजी सम्यक प्रकार महाफल दान करेंगे। और एक कालावाच्छिन्न समग्र लीला सुख को अनुभव होयगो। (श्रीवल्लभ के स्वरूप तापात्मक हैं) तापात्मक कहेवे सू लौकिक अग्नि जैसे स्पर्श सू जलावे है - क्लेश करावे है तैसो आपको तापात्मक स्वरूप नहीं है, परंतु महा अलौकिक मधुर अग्नि स्वरूप है। यह तापात्मक स्वरूप के दान ते ही अगणितानंद को अनुभव होय है। सो स्वकीय जन में यह महामधुर अग्नि तापात्मक स्वरूप प्रकट होय जायवे सू कोटि प्रेम रस समुद्र के धारण करवे को सामर्थ्य प्राप्त करे है। अनंत लीला विहार समुद्र के मुल कारणरूप तो यह तापात्मक

स्वरूप ही हैं। यह स्वरूपको दान ताकू ही महाफल कह्यो है। निरवधि आनंद को अनुभव तापात्मक स्वरूप दान बिना नहीं होय सके है। जैसे अग्नि में आहूति देवे ते अग्नि बढती ही जाय है। तैसे वैश्वानर अग्नि अनंत प्रेमरस समुद्र को पान करते हुए भी अतृप्त ही रहत है। यह अग्नि महामधुर सुधा स्वरूप है। तातें श्री मत्प्रभुचरणने सर्वोत्तममें वैश्वानर और वल्लभाब्द नाम प्रकट कियो है, ताको आशय वैश्वानर नाम वारी अग्नि महामधुर सुधा स्वरूप है। यह तापात्मक स्वरूप को दान क्वचित विरल भगवदीयन कू प्राप्त है, सर्व कू नहीं। ऐसे अधिकारी जनके लिये पुष्टि प्रवाह मर्यादा ग्रंथ में शुद्ध प्रेमणांति दुर्लभा कह्यो है।

आगे कहत हैं जब श्रीठाकुरजी प्रियाजी के विरह में बिराजे हैं ता समय यह कमल चिन्ह सहस्त्र दान को होय है। ताकी प्रत्येक पाखड़ी में प्रियाजी के स्वरूप को चित्रण करे हैं। और नेत्रनते अश्रुकी धारा बहत है या समय को विरह भावात्मक कमलचिन्ह श्री वल्लभप्रभुने धारण कियो है। याको आशय ये भयो कि वल्लभ प्रिया-प्रीतम के तापात्मक भाव के भोक्ता हैं। क्योंकि कमल चिन्ह में रसात्मक-तापात्मक भाव की मकरंदता है। और यह कमल चिन्ह अनेक प्रकार के भाव सों परिपूर्ण है ताको वर्णन अल्पमति में कितनो आय सके? और कितनो धारण कर सके। ताते बडेनने सूक्ष्म निर्देश कियो है। यह कमल चिन्ह दक्षिण चरण को है। सो यहां भक्त सरस, कोमल, दैन्य और भावयुक्त हो और नेत्रमें धारण करवे योग्य है। क्योंकि

जैसे कमल जलमें ही रहत है, जलमें सू ही प्रकट होय है, जल बिना कमल को प्रकट होनो कहूं देख्यो नहीं है। तैसे भक्तिरूपी जल जाके नेत्रमें सरोवर भर्यो रहत है, तामें ही यह दुर्लभ चरण-कमल प्रकट होय है। आगे कहत है जो यह कमल चिन्ह कैसो है? त्रिलोकी के स्वामी को मन मोहित करवेवारो है। त्रिलोकी कहेवे ते राजस - तामस-सात्विक भाववती श्रीस्वामिनीजीन ने श्रीस्वामिनीजी को श्रीठाकुरजी के वियोगसमे जो ताप उत्पन्न होय है ताको निवारण करी के पुष्टिरस सस्वरूपानंद की प्राप्ति करावे है। क्योंकि यह कमलचिन्ह में पुष्टि भावरूपी मकरंदता है। जो केवल स्वतंत्र भक्तिमें प्रतिबंधरूप दुखद्वंद को नाश करे है। और स्वरूपानंद रूप शीतलता को अनुभव करावे हैं। और मनमथ के मनमथ अनंत कोटि लावण्या स्वरूप को भाव प्रकट करे है। आपके दक्षिण चरणमें धर्मी संयोग को विलास है और संयोगानुभव में अमृत बीज कारणरूप है। तातें पद कमल चिन्ह अमृतबीज रूप पराग से भर्यो होयवे सू संयोगानंद में स्वरूपानंद को अनुभव करावे है। और हू आगे कहत हैं जो यह पुष्टिमार्ग के मूल विधाता श्री यमुनाजी हैं और श्रीयमुनाजी आप श्री वल्लभ के चरण चिन्ह कमल श्रीहस्त में सदा धारण करत है। जासू अपने आश्रित भक्तन कू पुष्टि रस भावको दान करत हैं सो सारस्वत कल्पमें जो कुमारिकाजी को यह भाव दान भयो। और रसमूलधाम में हू भक्तोन कू नवीन तनु भाव को दान करत हैं। क्योंकि मूल धामस्थ भक्तों में प्रतिक्षण तारूण्यता।

नौतन रूप से प्रकट होय है या प्रकारके भाव को दान को सामर्थ्य श्री यमुनाजीमें है। सो श्रीवल्लभ प्रभु के चरण चिन्ह कमल अपने श्रीहस्त में धारण करत हैं। ताते श्री यमुनाजी यह कमल सदा श्रीहस्त में धारण करी रहत है यह कमल चिन्ह निर्गुण भाव ते पूर्ण है और निर्गुण भाव श्रीप्रभुजी समान ऐश्वर्यवान है। तातें श्रीयमुनाजी हू निर्गुण है और प्रभुजी समान षटगुण धर्म ऐश्वर्यवान है और श्रीयमुनाजी निर्गुण भक्तिरस को अनुभव सदैव करत है।

पुष्टिदश विध भक्ति में दशमी निर्गुण भक्ति है। यह भक्ति स्वतंत्र है। यह स्वतंत्र भक्ति हू द्विधा है। एक धर्मी संयोगात्मक, द्वितीय धर्मी विप्रयोगात्मक, तातें धर्मी संयोगात्मक स्वतंत्र भक्तिरस को अनुभव श्रीयमुनाजी को है। जामे युगलवत प्रभुन की समस्त लीला सुखानुभव होय है। तातें श्री यमुनाजी श्री प्रभुजी सू वेष्टीत सदा संयोगी हैं। दूसरे श्री स्वामिनीजीओं को जैसे संयोग रसानुभव तदनुसार वियोग को अनुभव करनो पडे है, तैसे श्री यमुनाजीको नाही है। और श्रीयमुनाजीमें अलौकिक सामर्थ्य है। ऐश्वर्य, वीर्य, श्री, यश, ज्ञान, वैराग्य भगवान् के यह छः धर्म श्री यमुनाजीमें है तासू भगवान समान अलौकिक सामर्थ्य वारे हैं। अथवा संयोगात्मक सर्वलीला सृष्टिमें श्री यमुनाजी व्यापक रूप से बिराजमान हैं। और श्रीयमुनाजी द्रवीभूत संयोगात्मक (दान, मान, पान, इत्यादिक लीलारूप सुधा सागर की अधिष्ठात्री) हैं। यह सामर्थ्य श्रीवल्लभप्रभु के चरण चिन्ह कमल के धारण करवे ते प्राप्त भयो है।

श्रीयमुनाजी भौतिक सूर्यनारायणकी पुत्री नांही है, परंतु भक्तिमार्गाब्ज मार्तंड श्रीवल्लभानुं की पुत्री हैं।

शंका :- आप श्री वल्लभ के चरण चिन्ह कमल को ऐसो अतुलित महिमा है सो कैसे जान्यो जाय ? तहां कहत हैं जो कमल में लक्ष्मी को निवास है तातें लक्ष्मी को कमलजा ऐसो नाम है

अब यहाँ श्री वल्लभचरण चिन्ह कमलमें अनंत लक्ष्मीया आधिदैविक स्वरूप ते निवास करत है। तातें कह्यो कि लक्ष्मी सहस्त्र लीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम... यह मंगला चरणोक्त सहस्त्र पद ते अनंत आधिदैविक लक्ष्मीयां श्रीवल्लभ के चरणचिन्ह कमल में निवास करे है। जैसे श्री वल्लभ को हृदय लीलाक्षीराब्धि है तैसे आपके श्री विग्रह के प्रत्येक रोम हू लीलाक्षीराब्धि है। जैसे जीव के हाथ, पाव, हृदय, मस्तक अलग अलग अंग है तैसे विरुद्ध धर्माश्रयी परब्रह्म के लिये नांही है परंतु परब्रह्मको तो प्रत्येक रोम हू परब्रह्म के समान साकार स्वरूपभूत है। याको प्रमाण गीताजी में सर्वत्र पाणी पादान्त सू जाननो। तातें कमल चिन्ह हू साकार व्यापक रसात्मक ब्रह्मांडरूप कमल चिन्ह में आधिदैविक अनंत लक्ष्मी सदैव निवास करती है, जैसे भगवान आदिनारायणकी नाभि में सू कमल प्रकट भयो सो कमल चौदहलोक एक ब्रह्मांडरूप है। और यह चौद लोकमें अनेक देव-दानव-मनुष्य आदि विचित्र सृष्टि रही भई है। तैसे ही श्रीमहाप्रभुजी के चरण चिन्ह कमल हू रसात्मक ब्रह्मांडरूप है। श्रुति हू कहत है कि यथाभूवनात्मक कमल -वाते यह कमल चिन्ह में अविर्चनीय

आधिदैविक लीलासृष्टि परिकर स्थित है। आयौ यूथेश्वरी सहित अनंत लक्ष्मी निवास करे है। याको ज्ञापक नाम श्री सर्वोत्तमजीमें सर्वशक्तिधृक बिराज रहे हैं। यातें कमलचिन्ह को ऐसो अद्भुत अतुलित महिमा जाननो।

आगे कहत हैं जैसे लक्ष्मी चरणको आश्रय छोड़ी कबहू कहां जात नहीं तैसे आधिदैविक लक्ष्मी (लीलाधामस्थ) श्रीवल्लभ चरणकमलको आश्रय करके ही रहे हैं तैसे श्री ठाकुरजी हू भ्रमररूप होय के यह कमल के मधुर मकरंद में लोभायमान होय सदा परवस पने वहां ही स्थिती करी के रहत है।

और अष्टसिद्धि को दान श्री यमुनाजी अपने आश्रित भक्तों को करत सो आप श्रीवल्लभके चरण चिन्ह कमल हृदयमें धारण करके ही करे है। सो जापे श्रीयमुनाजी कृपा करे ताकू श्रीवल्लभ प्राप्त होवे। और श्रीवल्लभ जापे कृपा करे ताकू उभय रस-संयोगानंद-विप्रयोगानंद को दान श्रीयमुनाजी कृपा करके करे। ताकू श्रीवल्लभ प्राप्त होय सो कैसे? तहां कहत है तामस प्रमेय प्रकरण वेणुगीत में सर्वभोग्या द्रवीभूत सुधा के प्रवेश ते श्रीगोपीजन कू स्वतंत्र भक्तिरसको जो धर्मी विप्रयोगात्मक अमृतसुधा स्वरूप है ताकी प्राप्ति भई। यह धर्मी विप्रयोगात्मक अमृत घनीभूत सुधा स्वरूप ही श्री महाप्रभुजी को मूल स्वरूप है। और श्रीयमुनाजी द्रविभूत सुधा स्वरूप है। तातें द्रवीभूत सुधास्वरूप श्री यमुनाजी 'द्वारा' श्रीवल्लभ को घनीभूत सुधास्वरूप प्राप्त भयो। यासू श्री यमुनाजी की कृपा ते श्री वल्लभ की प्राप्ति कही है।

कमल चिन्ह को धोल

विधना पुष्टिमारगना मूल, ते श्री यमुनाजी हस्ते कमल नुकुल ॥
प्रथम पद्म नुं चिन्ह ये जेवुं, त्रण लोक मन मोहे तेवुं ॥
त्रिविध ताप निवारण जोग, पुष्टिरस नो देवा संयोग ॥
ए पद कमल ना गुण मुख केशे, तेने पुष्टिफल श्रीयमुनाजी देशे ॥
जेम सहु कमल मांहे मकरंद, मोहक रूप ने सुगंधे आनंद ॥
भक्त हृदये उपजावे प्रीत, दैन्य रस प्रगटावे यह रीत ॥
सर्वात्म भावनी सिद्धि ते थाय, जे आ चरण कमल उरलाय ॥
वल्लभ चरण सरोज उर लीधा, अष्ट सिद्धि दान श्री यमुनाजी ए दीधां॥
श्रीवल्लभ पदनुं अंबुज धारे, पुष्टि अनुभव थाशे त्यारे ॥
श्रीवल्लभ पदनो आश्रय जानो, दशो मर्मनुं मूल ए मानो ॥
आश्रय ये चरण नो भारी, द्रढ़ करी लीधा व्रजनी नारी ॥
तेथी फल दीधा श्रीगोकुल भूप, अंबुज चिन्ह ये अगाध स्वरूप॥

...यहां कमल चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

वज्र

दक्षिण चरण में दूसरो चिन्ह वज्र को है, ताको भाव कहत हैं -

दैवी जीव के सकल पापादिक एकादश इंद्रीयन के दोषरूप, शैल कू छेदन करवे में यह वज्र चिन्ह समर्थ है। या दूसरो भाव शैल कहवे सू उभय-सरोज तामें विप्रयोग दशामें काम की पीड़ा को दुःख होय है। ताकू भी छेदन करवे में वज्र चिन्ह समर्थ है। भक्तों की काम व्याधि कू दूर करिके श्री प्रभु को संगम करायके रस सो पूर्ण करत है। सो वज्र स्वरूप ते हीरानके जैसे प्रकाशित हे रह्यो है। जैसे सकल इन्द्रीयनके आध्यात्मिक देवता है। तैसे प्रिया-प्रीतम (युगल) के तथा समस्त लीला परिकर की सकल इन्द्रीयन ये देवता कृष्णास्य श्रीवल्लभप्रभुजी हैं। तासू मान समय वियोग को हरण करी युगल के सकल मनोरथ पूरण करत हैं। (यहां युगल एक वचन है) तातें एक ही युगल नहीं जाननो। परंतु लीलाधाम में तो श्री स्वामिनीजी भाववत अनंत भक्तो है। और प्रत्येक भक्तनकी कूंज न्यारी न्यारी है। और प्रत्येक भक्तनके पास में तिनके भावात्मक श्री ठाकुरजी को स्वरूप बिराजे हैं ।

ताको प्रमाण[1] या प्रकार जितने व्रजभक्त हते, तितने स्वरूप धारण करके महारास में स्वरूपानंद दान कियो यह भक्तनको नित्य लीलामें ही प्रवेश भयो है। तातें प्रत्येक भक्तनके कुंज में प्रत्येक भक्तनके भावात्मक स्वरूप न्यारी न्यारी कुंज में बिराज रहे हैं। तातें युगल हु अनंत भये अथवा जैसे भूतलमें श्रीवल्लभ कुल के घरमें (और वैष्णव सृष्टिमें) श्रीठाकुरजी को स्वरूप प्रत्येक के घर में पृथक-पृथक बिराजे है और भूतल में श्रीठाकुरजी के स्वरूप गिनती के हैं। लीलाधाम में गिनती के स्वरूप नहीं है परंतु वहां तो अनंत युगल स्वरूप ते विहार हैं। यह अनंत युगल की इन्द्रियनको देवता कृष्णास्य श्रीवल्लभ प्रभु है। नित्य लीलाधाम को विहार अनंतरूप ते अगणितानंदरूप है। क्योंकि परब्रह्म 'सत्य-ज्ञान-अनंत' है तातें अनंत पने ते ही विहार करे है यह अनंत पद को आगे करके पुष्टि स्वरूप महिमा को पुष्टि साहित्य में अवलोकन करनो कारण के स्वरूप ज्ञान बिना अपरिछिन्न आनंद की उपलब्धि नहीं हो सके। ताको प्रमाण परमज्ञात्वा पाने महारसः उपरको अर्थ आधिदैविक वज्र चिन्ह को भयो। अब आध्यात्मिक अर्थ कहत है कि याही प्रकार भूतल में ही भक्तों की एकादश इन्द्रियन की शुद्धिकरणार्थ आपको प्रागट्य एकादशी को है। यह इन्द्रिय शुद्धि करवेमें वज्र चिन्ह कारणरूप है।

भूतल संबंधी भक्तों के प्रतिबंध समूह दूर करवेमें वज्र चिन्हको कार्य है। सो आध्यात्मिक है और नित्य लीलाधाम संबंधी जो कार्य है सो आधिदैविक कार्य है ऐसे हरेक चिन्ह को कार्य या प्रकार जाननो। या तो हरेक पदार्थ को त्रिविध स्वरूप है भौतिक, आध्यात्मिक, आधिदैविक तेसे चिन्ह हू

---

[1] (सु.१०-३० कृत्वातावन्त मात्मानं यावति गोपी योषितः रेमे स भगवाँस्ता भिरात्मा रामोऽपि लीलया)

त्रिविध स्वरूप है। तातें भूतल संबंधी भक्तनके एकादश इन्द्रियन की शुद्धि करके अपनी लीला योग्य संगत प्राप्त कराय के अलौकिक महारसरूप स्वरूप को दान करे है। विध विध कार्य करवे के लिये आपने चरण कमलमें विध विध चिन्ह धारण किये हैं।

निःसाधन 'प्रमेय' वरणीय अंतरंग भक्तोंन कू भगवदप्राप्तिमें भगवदस्वरूप ही साधनरूप है। तिनके अनिष्ट निवारणमें चरणचिन्ह कारणरूप है। जब अनिष्ट की निवृत्ति होय जाय है तब विन भक्तनके सकल इन्द्रिय अंतः करणादि आनंदमय या अधिकरणरूप होवे हैं। तब वे भक्तनके संग रसरीतसू रमण करवे प्रभुनको बडो मनोरथ होय है तैसे वा भक्तन कू भी अपने प्रियतम बिना क्षण क्षण युग समान बीते है। ता समे दूर ते दर्शन देवे हैं फिर अंतरध्यान होय जाय है। या प्रकार संयोग वियोग ते परिपक्व दशा (सर्वात्मभाव) सिद्ध करे है। जैसे रसिक भक्त नंददासजीनो कह्यो है।

षडसी भई लुहार की, छिन पानी... छिन आग...

ऐसी अवस्था भक्तनकी होय है ताकू परिभाव कहे हैं। (प्रभु प्रेमकी तीसरी श्रेणी व्यसन भाव है) यह अवस्था में एक एक क्षण प्रिय वियोगमें युगसमान बीते है। क्षण मृत्यु क्षण जीवन की यह अवस्था है। प्रभु प्रेम की प्रथम श्रेणी अनन्यता है। तब पुष्टि प्रभु अपने स्वरूपानंद दान करवे की इच्छा करे हैं। तब भक्तन की जहां जहां मोह ममत्व है वहां सू मन कू निकासे हैं। तातें नंददासजी ने कह्यो है, **भाव भयो जब जानीये सोइ अवर वस्तु की ठौर ना होई।**

भाव है सो प्रेम के पहले प्रकट होय है (भाव रुचि को स्वरूप है) और प्रेम सुधाको स्वरूप है। रुचि के पदार्थ की भीतर सुधा रही है तातें भाव विना प्रेम की उपलब्धि नांही। ता समे एक प्रियतम के स्वरूप बिना अन्य भौतिक पदार्थमात्र में सू राग की निवृत्ति होय जाय है। प्रेम, आसक्ति, व्यसन, तन्मयता यह चारों अवस्था प्रेम की है। जब भौतिक सब पदार्थ में सू राग की निवृत्ति होय हैं तब प्रभु प्रेम हृदय में सुअंकुरित होय है। फिर समानशील प्रेमी भक्त के साथ प्रियतम के स्वरूपात्मक गुणगान सू प्रेम की वृद्धि होय है।

जैसे नंददासजी ने कह्यो है कि, **'प्रीत बाणवत छिन ही छिन पूछ-पूछ पिय अनुहार'** प्रियतम की स्वरूप माधुरी को सखीजनो आपसमें गुणगान करके प्रेम बिछावत है। यह प्रेम की जब वृद्धि होय है तब दूसरी श्रेणी आसक्ति में प्रवेश होय है। आसक्ति में जगत प्रपंच और देहाध्यासादि प्राकृत प्रपंच की विस्मृति होय जाय है। प्रियतम प्रभु को भावात्मक (मानसी) स्वरूप सदा निकट रहे है। जैसे कह्यो है कि,

संगम रस सम संगम नहीं, परि विरह जु रस की रास ॥
जहां विरह प्रितम तहां, रहत निरंतर पास॥

या प्रकार आसक्ति अवस्था में जगत प्रपंच की और ले जायवे वारे मन-चित्त की वृत्तिओं को लय एक प्रिय स्वरूप में ही होय है। मन चित्त की वृत्तिओं को लय प्रिय स्वरूप में तदाकार रहवे सू देह और जगत प्रपंच कू भूलाय दे है। यातें वेणुगीत अंतिम श्लोकमें श्रीमदाचार्य चरण आज्ञा करे हैं कि 'व्रजरत्नाओं को लीला प्रपंच में प्रवेश भये ते फिर

संसार में आवर्तन नाही भयो है या समय प्रभुन को जो साक्षात्कार होय है सो भावात्मक स्वरूप का लीला सहित प्रभु को प्राकट्य परम व्योम में भक्त हृदय में होय है। भौतिक प्रपंच विस्मृति पश्चात होय है। यह भावात्मक स्वरूप को संगम हृदय में जडित होय जाय है। जैसे पंचमंजरी में नंददासजी ने कह्यो है कि रूपमंजरी ताको हृदय (हैयो) गिरधर अपनो आलय कियो। रस मंजरी को स्वप्न में प्रभु को दर्शन अनुभव भयो. यह स्वरूपानुभव रूपमंजरीके हृदयमें जटित होय गयो। तातें नंददासजी कहत है कि रूपमंजरी को हृदयरूप गृहमें गिरधरने निवास कियो है। और लीला चरित्र के अनेक रसात्मक भाव हृदयमें सू प्रकट होय है। जाको वर्णन श्री मदाचार्यचरणने तामस प्रमेय प्रकरण में वेणुगीत श्री सुबोधिनीजी में कियो है। जब भक्तन के तापक्लेश सू प्रभु दर्शन देवे की इच्छा करे हैं तब साक्षात् स्वरूप सूं अथवा नाद द्वारा भावात्मक स्वरूप सू भक्त के मन में प्रकट होय है। प्रभु को मन में साक्षात्कार भये ते भक्त की दशों इन्द्रियन को मनमें लय होय जाय है। दशों इन्द्रियनकों भौतिक कार्य निवृत्त होय जाय है। दशों इन्द्रियों सहित मन प्राण में प्रवेश करे है और इन्द्रियाँ मन सहित प्राण हृदय में प्रकट भये प्रभुन को स्वरूप में प्रवेश करे है। तब बाह्य भौतिक जगत प्रपंच और देहाध्यासादि प्रपंच की सर्वथा विस्मृति होय के यह भक्त लोकातीत होय जाय है। अर्थात् आधिदैविक लीला प्रपंच में भक्त को प्रवेश होय जाय है। तामें प्रपंच की विस्मृति पश्चात प्रिय प्रभु को संगम होय है। और संगम में जो

स्वरूपानुभव भयो ताकि विस्मृति कबहू नहीं होय है। कारण के भावात्मक स्वरूप की विस्मृति करायवे वारी भौतिक और आध्यात्मिक काम है। ताकी यह भक्तनमें सू निवृत्ति होय गई है। अब यह भक्तों में भगवत्स्वरूप संबंधी आधिदैविक काम जागृत होय के अपनो शासन चलावे है या तो पद संगम को बीज आत्मभूमि में बोयो गयो है। तातें अक्षय अपरिणामी है। आत्मतत्व अपरिणामी शाश्वत शुद्ध है।

श्री सुबोधिनीजी (२-६-४०) में आत्मतत्व के द्वादश धर्म में श्री मदाचार्यचरणने निर्देश कियो है कि आत्मतत्व (१) विशुद्ध (२) विषयाकार शून्य (३) सर्वान्तर (४) संदेहादि-रहित स्थिर (६) सत्य (७) पूर्ण (८) आद्यन्तः रहित (९) निर्गुण (१०) नित्य (११) द्वैतभाव रहित (१२) स्वतः ज्ञानरूप या प्रकार आत्मतत्व को महत्व है।

तातें प्रभु संगम को बीज आत्मभूमि में बोयो गयो है। ताकी कबहू विस्मृति नहीं होय है और हृदयमें प्रकट भयो स्वरूप फेरी नेत्र में प्रकट होय है। तब प्रियतम के भावात्मक स्वरूप को सर्वदर्शन होयवे लगे है 'प्रिय तो ही नैनही में राखों, तेरे एक रोम की छवि पर जगत वारने नाखू' या प्रकार भावात्मक स्वरूप नेत्रों में आय बसे हैं। परंतु साक्षात संबंध विना प्रेमीभक्त के तापकी निवृत्ति नहीं होय सके है। समग्र इन्द्रीय अंतःकरणादि प्रियतम के साक्षात् मिलवे के लिये तलफे है। तब यह भक्त की तीसरी श्रेणी व्यसन अवस्थामें प्रवेश होय है। यह व्यसन दशा प्रभु को ओर की विशुद्ध प्रेम की कसोटी (परीक्षा) रूप है। यह अति कठिन

दशा है। तातें कह्यो है कि,

नेह पीर जे जन सहे, तिनके मारग ओर।
पहोंचे निज जन सूरमां, लूटे कायर चोर॥

कोई विरला ही यह कठिन दशा ते पार होय जाय है। जिन भक्तों में केवल अपने प्रियतम के सुख की कामना है। अपने सुख की नांही ऐसे तत्सुखी प्रेमीजन व्यसन भावकी काष्टापन दशा कुं लांघ जाय है। कारण के तत्सुख में एक ऐसी अद्भुत शक्ति है के कठीनता कुं भी सहन कर लेते हैं। ताते कह्यो है कि, 'सापेक्षितम समर्थो भवति'

जो प्रियतम प्रभुसे अपने सुखकी अपेक्षा राखे हैं वह वियोग दुःख सहन करवेमें अशक्य होय जाय है। कारण कि स्वार्थ हे सो रोग है। आत्माकुं नीर्बल करवे वारो है। अन्तर्गृहगता भक्त ताको प्रमाण है, मीन जैसे जल बिना तलफे हे तेसी व्यसन दशा है। विशुद्ध प्रभु प्रेमी भक्त को जीवन या व्यसन दशा में प्रिय सौन्दर्यामृत-लावण्यामृत के पान ते टीके है। प्रभुन के भावात्मक स्वरूपको जब दर्शन होय है। तब ताको जीवन है और जा समय स्वरूप को विस्मरण-दर्शन नहीं होय है तब मृत्यु जैसी अवस्था है। व्यसन अवस्था विरह रूप है, विरह में श्री प्रभुनको भावात्मक स्वरूप जीवन के अवलंबन रूप है यह भावात्मक स्वरूप को जब दर्शन नहीं होय है तब मृत्यु जैसी अवस्था है। या प्रकार जीवन-मरण को क्षण-क्षण में अनुभव करे है ताते कह्यो हेके;

प्रथम विरह ब्रज सुन्दरी प्रकट पलक वनदेश।
क्षणु मरनो क्षणु जीवनो यही प्रीत को वेश॥

विरह चार प्रकार को है। प्रत्यक्ष-पलकान्तर-वनांतर-देशांतर, तामें व्यसन दशा में पलकान्तर विरह को अनुभव है। सत्य प्रेमीओकी कसौटी रूप यह व्यसन अवस्था है। ताते यह कठिन परम काष्टापन दशापे कोई एक विरलाही चलत है। बाकी तो प्रेमकी वातो करवे वारेनकी विश्वमें कमी नहीं है। "**प्रेम प्रेम सबकोउ कहे प्रेम न जाने कोय जो जाने प्रेम तत्व तो हटे न सर्वस्व खोय।**" देहाध्यासादि प्रपंच और जगत प्रपंच हृदय में ते नीकासे बिना दिव्य प्रभुप्रेम के जो लोकातीत है तीनको बीज अंकुरीत नहीं होय है। 'दिव्य' कहवेते जैसे स्वर्ग देवताको लोक है। यह स्वर्ग में रहेभये पदार्थ मृत्यु लोकके मनुष्य नहीं देख सके है अथवा स्वर्ग के पदार्थ को अनुभव हु नहीं कर सके है। तैसे स्वर्ग से ब्रह्मलोक और ब्रह्मलोक से वैकुंठ लोककी दिव्यता अधिक है यह वैकुंठ लोक से भी परे पुष्टि प्रभुन को धाम व्यापि वैकुंठ है। तो ऐसे महान दिव्य स्वरूपके प्रेम की प्राप्ति लोकातीत भये बीना कैसे होय शके ? जाकु प्रभुप्रेम की एक बिन्दू मील गई सो जन जगत के काम को नहीं रहत है और न तो जगत इनके कामको है। ऐसे प्रेमी भक्त की दशा को वर्णन नंददास करत हैं कि,

भूत छुवे मदिरा पीये, सबकाहु सुधी होय।
प्रेम अमीरस जो पीवे, ताही न रहे सुधी कोय॥

या कथन सुं जान्यो जाय है के यह विश्वमें प्रभु प्रेमीओका टोल नही है और जीन के भीतर यह प्रेम प्रकट होय है वे भक्त अपनो जगत नीरालो बनावे है। जहां स्थावर जंगम

सर्वत्र इनके प्रीयतम प्रभु विना और कछु दिखवे में नहिं आवे है। यह सर्वात्मभाव को लक्षण है।

यत्रनान्यत्पस्यति, नान्यच्छणोति नान्य द्विजानाति स भूमाथ॥
यत्रान्यत्पस्यत्यन्यच्छृणोत्य न्यद्विजानाति तद्दभ्य यौ वै॥
भूमा तदमृतमथ यद्दमृतथ तदभ्यं तन्मृत्र्यम् ॥

जहां दूसरों को देखते नहीं हैं दूसरे को सुनते नहीं है दूसरे को जानते नहीं वे ही भूमा (सर्वात्मभाव) है और जहां दूसरों को देखते, दूसरों को सुनते, दूसरों को जानते हैं वो अल्प है। जो भूमा हैं वो अमृत (आत्मा) है। और अल्प है सो मृत्यु (धर्मवालेजीव) हैं। यातें प्रेम सदा मधुर-अविनाशी सनातन सत्य है। अर्थात् ऐसे सर्वात्मभाववान प्रभु प्रेममें निमग्न वज्रभक्तों की अवस्था को वर्णन महानुभाव सूरदासजी कहत हैं कि,

नाहीन रह्यो मन में ठौर।
नंद-नंदन बिन कासु कर आनिये चित्त और॥
चलत चितवत द्योस जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदय तें यह मदन मूरति, छिननईत उतजात॥
कहत कथा अनेक उधौ, लोभ लाख दिखाय।
कहा करे घट प्रेम पूरण सिंधु नांही समाय॥
श्याम गात्र सरोज आनन, ललित गति मृदुहास।
'सूर' ऐसो दरस को 'यह' मरत लोचन प्यास॥

यह पद में पुष्टिमार्गीय प्रेमभक्तों के सर्वात्मभावको वर्णन कियो है। 'प्रभु' प्रेम के शिखर के स्थान ये ही हैं। प्रेमीजन अपनो जीवन प्रभुमय बनावे हैं। प्रभु प्रेमकी चौथी श्रेणी

तन्मयता है। व्यसन अवस्था में भावात्मक प्रभु को सतत् ध्यान रहे हैं। यह अवस्था में एक प्रभु स्वरूप सिवाय काहू को संग नहीं रहे है। ऐसे अधिकारीजन के लिये ही श्रीआचार्यचरणने पंचश्लोकीमें आज्ञा करी है कि, **'संग सर्वात्मता त्याज्यं'** व्यसन अवस्था में बाहिर भीतर सर्वत्र प्रिय प्रभु को भावात्मक स्वरूप दृष्टिगोचर रहे है ताकू सर्वात्मभाव कहत है। या समें समानशील सखीजनों को संग भी छूट जाय है। क्योंकि स्वतंत्र भक्तिमें रह्यो भयो आत्मतत्व परते पर है। वहां रसात्मक त्रिगुणात्मक, विलासक हु संबंध नहीं है। यह केवल स्वरूप है जिनको अनुभवात्मक अवस्थाको नाम श्री सर्वोत्तमजीमें **स्वानंद तुंदिल** है। यह अनंत को एक रूप है। जाको सबको मूल परब्रह्म 'वैश्वानर' स्वरूप कहत है तातें समानशील को संग प्रेम और आसक्ति रहत है। व्यसन अवस्थामें जब भक्त आरूढ होय तब सहजहीमें सब संग छूट जाय है परम कारुणिक प्रभु दैवी गुणमय माया को बंधक छूडायवे के लिये यह भक्त में विफलता और अस्वस्थता राखे है। यह विफलता और अस्वस्थता कारुणिक प्रभु की महान् भुजा रूप है यह भुजान्ते भक्त को रक्षण करत है ताते सब संग छूट जाय है, सदानंद के अनुभव में भक्ति के शास्त्रोक्त साधन तथा जीव सत्ता और केवल स्वरूपातिरिक्ति अन्य को संग प्रतिबंधरूप है तातें करूणात्मा प्रभु याको निवारण करे है।[१] व्यसन अवस्था में मन और चीत (क्रिया-ज्ञान) को संपूर्ण लय प्रिय प्रभु में होय जायवे सु तन्मय

याको प्रमाण सु. १०, २९, २ की श्रीमत्प्रभुचरणकृत टीप्पणीजी में देखनो)

अवस्था को प्राप्त होय है।

जैसे सरिता सागररूप होय जाय सागर में मिलवे सु अपनो नाम रूप भूल जाय है और सागर रूप होय जाय है तैसे तन्मय अवस्था में पहोंचे हुए भक्त प्रभुमय बन जाय हैं और प्रियतम प्रभु भक्तमय बन जाय है. प्रेम को मारग निरालो है. जैसे हमारो प्रेम प्रभु में है तैसे प्रभु को प्रेम हमारे में है, हम जैसे प्रभुको ध्यान करत है तैसे प्रभु हमारो ध्यान करत है दैवी मानवमात्र के भीतर इनके प्रियतम प्रभु सदैव बिराजमान हैं। और प्रभुको प्रेम दैवीजीवों पर सदैव रही आवत है। दैवीजीव और प्रभु के बीच पति-पत्नी को संबंध है। ब्रह्मसंबंध को गूठ भावार्थ यही है तातें पति-पत्नी को अविनाशी कबहू न तूटवेवाले नातो (नित्य संबंध) दैवी जीव के साथ प्रभु को है। सो भागवत (११.११.६) में कह्यो है कि **“सुपर्णा वै तो सद्रसौ सखायौ यदच्छ यै तो कृतनी कोय वृक्षे ॥”** आपस में स्वरूपामृत के पान करवेवारे जीव और परमात्मारूपी दो पक्षी देह रूपी वृक्षमें निवास करे हैं और दैवीजीव के प्रभु नित्य सखा हैं परंतु देवी जीव भूतलपे आयके देहाध्यासादि प्रपंच सुखमें फलके अपने प्रियतम नित्य सखाको भूल गयो है ताकि स्मृति करुणासागर श्री वल्लभने पुष्टि मारग प्रकट करी के ब्रह्मसंबंध दैवी जीवोंन को कराई और आधिदैविक (भावात्मक) स्वरूप ताके भीतर पधराय के प्रभुन को सेवन करवे के लिये स्वरूप पधराय देते भये जासु अपने पति की विस्मृति न होय। श्रीमद् भागवत (११.१६.९) भगवद वाक्य है। हे उद्धव मैं समस्त प्राणीयों की आत्मा, प्रिय और सुहृद

मित्र हूं और प्रभु अपने प्रेमी भक्त को ध्यान करे हैं ताको लक्षण उद्धवजीने दिखायो है कि,

उद्धव ऐसो भक्त मोही भावे,
सब तज आश निरंतर मेरी, जन्म कर्म गुण गावे॥१॥
कथनी कहत निरंतर मेरी, मेरे में चित लावे।
गद्‌गद् गिरा नैन जल धारा, पुलकित प्रेम बढ़ावे॥२॥
जहां जहां भक्त मेरो चरण धरत है, तहां तीरथ चली आवे।
वे रज ले मैं अंग लगाउं, कोटि ब्रह्मांड सुख पावे॥३॥
मेरी सूरत इनके हृदयमें, वे मेरे उर आवे ।
बल बल जाउं श्रीमुख की बानी सूरदास जस गावे॥४॥

या पदके अनुसार भक्त भगवान को ध्यान करे है और भगवान भक्त को ध्यान करे है। अरस परस तदात्मक होय है प्रेम की यह सिद्ध अवस्थापे पहोंचे भये भक्त प्रभुन के सात नित्य अखंड निरवधि रसानुभव करे है। तत्सुखी विशुद्ध प्रेम सोही श्री वल्लभ को स्वरूप है। तातें यह प्रेम तत्वको जाने बिना श्री वल्लभ के चरण कमलकी प्राप्ति सर्वथा अशक्य है। प्रेम करके ही प्रभु के स्वरूपमें प्रवेश है और प्रेमते ही प्रभु की प्राप्ति है । या पुष्टि भक्त इनको ही कह्यो जाय जो तत्सुख के प्रेम तत्व को समझ। और यह प्रेम को हृदयमें बसावे। (अन्यथा तो मर्यादा भक्त कह्यो जाय है) या प्रकार प्रेम तत्व कुं समझके विरह दशा को जब भक्त अनुभव करे है तब क्रमक्रम ते प्रभु वाके पास पधारके वाके अंतःकरणमें लय होयके समीप रहे हैं। तासो जो कोई वज्र चिन्ह को ध्यान करेगो ताकु क्रमक्रमते पुष्टि परम फलदान

श्री वल्लभप्रभु करेंगे और वाके हृदयमें प्रभु वज्र लेप होय अखंड बिराजमान होय रसानुभव करावे हैं। श्री स्वामिनीजीके अंतःकरणरूपी चरणके मूलभावरूपी मणीन के किरण सू यह वज्र चिन्ह जटित है। ऐसो आधिदैविक वज्र को स्वरूप है। वज्र चिन्ह को और हू भाव कहत है जो यह वज्र चिन्ह युगल स्वरूप के विरहानुभव आत्मानुभव रूप है। तिनके प्रकाशसु भूषित दक्षिण चरण रहे है। श्रीमद् वल्लभाधीश दत्त भाव करके गोपीजनन कुं फल प्राप्ति भई तामें रसानुभव को जो स्वाद तासु पूरित यह चिन्ह है अर्थात् कथामृत जो विरल रस है तासू पृथक स्वरूपात्मक जो द्रवीभूत रस है ताको स्थायी अनुभव करायवेमें वज्र चिन्ह कारणरूपी है क्षणक्षणमें नूतन नूतन भाव (स्वरूप लावण्यामृत के) प्रगट करे है सो भक्तहृदय कबहू तृप्त नहीं होय है और निजजन के फलको फलित करे है। यह वज्र चिन्ह ऐसो प्रभावशाली है जिनके ध्यान सू प्रभु वश होय है। क्योंकि वज्र चिन्ह को आधिदैविक गुण भगवदस्वरूपको हृदयमें स्थायी निरुद्ध करवे को है तातें प्रभु भक्त हृदयमें स्थायी (स्थिर) बिराजके रसानुभव करावे है। यह वज्र चिन्ह के ध्यानसु सर्वात्मभाव सिद्ध होय है। सर्वात्मभाव सिद्ध करायवेके लिये श्री वल्लभप्रभुने यह चिन्ह धारण कियो है सो यह वज्र चिन्ह भक्तनके हृदयमें प्रवेस करके तामस आदि भाव निवृत्त करके दैन्यभाव उपजाय स्वरूपज्ञा भलीभांति करावे है। जासु ब्रजरत्ना श्री प्रभुको अत्यंत प्रिय होयके रहे है। काटनो और चिपकनो (अधरामृत पान करावनो) यह दो गुण वज्र चिन्ह में है।

काटवे के धर्मनसू भक्तनके सकल दोष (भौतिक, आध्यात्मिक, आधिदैविक) दूरी करत है। फेरी वियोग दुःख को दूरी करत है और दूसरे चिपकवे के धर्म सू प्रभुन भक्त के हृदयमें वज्र लेप (स्थायी) बसाय के अधरामृत के पान करावत हैं। ताते वज्र चिन्ह भक्तनके त्रिविध प्रकार के अनिष्ट कू दूर करी के प्रभुन को नित्यसंबंध कराय अखंड रसानुभव करायवे के लिये श्रीवल्लभ प्रभु ने चरणकमलमें धारण कियो है।

श्रीमद् प्रभुचरणने न्याशादेश में आज्ञा करी है कि पुष्टि भक्तन कू साक्षात् स्वरूप बिना और सब पाप है। यह पाप कायिक, वाचिक और मानसिक अथवा आधिभौतिक, आध्यात्मिक, आधिदैविक प्रकार हैं। यह सब प्रकार के पापों कू यह वज्र चिन्ह आपने काटवे के धर्म सू दूर करके साक्षात् स्वरूपमें सर्वात्मभाव सिद्ध करके भगवत्स्वरूप को हृदयमें स्थायी निरुद्ध करावे है। और श्री मत्प्रभुचरण श्री गोकुलेशजी श्री हरिरायचरण चौराशी-दोसो बावन अष्टसखादि की वाणी भगवद्रसमें निमग्न करके भगवद् स्वरूप में चिपकाय देवे है। श्री गुंसाईजीने, सर्वोत्तम, वल्लभाष्टक, सप्तश्लोकी द्वारा अदेय स्वरूप श्री वल्लभको वाणी स्वरूपसू निजजनों कू दान कियो है। सो वाणी के आश्रय ते श्री वल्लभ को वज्रलेपि हृदयमें होय है। ताको प्रमाण स्व यशोगान संहृष्ट **हृदयांभोज विष्टरः** यह नाम में है। या प्रकार आध्यात्मिक और आधिदैविक वज्र चिन्ह को प्रभाव समझ के ध्यान मनन करनो।

वज्र चिन्ह को धोल

बीजुं चिन्ह वज्र नुं भारी, ए चरणनन पर तन मन वारी॥
हृदय जीवनुं वज्र समान, चरणचिन्ह वज्र मूक्या आन॥
वज्र हृदय तेथी नरम थया, सहु भाव हृदये महिरह्यां॥
कीधो दैन्यरूपी त्यां खाडो, भावरस त्या जईने वाढ्यो॥
मायावादना धर्म सौ हरशे, हृदये भाव वज्र जेम जडशे॥
अलौकिकसहु चिन्ह अगाध, सहु तजीए आ हृदे साध॥
गिरीराजने दीधा आश्वास, कोमल चरण पद्म मूकी प्रकाश॥
लीला सहु प्रकट तो करशुं, तमारा तनना ताप सहु हरशुं॥
गिरी उपर चरण ए गया, चिन्हित मय पर्वत ए थया॥
ऐवा चरण सरोज प्रताप गिरी कोमल थया आपो आप॥
वज्र चिन्ह नो ले जे धर्म, भागे मायावादीना मननो मर्म।
स्वतंत्र भक्तिने करे पोताजेवुरूप, द्रढ वज्र जे वुं करे स्वरूप॥

यहां वज्र चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

गदा

दक्षिण चरणमें तीसरो चिन्ह गदा को है। ताको भाव कहत है,

श्री महाप्रभुजी के चरणकमलमें जीव की मति स्थिर है। ताकी कबहू अधोगति नाहीं होय है। या भावकू जतायवेकूं चरणमें ऊँची गदा धारण करी है। या दूसरो भाव यह गदा समस्त श्री स्वामिनीयों के हस्त को आधिदैविक स्वरूप है। अथवा गदा श्री स्वामिनीजी के कूच रूप है और गदा है जो वो महा शूरवीर के पास रहे है। सो गदा को तो द्वंद युद्ध है। तासू रति संग्राम के महासुभा प्रिया-प्रीतम के विहार कू यह गदा ही जताय रही है। यह गदा वीर्य गुणरूप है। तासू श्री स्वामिनीजी के भाव भावित है। सो पुष्टि पुरुषोत्तम मधुसूदन काम दलन रूप ते श्रीहस्त में गदा धारण करत हैं। अर्थात् श्री स्वामिनीजी की भुजा सो भुजा लगायवेरूप गदा धारण करके वज्रेन्दरूपसु त्रिलोकी की श्री स्वामिनीजीन कू जीव के वशीभूत करते भये ऐसे विजयशाली प्रभुन को हूँ श्री वल्लभ अपने स्फूरत प्रेम माधुरी के बलसू जीव के वे गदा कू श्री वल्लभने चरण कमलमें धारन कर राखी है।

यह गदा श्री स्वामिनीजी के कूच रूप है। तासू श्री

ठाकुरजी या भावते श्री हस्त में धारण करी वारंवार पलोटत है। स्पर्श करत हैं। अपने हृदय में लगावत है। युगल स्वरूपने जब गदायुद्ध कियो तब श्री प्रियाजीने जीत के प्रभुन कू वश कियो तब श्रीठाकुरजीने प्रार्थना की, जो तुमने मोकू जीत्यो सो तो भली भई परंतु ये ही प्रकार सु सुख गोपीजन मोकू जीतेंगी तब आप कहा करोगे? तब श्री प्रियाजी ने अपने चरण की गदा दीनी तासू सब ब्रजभक्तन कू जीते (यहा पर हारनो और जीतनो रस रूप ही जाननो) तैसे श्री महाप्रभुजी स्वामिनीजी स्वरूप है। सब स्वामिनीजीओं को मूल आधिदैविक स्वामिनीजी स्वरूप है। तातें जो कोई श्रीमहाप्रभुजी के चरण चिन्ह गदा को ध्यान करेगो ताकू स्वरूपानंद को दान होयगो। यह आपके चरण की गदा श्री मथुरेशजी, श्री द्वारकाधीशजी श्री हस्त में धारण करत है। ता करी सकल श्री स्वामिनीजी कू जीत के वशीभूत करत है और गजराज वत वक्षःस्थल पर विहार करत है। यह गदा सकल श्री स्वामिनीजी तथा प्रभुन की क्रियाशक्तिरूप श्री हस्त के भावरूप हैं, सो आधिदैविक शक्तिरूप गदा 'सर्वशक्तिधृक' ने अपने चरणमें धारण करी है, क्योंकि बड़े बड़े योद्धा लीलासृष्टि में तामें मुख्य श्री गोवर्द्धनधर तथा श्रीस्वामिनीजी को रति संग्राम होय है, तथा श्री चंद्रावलीजी हु सुरत युद्ध में अति प्रविन है। सो संपूर्ण लीला परिकर कू जीत के आप श्री वल्लभ ने अपने अपने चरण में गदा को चिन्ह धारण कियो है। तातें संपूर्ण

लीला समाज आपके वशीभुत रहे हैं। जैसे समस्त सरिताएँ समुद्र के आश्रित हैं, तैसे लीला परिकर समस्त सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ के आश्रित है तैसे लीला परिकर समस्त सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ के आश्रित हैं कारण के लीलाधाम में सुधा ते ही समस्त को जीवन है। तातें अपने प्राण स्वरूप श्री वल्लभ सुधा की सुभग मूर्ति कूं समस्त परिकर वशीभूत होय रहे हैं, तामें कहा आश्चर्य ? स्वतंत्र सबकी आत्मारूप सर्वान्तर सबके आधार, सबके आधेय, सबके भोक्ता, सबके दाता श्री वल्लभ ही हैं।

श्रीनाथजी, श्रीगुसांईजी सातों बालक, समस्त वल्लभ कुल तथा आप की निज सृष्टि, दैवी सृष्टि भूतल की श्रीवल्लभ के ही वशीभूत है और आपकी आज्ञारूप मेंड में बंधे हैं। तैसे मूल धाम के लीला परिकरण को हुं जाननो।

गदा चिन्ह को धोल

त्रीजु चिन्ह गदा नुं जाणो, ऐ अद्भुत रस अमृत मानो।।
ऐ तो भक्तनने कारज धरीयां, सहु दुष्ट स्वाभाविक हरीयां।।

हरीनां जहां जहां चरण पधारे, त्यां त्यां सर्वना दोषनिवारे।।
भक्तना मनोरथनी थाय सिद्धि, अन्य असुर ने शिक्षा दीधी।।

चिन्ह तेथी चरण मांहे लीधा, मायावाद खंड खंड कीधा।।
गदा करवी शत्रुनो संहार, आवे ना दोष भक्तनके पास।।

मोटो शत्रु माया दल जाणो, अहंकार तेथी अधिक मानो।।
रसभाव पुष्टि ना जे कहीये, तेमांथी ऐ पतन करे सहीये।।

हरि ने अप्रिय छे अहंकार, तेनो गदाजी करता संहार।।
अहंकार ऐ मन थकी जाय, पुष्टिमा हे स्थिति त्यारे थाय।।

पांच पर्व अविद्याना भारी, नाम, स्वरूप, अज्ञान, अहंकारी।।
हृदये चिन्ह गदानुं जे लेशे, अज्ञान ते नुं दूर करी देशे।।

व्हाला ऐ कीधां तीर्थ सनाथ, करी कृपा ने पसार्या छे हाथ।।
ए गदा छे पुष्टि फलरूप, मर्यादा तेनुं ना जाणे स्वरूप।।

ऐना सुमरण सुख शुं गाय, तेना पातक सर्वे जाय।।
गदा नो प्रभाव जे हृदयमें धरे, तेना स्वभाव नो विजय ते करे।।

...यहां गदा चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

पताका

दक्षिण चरण में चोथो चिन्ह पताका को है, ताको भाव कहत है,

पताका कू पत्रिका कही जाय है। सो विजय पत्रिका ध्वज के पास बांधी जाय है। ताकू पत्रिका कहे हैं पत्रिका में एक सो पताका है। **'तिहारे पूजिये पिय पांव...।'**

यह यश धर्मरूप है। भक्त की आर्ति दूरी करी दर्शन देनो और रसदान करनो यह भगवान को यश है। यहां युगल श्री महाप्रभुजी युगल में जब श्री स्वामिनीजी के मानसु वियोग होय है तब प्रकट होय स्वरूपानंद दान करत है। सो यश श्री वल्लभ को मूल धाम में छाय रह्यो है। श्री महाप्रभुजी युगल स्वरूपके साक्षी स्वरूप हैं। युगल स्वरूप सुरत युद्ध के चिन्ह वारे हैं। सो वस्तुतः रसमय है। तिनके साक्षीरूप है या अंतर्यामी जैसे जीवात्मकू प्रेरणा करे हैं तैसे ता प्रेरणा के अनुसार जीवात्मा सब कुछ करे है। तैसे युगल में हू प्रेरणा करवे वारे अंतर्यामी स्वरूप श्री वल्लभ हैं। सो युगल के केली भावकों प्रदीप्त करे हैं। साक्षी स्वरूप सू रतियात्मक रति केली के नौतन नौतन भाव की क्षणो क्षणों प्रेरणा करे हे अथवा तासू कृष्णास्य साक्षी स्वरूप युगलकी आत्मा है। जब अंतरंग सखीजनों जालरन्धमें सूर समय भये थके सुरत संग्राम के सुलटों कू नख क्षतादि सू अंकित भये थके स्वरूप

के दर्शन करे हैं। तब सखीजनों चित्र सी होय जाय हैं। तहां अनंत युगलों की आत्मा श्री वल्लभाधीश के कोटि सूर्याग्नीवत सुषमा को दर्शन वे सखीजन कैसे झेल सकें ? जिनके दर्शन सु युगल स्वरूप मिश्रित बीखेरो हो जाय है। जब श्री वल्लभ भूतलमें प्रकट होय के व्रजमें पधारे तब श्री गिरीराजजी पांव धारके श्रीजी सो मिलाप किये । श्रीजी आपके दर्शन करवे मात्र सूं चित्र से स्थिर अचल होय गये। जो यद्यपि अचल स्वरूप सू भूतल पे सृष्टि का दर्शन दे रहे हैं। श्री हरिराय चरणने श्रीवल्लभ के स्वरूप को अनुभव करी के आपके यश को गान कियो है कि **“श्रीवल्लभ तज अपनो ठाकुर कहो कौन पे जैये हो।”**

या पद की तीसरी तुक (टूक) में **‘सुरत ही देख अनंत विमोहित तन-मन-प्रान बिकैये हो,’** ऐसे कह्यो है। सो लीलाधाममें आधिभौतिक आध्यात्मिक अनंग नाम कामदेव को प्रवेश हू नांही है। लीलाधाममें तो आधिदैविक अनंग श्रीजी को स्वरूप है। यह श्रीजी श्रीवल्लभ की सौंदर्य माधुर्यताको दर्शन करी के ‘विमोहित’ विशेष करी के मोहित होय जाय है। मोह वारेन कू अन्य सुधि नांही रहे है। जैसे मदीरापान करवे वारे कू अपनी और पर की सुधी नहीं रहे तैसे श्रीजी हु श्री वल्लभकी सौन्दर्य माधुर्य पान करी के गहर नशें में अपनी सुधी भूली के चित्र से अचल होय गये। आध्यात्मिक कोटि कोटि कामदेव के मन को मंथन करे तैसो श्रीजी को स्वरूप है तैसे श्रीजी को हू मन के मंथन करवे वारे आधार सौंदर्य सुषमा स्वरूप श्रीवल्लभ है, क्योंकि कोटि

कोटि श्रीजी की सौंदर्यता कू आप श्रीवल्लभ ने अपने ‘एक एक रोम’ में धारण करी राखे हैं। तातें आपके स्वकियेन यश वर्णन करे हैं के **‘जाके रोम रोम प्रति प्रकटित कोटि गोवर्धनराय’**

सौंदर्यता के अनंत सागर श्री वल्लभ हैं। आप महासागर स्वरूपमें सू श्रृंगार रसात्मक लीला परिकर की अनंत सागरों रूप में प्रकट भये हैं। याको ज्ञापक नाम श्री सर्वोत्तमजी में त्रिलोकीभूषण रहे हैं। त्रिलोकी कहवे ते लीलाधामस्थ राजस, तामस, सात्विक वारे श्री स्वामिनीजीओं समझनो। ताते श्री वल्लभ वर के अनंत गुणों को वर्णन नहीं होय सके है। आपको एक एक गुण भी माधुर्यादि रसात्मक संपत्तिको सागररूप है। ऐसे अनंत गुणों सू भूषित श्री वल्लभ है। तातें आपके निरवधि रसात्मक महामधुर रूप को वर्णन करवे पुष्टि श्रुति भी समर्थ नाहीं परब्रह्म स्वरूप महिमा को पुष्टि श्रुतिओंने जो वर्णन कियो है। सोतो परि व सानवृत्ति से उंगली निर्देश मात्र है। यातें श्री गोकुलेश प्रभुने श्री सर्वोत्तमजी की बृहद टीका में वेद पारगः श्री वल्लभ (वैश्वानर) नाममें आपको निर्विशेषण की पुष्टि **‘सर्वाज्ञातलीलाय’** नाम से होती है।

आगे कहत है कि अनंत युगल स्वरूप भी जाकी सेवामें तत्पर है। संयोग समे की भाव सेवा और विप्रयोग समें आपके तापात्मक स्वरूप के दान सू युगल स्वरूपने अपनो सर्वस्व श्रीमहाप्रभुजी यज्ञभोक्ता को ही समर्पण कियो है। रससंपत्ति के दाता और श्री वल्लभ को सदा ध्यान करवो

योग्य है। अर्थात् लीलाधामस्थ श्रीस्वामिनीगणनमें और तिनके भावात्मक कृष्ण में सकल रसात्मक सत्ता यह त्रितयात्मक कृष्णास्य स्वरूप श्री वल्लभ कू ही जाननो और समस्त श्रीस्वामिनीजीने विजय पताका श्रीठाकुरजी कू लिख दीनी। सो पताका श्री ठाकुरजी की श्री स्वामिनीजी ने श्रीठाकुरजी कू सुरत संग्राम में जीतके अपने पास राखी है। सो श्री ठाकुरजी सर्वेश्वर सर्वात्मा है तोउ श्री प्रियाजी के पाद पीठमें अपने मस्तक को मुकुट धरत हैं (पाद-पीठ यानि चरण पीठीका) अति दीनता करत हैं हा... हा... खात हैं, मैं तिहारो हूं, तिहारी शरण हूं या प्रकार विजय पताका श्रीठाकुरजीने श्री प्यारीजीकू लिख दीनी है। सो युगल स्वरूप कू विजय पताका कु श्री महाप्रभुजीने अपने स्फुरत माधुर्य प्रेम के बलतें जीत के अपने चरण कमलमें राखी है। ताकू देखके प्यारीजी कू दीनता रहे। तैसे श्रीठाकुरजी कू प्यारीजी ते गर्व न करे जो मैं सकल स्वामिनीजियों को जीत के लायो हूं तासू श्री महाप्रभुजी समान कोई महारथी विजयशाली नहीं है। यातें युगलमें अपनो सर्वस्व समर्पण श्री महाप्रभुजीकों ही कियो है। तातें जो कोई या पताका को विध भाव विचारके ध्यान चिंतन करेगो ताको पूर्णरस पदार्थ प्राप्त होय और श्रीमहाप्रभुजी स्वतः अंगीकार करेंगे। उपरोक्त कथन में कह्यो सो युगल स्वरूप ने अपनो सर्वस्व श्री वल्लभ को समर्पण कियो ताको यह आशय है कि जब प्रिया प्रीतम रति संग्राममें प्रचुर भावापन्न होय है तब केलिके अंत में रति केली के बिगाढे भावमें निमग्न होय जाय है। जो बिगाढे भावमें रमण की सारभूत सुधा है। सो सुधा स्वाद में युगल अपनपो भूल के अति मधुर सुधा स्वादमें निमग्न हो जाय है और ता समें युगल की अपनी अपनी रसात्मक केली बंधादिक समग्र सम्पत्तिको साथ देवाधिदेव नाथके हू नाथ प्राण प्रिय श्री वल्लभ कू अपनो सर्वस्व समर्पण करे हैं। वो ही समर्पण को स्वरूप है। अर्थात् युगल की रमण क्रियाके अंतमें जो सुधा प्रकट होय है सोई सुधा को स्वरूप त्रितयात्मक साक्षी स्वरूप कृष्णास्य श्री वल्लभ को है। तासू युगलकी रति केली क्रियामें सु प्रकट भई सुधा को भोग कृष्णास्य देव ही करे है। तातें युगल को समर्पण यह सुधा स्वरूपमें भयो। अतः रसात्मक परिकर को सब भोग कृष्णास्य स्वरूप ही करे है। ताते श्री मत्प्रभुचरणने आपको नाम सर्वोत्तममें यज्ञभोक्ता कह्यो है या विध पताका को आधिदैविक भाव विचार के आपके युगल चरणकमल को सदा हृदय में वसावनो स्वतंत्र भक्ति को दान-शेष भाव को दान आपके युगल चरण कमल के आश्रयसुं ही होय है।

पताका चिन्हनुं धोल

मंगलरूप पताका जानो, पुष्टि पूजा साहित्य ए मानो।।
पुष्टि पूजा गोवर्धन थाय, पताका प्रथम तहां सजाय।।
पताका ना ज्यारे दर्शन थाय, भक्त उर आनंद ना माय।।
हवे थया पताकाना दर्शन, जेथी प्रभु पधारशे अवश्य।।
एना भाव छे अधिक रसाल, पाछळ फरे सदा गोपाल।।
ए पताकानुं चिन्ह उरधरे, करती रससिंगार ने सिद्ध रे।।

... यहां पताका चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

तोरण

दक्षिण चरण में पंचम चिन्ह तोरण है ताको भाव कहत है,

यह तोरण उद्धीपन भावरूप है, उत्सव आगमन में बांधे जाय हैं. जब बंदनवार बंधे है तब सबको यह सूचित होय है कि आज उत्सव (रतिसंग्राम) होयगो. (रसात्मक धाम रमण प्रभुन की राजधानी में है) वहां अखंड रतिसंग्राम चाल्यो ही करे है. तातें गोपालदासजीने वल्लभाख्यानमें गान कियो है कि,

जहाँनित्यरास बहु पेरे रे, मध्य नायक निरतन घेरे रे...
और नित्य रास, नित्य लीला, नित्य नौतन श्रुति ना पामे पार...

या प्रकार रसात्मक धाममें रसात्मक लीला अखंड है। अनंत स्वामिनीजीसु ताके साथ अनंत कोटि कंदर्प श्रीजी सू नित्य नौतन अनेक रति केली बंधादि सू क्षण क्षण में तरुणानंद रूपसूं अनंत युगलों सु रमण राजधानी शोभायमान है

एक ब्रह्मांडे जेनां यश ना माया ।
तेना हुवा कोटि अनंत या भांति ॥

अगणितानंद पुष्टि प्रभुन को विहार रमण राजधानी में सदैव होय रह्यो है यहां अनंत ब्रह्मांड भी रसात्मक ही समझनो। (अक्षरात्मक अथवा भौतिक नांही) यह तोरण चिन्ह रमण विहार उत्सव को जतावेंवारो है। सो तोरण चार प्रकारके

हैं। वस्त्र को, मोती को, हरे पते को तथा आम्र पल्लव को, तामे आम्र को मुख्य है। आम्र पल्लव को तोरणरस को प्रथम अवस्था है। आगे तामें फल लगेगो, सो फल सू रस भोग होयगो। ऐसी सूचना आम्रपल्लव तोरण करे है। या और कटि किंकणी है सो मदन सदन की बंधनवार है। यह बंधनवार आलंबन विभावरूप है। और रसवृद्धि में सहकारी है। आम्र पल्लव उद्दीपन भावरूप है। अरु मदन सदन की बंधनवार कटि किंकणी तो रमण विलास के मध्यपाति है। रति संग्राममें वाद्यरूप सूर बजायवेवारी है। तातें सबमें यह तोरण सर्वोपरि है

निर्गुण भाव वारे, तापक्लेश वारे और निरोधअवस्था वारे गोपीजन करके सेवित हैं। ऐसे तोरणचिन्ह जताय रह्यो है।

प्रतिक्षण निकुंजस्थ लीलारस सुपूरितः यह नाम के फलरूप सूचक यह तोरणचिन्ह है। अखिल तीर्थन ते हू जो शुद्धि संपादनीय नहीं है वे शुद्धि यह चरण कमल के आश्रितन को यह तोरणचिन्ह ते सुबल है। विरहावस्था में यह चरण कमलकी भावना सू अन्य भावरूपी अशुद्धि को शीघ्र सुपणता सो निवृत्त करी श्री वल्लभप्रभुजी श्रीस्वामिनीजी के स्वरूपे या भगवद् स्वरूप सू भावात्मक प्रागट्य होते थके अपनो स्वरूपानंद दान करेंगे। ऐसी सूचना तोरणचिन्हकी है। यह चिन्ह युगलस्वरूपमें नहीं है। तातें श्री आचार्यचरणकी विलक्षणता जताय रह्यो है। अनन्य पतिभाव भक्तनसू ही यह दुर्लभांध्रिसरोरुह सेवनीय है।

आलंबन भावरूप धर्मीस्वरूप के विचित्र विविध भावोंको अनुभव स्थायी और व्यभिचारी भाव ते तथा अनुभव ते होय

है। तामें आम्रपल्लव तोरण स्थायी भावको सूचक है। इनके दर्शनमात्रसों यह सूचना करावे है कि आगे फलस्वाद होयगो जैसे भूतलपे श्रीमदाचार्य मुखारविंद श्रावित कथारस पियुष कर्ण सुं श्रोतव्य है और सो कथारस स्वरूपानंद को दान प्रकर्ष करके कर रही है । तैसे ही तोरणचिन्ह कू जाननो ।

श्रीवल्लभ प्रभु को स्वरूप ही महाफल है । 'नपरम विदां' श्रीगोपीजनोंने 'नटवर' वपु श्रीमुख को ही फल कह्यो है । नटवर वपुः स्वरूपमें द्विधा श्रृंगार रसात्मक स्वरूप है सो नटवपुः और वरवपुः तामें नटवपुः विप्रयोग भावात्मक अमूर्त सुधास्वरूप श्रीमहाप्रभुजी को है । जाकू स्त्रीगूढ़ भावात्मक तथा कृष्णास्य हू कहत हैं। और वर वपु संयोगात्मक स्वरूप है । संयोगात्मक स्वरूपसो अनुभव संयोगकी क्रिया द्वारा और उद्धीपन भावात्मक सामग्री द्वारा होय है और विप्रयोगात्मक अमूर्त सुधास्वरूपको अनुभव भाव द्वारा होय है। अर्थात् विप्रयोगात्मक स्वरूप भावात्मक है। तासू यह स्वरूप को अनुभव भी भाव द्वारा भावात्मक रीतसूं होय है।

विप्रयोग स्वरूप के अनुभवमें बाहर की क्रिया की अपेक्षा नांही है। तैसे बहार प्रगट स्वरूप की भी अपेक्षा नाही है। श्री वल्लभको अमूर्त सुधास्वरूप धर्मी विप्रयोगात्मक है। आपके या स्वरूप के श्रीमुख लावण्यता के पानमें ही रतिकेली के विचित्र विविध अनंतभावों को आस्वादन होय है। यह स्वरूपानुभव में संयोगदल जैसे बाहर की प्रक्रिया की अपेक्षा नाही। संयोगलीलामें बाहर क्रिया ते रमण सुधा को अनुभव होय है। सो रमणात्मक सुधा को स्वतः सिद्ध मूर्तिमान स्वरूप

श्रीवल्लभ विरहाग्नि है। याको ज्ञापक नाम तत्सार भूत रास स्त्री भाव पूरित विग्रह है। तातें आपके अमूर्त सुधास्वरूप के श्रीमुख के दर्शन मात्र सू भाव द्वारा ही (भावात्मक) रमणात्मक सुधा को अनुभव होयवे लगे है। जैसे सर्करा (साकर) मूर्तिमें रस और स्वाद न्यारे नहीं है, अथवा मिश्री की केली मुखमें रखवे मात्र सू सुधास्वाद को अनुभव होयवे लगे है। ताके लिये क्रिया की कोई अपेक्षा नहीं है। तैसे आपके अमुर्त सुधास्वरूप के अनुभव में बाहर की क्रिया की कोई अपेक्षा नांही है । आपको यह अमूर्त सुधा स्वरूप ही ऐसो विलक्षण है ।

तातें श्री हरिरायचरणने शिक्षापत्र अंतिममें कह्यो है कि, **श्रीस्वामिनीभाव भगवद्भाव युक्त चापि विलक्षणम्!** अनंत युगलों की रतिकेली विहार मंथन सू निकली भई सारभूत सुधा ताको ही मूर्तिमान घनीभूत स्वरूप कृष्णास्य श्रीवल्लभ हैं। तामें रतिरस के स्वतः सिद्ध स्वरूप होयवे ते आपके यह स्वरूपमें क्रिया की अपेक्षा नांही तातें आपके मूलसुधा स्वरूपको 'महाफल' कह्यो है। [1]किस अनंत युगलों के क्रिया विहार प्रकटित सुधा ते आपको विग्रह पूर्ण भयो होयगो। ऐसे नहीं जाननो परंतु आपश्री वल्लभ पूर्ण सू ही यह सुधा ते स्वतः सिद्ध है। अतः यह स्वतः सिद्ध सुधा स्वरूप ते ही रासस्त्रीओन कू भी पूर्ण कियो है। आपको विग्रह तो पूर्व सू ही यह सुधाते स्वतः पूर्ण है ।

'रास स्त्रीभाव पूरित विग्रह' यह नाम आपके स्वतः सिद्ध करावेको परिचयको अर्थ है । श्री हरिरायचरण ने जहां जहां

---

१. सुधा कोई साधन को फल नहीं स्वतः फलस्वरूप अर्थात् स्वतः पुरुषार्थ रूप है ।

आपके संबंधमें 'महा' शब्द जो राख्यो है सो आपको अमूर्त सुधास्वरूप के लिये ही समजनो । जैसे कि श्री वल्लभ 'महासिंधु' समान तथा प्रकटे पुष्टि महा रसदेन तथा पांच महारसको न मूढ मति जीत तीत चित्त भटकावे हो...

रसिक 'महानिधि' पाय और फल मन वच कर्म न चहे तथा आन्तरस्तु 'महाफल' और स्वयं को नाम भी श्रीमहाप्रभु हैं। ऐसे आपके मूल सुधास्वरूप को अनुभव करिके श्रीहरिराय चरणने महा संबोधन मूर्त अमूर्त घनीभूत सुधास्वरूप प्रति दियो है। तातें चापि विलक्षणम् कहत है यह आपके स्वरूपकी विलक्षणता है। ये विलक्षणता स्वकीय जन कू ढूंढवे योग्य है क्योंकि आपकी लीला 'सर्वाज्ञात' है और 'अतिमोहन' भी है। महाभाग्यवान विरलजन कूं ही श्रीवल्लभआश्रय 'पति' भाव ते प्राप्त होय है। परमानंद काहू के पति नहीं होय हैं और जिनके यह परमानंद स्वरूप पति भये ऐसे स्वकियेनके भाग्य को कहा कहनो ? तांसू महानुभावाने कह्यो है कि, 'जिनके भाग्य फले या कलीमें शरण सोई जन आवे ही' और वल्लभ ग्रही भाग्य को पार नाही भजो कृष्णदास अंतर्यामी, श्री वल्लभवर के, चरणकमल को रुहराग (मकरंद) को पान अति दुर्लभ है। तातें "**दुराराध्य दुर्लभांघ्रिसरोरुह**" नाम प्रकट कियो है। यह्रा दुर्लभ को अर्थ सर्वथा आपके चरणकमलकी प्राप्ति नहीं होय है, ऐसे ये दुर्लभ चरणकमल हैं, ऐसे नहीं परंतु महत कष्ट सू जिनको स्वरूप प्राप्त होय है ऐसे यह दुर्लभ चरणकमल हैं, जिनके पति वृत्त भावि विरहीजनके लिये और आपके स्वरूपाविरिक्त सर्वको परित्याग

करवेवारे स्वार्थोजित स्वकियेनकु दुर्लभ भी सुलभ है।

संयोगभाव वारे के जामें स्वसुख की अपेक्षा मुख्यातः रहे हैं। इनके लिये आपश्री वल्लभ के चरणकमल को महामधुर मकरंद अति दुर्लभ है और स्वरूपातिरीक्त सबको परित्याग करीके विरह की काष्टवत दशा कु भोगके अपने हृदय घट कु परिपक्व जिनने कर लिये हैं ऐसे रसिक विरहीजन ही श्रीवल्लभ चरण के दुर्लभ 'रुह राग' को भोग सके हैं, क्योंकि आप महा अलौकिक देवाधिदैव है। श्रीपरमानंददासजी कहत हैं कि, "श्रीवल्लभ स्वरूप दुर्लभ पैवो ऐसे होते छते नाथ के नाथ, अनाथ के बंधु अवगुणचित ना धरे । पद्मनाभदासजी को आपुनो जानके बुडत कर पकरे आपको शरण आश्रय दुर्लभ है। तोउ विरह के दुःखते जो भक्त दीन भये हैं तापे करुणा करके ढरी पड़े हैं। ताके बंधु होय के रहे हैं विरह के दुःख से कातर भये जनके पाछे पाछे डोलत हैं। ऐसे आप 'महाकारुणिक' हैं।

शंका :- ऊपर कहे के श्रीमहाप्रभुजी को शरण आश्रय अति दुर्लभ है। सो तो सांच परंतु दैवी जीव के लिये शरण के द्वार प्रभुने खुले ही राखे हैं। तो आपके चरण शरण दुर्लभ कैसे कह्यो जाय ? तहां कहत है कि जो आपको मूल स्वरूप अमूर्त सुधा मूर्ति है सो भावात्मक साकार सुधास्वरूप को शरण आश्रय अति दुर्लभ है क्योंकि लीलाधाम में हू यह अमूर्त सुधा स्वरूप लीला परिकर समस्त में सबकी आत्मारूपते अव्यक्त पने रहत है। लीलाधाममें हू बाहर प्रकट नाही है ऐसो आपको अव्यक्त - भावात्मक अमूर्त सुधास्वरूप है। यहां अमूर्त को अर्थ बाहर प्रकट नहीं परंतु समस्त लीला

परिकर के भीतर भावात्मक साकार सुधास्वरूपे सर्वान्तर स्थित जाननो। तातें आपके चरणकमलको आश्रय अति दुर्लभ कह्यो है। या (सु-१-४४-२१) में उद्धवजी के वाक्य विरहभाववती गोपीजन प्रति हैं सो श्लोक,

सर्वात्मभावो ऽ धिगतो भवतिनाम धोक्ष जे ।
विरहेण महाभागा महान्मेऽनुग्रहःकृतः ॥

हे महाभागे अपने विरहमें सर्वात्मभाव कियो। जहां इन्द्रियां पहोंच नहीं सके दृष्टि ते अगोचर ऐसे अमूर्त (भावात्मक) स्वरूपमें आपने एकादश इन्द्रीयन ते सर्वात्मभाव सिद्ध कियो यह भाव संयोगमें (बाहर प्रकट स्वरूपमें) तो होय सके परंतु आपने तो विरहात्मक - भावात्मक - अमूर्त स्वरूपमें यह सर्वात्मभावकियो तातें आप महाभाग्यवान हो ऐसी श्री गोपीजन प्रति उद्धवजी स्तुति करे हैं। तातें यह अमूर्त सुधा स्वरूप को आश्रय शरण सिद्ध करनो परम काष्टापन्न है। केवल श्री वल्लभ की पूर्ण कृपा प्रमेय बलते ही आपको शरण आश्रय सिद्ध होय है। जाप आपकी कृपा है सो जन अहर्निश विरहानुभाव में स्थित रहे है ताको शरण आश्रय सिद्ध होय है । श्रीवल्लभ प्रभु की प्राप्ति को साधन विरहानुभाव ते प्रकट भयो दैन्य ही है और दीनता प्रभु के वियोग दुःख के अनुभव ते होय। सो श्रीहरिरायचरण कहत हैं कि दीनता मात्र संतुष्ट, दीनता मात्र बोधक दीनता पूर्ण हृदयः । दैन्य ही मात्र आपकी प्रसन्नता को साधन है। दैन्य ही ताको उपदेश करे है आप दैन्य ही करे हैं। आपको स्वयं हृदय दैन्यभावते पूर्ण है। या दैन्यभाव माधुर्य स्नेह को मूल है दैन्यभाव में ही मार्धुयता रही भई है और

आप मधुर रस के भोक्ता मधुराधिपति हैं। लीला परिकरमें जितनी माधुर्यता है ताके दाता और भोक्ता श्री वल्लभ हैं । तातें विरह दुःखते प्रकट भयो एक दैन्यभाव ते ही आप प्रसन्न हो जात हैं। और आप प्रसन्न होयके अपने स्वयं को अदेय स्वरूप ताको दान करे हैं। तातें भूतल स्थित वल्लभीजनों को जैसे दैन्यभाव प्राप्त होय सोई उपाय करनो। समस्त साधनो को फल दैन्य है। या सेवा स्मरण गुणगान स्वरूप चिंतवन आदि जो भगवद् धर्म के आचरण रूप साधन कियो जाय है सो दैन्यभाव सिद्ध करवे के लिये ही है। दैन्यभाव ऐसो दुर्लभ पदार्थ रूप है और पुष्टिमार्ग में प्रभु प्राप्ति को सर्वस्व साधन है, तातें दैन्यभाव की प्राप्ति को ही विचार राखनो और प्राप्त दैन्यभाव को रक्षण करनो। पुष्टि प्रभु जाको अंगीकार करे हैं। ताको दैन्यभाव में वृद्धि करे हैं। दैन्यभाव के विरोधी अभिमान कू दूर करे हैं। अपुनो जानके दंड देवे हैं। श्री वल्लभ महा उग्र प्रतापी हैं। वे कोउ साधन ते प्राप्त नहीं होय हैं। साधन जो भगवद् धर्म रूप सेवा स्मरण गुणगानादि सो तो करनो स्वधर्म है। यह साधन मैं करूं हूं अथवा यह साधन के बल ते मोकू प्रभु प्राप्त होइगे सो मनमें नहीं राखनो अथवा अलौकिक पद साधनो निस्साधनभाव को स्फूर्ति कराय के दैन्यभाव कुं प्राप्त करावे हैं। सो दैन्य भाव ते ही आप प्रसन्न होय के समस्त प्रति बंध दूरी करी के आपुनो (स्वयंको) जो अदेय स्वरूप ताको निजजन को दान करे हैं या दैन्यते प्रसन्न होय प्रभु भक्तनको आधिदैविक स्वरूप सिद्ध करके अपनी साक्षात् सेवा के योग्य बनावे हैं। यह दैन्य तापात्मक भाव संयुक्त सेवा स्मरण

गुणगानादि करवे ते सत्वरे सिद्ध होय है। क्योंकि तापभाव दैन्य के प्रकाश करवेवारो है। तातें आपके कृपापात्र तदीय जन के साथ गुणगान करवे सू आपके स्वरूपमें आसक्ति बढ़े है तापभावकी वृद्धि होय है। या तापभाव सू दैन्य प्रकटे है। ताते श्री हरिरायचरण ने ११वें शिक्षा पत्र में आज्ञा करी है कि, गुणगान, दुःख भावन,दीनता,और त्याग यह चारों साधन सिद्ध भक्तन के कर्त्तव्यरूप है। गुणगान तें स्वरूपासक्ति होय है। और स्वरूप परोक्ष होयवे सू दुःखभाव प्रकट होय यह दुःखते दैन्यता होय और दैन्य ने प्रसन्न होय दीनबंधु प्रभु भौतिक आध्यात्मिक, आधिदैविक समस्त प्रतिबंध दूर करी के लीला योग्य देह को दान करी अपनी नित्य लीला में स्थित करे है, यही त्याग को स्वरूप है ।

अर्थात् भक्तन के भौतिक देहादिक प्रपंच को दूर करीके आधिदैविक देह सू लीलाप्रपंच में प्रवेश करावनो ये ही त्याग को स्वरूप है। जैसे ब्रज सिमंत नीजको गोपीगीत पश्चात दैन्य प्रकट्यो। ता दैन्य ते प्रभु प्रकट होय के महारास में स्वरूपानंद को दान कियो। पश्चात गोपीजनों को लीलाधाम में प्रवेश भयो तैसे रसात्मक लीला चरित्र के गुणगानते तापात्मक प्रकट होय के दैन्यता सिद्ध करे है। तब प्रभु प्राप्तिरूप परम पुरुषार्थ सिद्ध होय है। तातें वल्लभीजनको संग दैन्य फल कू प्राप्त करावेवारे (फलरूप) कह्यो है और वल्लभीजन तिनके कहैं है। जे अहर्निश प्रभुनके विरह में भींज्यो रहे। जामें विरह को दुःख तापक्लेश है। तामें श्रीवल्लभ तापात्मक स्वरूपसू तिनके हृदयमें भावात्मक स्वरूप बिराजे हैं। ऐसे विरल भगवदीय

श्री वल्लभ कृपा ते प्राप्त होय तो तामें स्नेह को भाव स्थापन करनो। तन-मन-धन से ताकी टहेल करनी यातें श्रीवल्लभ की प्रसन्नता होय हैं। ऐसे तदीय जन में कबहू दोष भावना नहीं लावनी तातें कह्यो है कि, **भगवदीय जन सत्संग को अनुसरे ना देखे दोष अरू सत्य भाखे** और निवेदन नवरत्न ग्रंथ में आपने आज्ञा करी है कि,

“निवेदनं तु स्मृतर्व्य सर्वथा ताद्रशजनै,” पुष्टि प्रभुन को अपनो सर्वस्व निवेदन कियो है। सो प्रभुन को स्वरूप कैसो है ? ताकी लीला कैसी ? ताको आनंद कैसो है ? और मेरो कहा स्वरूप है ? और मेरो कहा कर्त्तव्य है ? प्रभु प्राप्तिमें कहा-कहा बाधक है ? कहा कहा साधक है ? यह सब प्रकार को ज्ञान तादृशीजन के संग सूं होय तासूं आपने तादृशीजन के संग मिलके निवेदन को स्मरण करवे की आज्ञा करी हैं तादृशी के संग के अभाव में श्रीवल्लभ को जामें गुणगान है ऐसे महत करुणात्मक श्रीमत्प्रभुचरण, श्रीगोकुलनाथजी, श्रीहरिरायचरण, श्रीपद्मनाभदासादिक की वाणी को अति आदर सो अवलोकन करनो श्रीवल्लभ को तापात्मक स्वरूप महत उपरोक्त पुरुषों की वाणी में रह्यो भयो है।

तासू यह वाणी के अवगाहन करवे सूं श्रीवल्लभ को भावात्मक स्वरूप अपने हृदय में सिद्ध होय है। जैसे वेणुनाद द्वारा ब्रजभक्तोनके हृदयमें नटवर वपु स्वरूप को प्रवेश भयो। तेसे महापुरुषों की वाणी में वेणुनाद रूप ही है यद्यपि ये वाणी में समज न पड़े तो श्री सर्वोत्तमजी को सतत पठन विशुद्ध बुद्धिते विरह दैन्यभाव सहित मार्ग मर्यादामें स्थित

होय के करते रहनो, यद्यपि श्री सर्वोत्तमजी के पाठ ते काहू ज्ञान न होय तो श्रीवल्लभ नाम अथवा अष्टाक्षर को अवलंबन करके सतत भगवद नाम को स्मरण करते रहनो तासूं दैन्यभावको प्रकाश होयगो। कारण के दोष के निधिरूप कलियुग में और साधन ना करे तो श्री हरिको नाम सर्व प्रकार के दोष को नाश करे हैं। दैन्य भाव सिद्ध करे है।

तातें भगवद्नाम को स्मरण उत्तम अवस्था में अथवा दीन अवस्था में छोड़ नो नाही। तासूं भगवद्नाम अलौकिक अग्निरूप होयवे सूं दैन्य को प्रकाश निस्संदेह करे है और यह दैन्यभाव सिद्ध भये करुणानिधि श्रीवल्लभ अपने लाड़ीले कृपा पात्र जन को संग हू मिलाय देंगे। जहां तक दैन्यभाव नहीं तहां ताउ श्रीवल्लभ के अंतरंग जन को संग सर्वथा दुर्लभ जाननों श्रीगोपीजन कू विरह दशा में जब दैन्य प्रकट्यो तब उद्धवजी को संग प्राप्त भयो उद्धवजी कू भगवान् ने ही पठाये हैं अथवा उद्धवजी के निमित्त में भगवान् ही पधारे हैं तेसे वियोग दुःख के अनुभव पूर्वक प्रभु की सानिध्यमें रहवे सू जब दैन्य प्रकट होय तब आपके जन को संग आप करुणा करके मिलाय देवे हैं।

तब इनके फलात्मक संग सो श्रीवल्लभ के स्वरूप में दृढ़ आसक्ति होय है तासूं संग ही अभिलाषा मन में राखनी ऐसी निरोध ग्रंथ में श्रीवल्लभने आज्ञा करी है और जहां ताई प्रभुन के स्वरूप में व्यसनभाव नहीं भयो है वहां ताई मन की स्वतंत्रता राखनी बाधक है। यामें एक तो अभिमान बढ़े है और स्वयं के दोष की स्फूर्ति हू नहीं होय है। ताते साधन

दशामें महत पुरुषों की वाणी की आधिनता राखनी अथवा श्रीवल्लभ के कृपापात्र जन जो भुतल में बिराजते होय ताके आश्रय में रहनो। तदीयजन के आश्रय में किंचित हू पराश्रय नहीं समझनो। कारण के ऐसे तदीयजन तो सदा श्रीवल्लभ कू (सू) वेष्टित रहे है।

विरही रसिक वल्लभी जन सूं श्रीवल्लभ एक क्षण दूर नहीं रहे हैं। तासूं ऐसे तादृशीजन के संग की अभिलाषा मन में राखनी। अब आपके उभय चरण कमल के चिन्ह को जो वर्णन कियो है ताको वर्णन करवे सू महात्म्य पूर्वक सुदृढ़ स्नेह श्री वल्लभ प्रभु में होय है। महात्म्य जाने विना सर्वथा अधिक सुदृढ़ स्नेह श्रीवल्लभ प्रभु में और अनन्य भाव, आश्रय सिद्ध नाही होय है। कारण के आधुनिक सृष्टि में सहज स्नेह को अभाव है। तातें आधुनिक भक्तोन कूं तो महात्म्य जानवे सू ही स्नेह की दृढ़ता होयगी।

और जैसे वेदातीत रसात्मक पुष्टि पुरुषोत्तम को महात्म्य श्रीवल्लभ ने श्रीसुबोधिनीजी ग्रंथ में प्रकट कियो है तैसे शब्दातीत, ब्रह्मांडातीत, अक्षरातीत, और किमबहू ना रसात्मक त्रिगुणात्मक विलास ते हू परे गुणातीत परम निरोध स्वरूप श्रीवल्लभ को माहत्म्य श्रीमत्प्रभुचरण, श्रीगोकुलेशजी, श्रीहरिरायचरण और श्रीपद्मनाभादिक कोटि में विरल महानुभावों ने अनेक स्तोत्रों और पदों द्वारा प्रकट कियो है श्रीवल्लभ को माहात्म्य उपरोक्त महत पुरुषों की वाणी द्वारा हृदय में स्थित होय ज़ायवे सूं श्रीवल्लभ प्रभु में सुदृढ़ स्नेह होयगो। अनन्य पतिवृत भाव सिद्ध होयगो यह पतिवृत भाव

सू श्रीवल्लभ वशीभूत होय जाय है। तासू दैन्यभाव सहित आपके चरण चिन्ह को ताके प्रभाव सहित हृदय में धारण करनो। अब आगे कहत हैं कि,

यह तोरण चिन्ह रजोगुणी हैं रजोगुण में ते प्रवाह की नांई रसात्मक भाव प्रकट होय है। तासु स्वरूप माधुर्य को अनुभव होय है । (रजो गुण में सुं जो रसात्मक भाव प्रवाह की नाई प्रकट होय हे। यह रसात्मक भावों को प्रवाह साधन दशा वारे भक्तन के देह, प्राण, इंद्रीय, अंतःकरण और आत्मा में प्रवेश करके आधिदैविक देह सिद्ध करे दे है) तासू पूर्ण पुरुषोत्तम के साक्षात स्वरूप के साथ रसानुभव की योग्यता सिद्ध होय है।

अशेष भक्त संप्रार्थ्य चरणाब्ज रजोधन

जैसे लौकिक में धन से ही समस्त भोग और व्यवहार सिद्ध होय है तैसे अलौकिक जगत में आपके चरणकमल की रज रूपी धन से अलौकिक समस्त सुख भोग की प्राप्ति है और जैसे जीवात्मा मे देह और आत्मा न्यारे न्यारे हैं तेसे परब्रह्म के लिये नहीं है। परब्रह्म को समस्त विग्रह आत्मा रूप है। इनके विग्रह में आत्मा विना और कछु है ही नहीं या सिद्धांत सू श्री वल्लभ के चरण कमल के रज की एक कणीका भी आत्मा रूप है। और आत्मा के दो विशेषण सदा स्मरणीय है। एक तो व्यापकता को, दूसरा सागरवत को। व्यापकता के विशेषण सूं आपके चरण कमल की रज में रसात्मक ब्रह्मांड की स्थिति है और सागरवत के विशेषण सुं पुष्टि प्रभु की लीलाभावों की सागरवत सिद्धि आपके चरणकमल की रज में है। तासूं पद रज अशेष भक्तन के

परम धनरूप हो यामें कहा आश्चर्य...? और यह रज ही रसात्मक रजोगुण को स्वरूप है यह रजोगुण में सूं प्रवाह की नांई रसात्मक भाव प्रकट होय के भक्तनको आधिदैविक देह सिद्ध करे है भगवदीय देह की सिद्धि करायवेवारी आपके चरण कमल की रेणु है और यह रजरूप रसात्मक रजोगुण-संयोगदल वारे भक्तन में संयोगात्मक भक्ति सिद्ध करे है और विप्रयोग दल वारे भक्तन में स्वतंत्र भक्ति सिद्ध करे है। ऐसे परम पुरुषार्थ रूप परमधन फल आपके चरण कमल की रेणु है। वल्लभीओं कु सदा यह रज ही प्रार्थनीय है।

आंगे कहत हैं, फल में ही रसालता है। आस्वाद हैं। तासु आम्र पल्लव तोरण जताय रह्यो है। और कटि किंकणी तोरण तो मदन-सदन की वंदनवार आलंबन रूप है और आम्र पल्लव तोरण उद्दीपन भाव रूप है। या प्रकार तोरण चिन्ह को भाव हृदय में धारण करनो और हू रसरूप भावना तोरण चिन्ह की अनेक है। कितनो वर्णन कियो जाय? आपके चरण के प्रत्येक चिन्ह में अगाध रस भर्यो है। ताते बड़ो ने किंचित वर्णन कियो है। सागर में जो डुबे सोई सागर को अनुभव कर सके । बड़ो ने किंचित वर्णन करके सागर को स्वरूप ज्ञान करायके सागर के तट पर जीवोन कुं ठाड़े कर दियो है । अब सागर में कुद पडनो यातों तट पर ही ठाडे रहनो यह जीव के हाथ बात है । स्वरूपासक्ति दृढ़ जब होय तब पुष्टिप्रभुन को निरवधि आनंद अनुभव में आय सके और स्वरूपासक्ति की द्रढ़ता के लिये ही चरण चिन्ह को महात्म्य को वर्णन बड़ोंन ने वर्णन कियो है ।

तोरण चिन्ह को धोल

पांचमुं चिन्ह तोरण नव पल्लव, मंगल रूप ए कहिएजी।।
नंदालय अरु निकुंज लीला ना, विविधभाव तेमां लहियेजी।।
जन्म उत्सव अने विवाद उत्सव, तोरण शोभे बारेजी।।
पुष्टि पथ नुं द्वार जे छे ते, श्री वल्लभ पद ने जाणोजी।।
ते थी चरणे चिन्ह धर्या छे, पुष्टि द्वार ए मानोजी।।
दश धर्म अने दश मर्म, जेने आश्रय जानोजी।।
ते श्री वल्लभ पद आंबुज गही, पुष्टि मारग चालोजी।।
ए भावे नव पल्लव तोरण, धरिया चिन्ह ओ वालाजी।।
जे-जे दैवीजीव हताते, ए द्वारे थई चाल्याजी।।

.....यह तोरण चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो....

* * *

सुखदवल्ली

दक्षिण चरण में छठुं चिन्ह सुखदवल्ली है ताको भाव कहत है,

यह सुखदवल्ली चिन्ह अद्भुत है। सो श्री वल्लभप्रभुजी ने अपने चरण में धारण कियो है। **"प्रतिक्षण निकुंजस्थ लीला रससुपूरितः"** यह नाम के भाव रूप नौतन नौतन लीलारस सुं सिंचित भई थकी अनेक लीला स्वरूपन सुं फुली फली यह सुखदवल्ली है। श्री वल्लभाधीश के संगम को महासुख है। सो केवल संगम मात्र को ही सूखदान करवे वारे आप नहीं है। परंतु प्रतिक्षण अधिक अधिक रमण सुख के देयवे वारे है। यह भाव को जतायवे वारी यह सुखदवल्ली है तैसे ही वियोग समे सुखदवल्ली अति उत्कंठित हो रही है। तहां जैसे प्यारीजी के वियोग समे श्रीठाकुरजी वियोग को अनुभव करे हैं और मान छुटवे समय प्यारीजी को अचानक पधारिवो जानी श्री प्यारीजी के दर्शन ते जो क्षण क्षण में सुख होत है। ताके कारण रूप यह सुखदवल्ली है। सो श्रीवल्लभ के आश्रीत को ही यह सुखद है। औरन को सुख देयवेवारी तथा सबन के सुख को समूह रूप सुखदवल्ली श्रीवल्लभ प्रभु ने चरण में धारण करी है। (उपरोक्त कथन सू अनंत रासादि लीलामृत जलधिओं के सुख की रास आपके

चरण कमलमें ही है यह अर्थ भयो)। सो श्रीमत्प्रभुचरण वल्लभाष्टक में वर्णन कियो है कि,

स्फूर्जद् रासादि लीलामृत जलधि भराक्रांत सर्वोपि शाश्वत

रासादि लीलामृत समुद्र एक नहीं परंतु अनंत है। सो अनंत लीलामृत समुद्रों के सुख की रासते सुखदवल्ली चिन्ह पूर्ण है। तातें आपके अचिंत्य अनंत शक्ति युक्त रसात्मक ऐश्वर्य को वर्णन श्रुतियन सूभी अगम्य है। मूलधाम में आपके चरणकमल स्वकीय जनकू निरवधि सुखते सेव्यमान है आगे कहत है के जैसे पुरुषोत्तमक्षेत्र कहे जाय है। सो श्रीकृष्ण के हृदयरूप क्षेत्र कू श्रीस्वामिनीजी अपने नेत्र कटाक्षरूप हल सूं एक बेर खेड़े हैं और कमलरूप युगल कुच में मीडीता करके विषमता हर करीं के सन्मान करत हैं तदनंतर हास्यरूपी अमृत करीके वारंवार सिंचत है, फेर सखीजन नाना वाक्य करीके श्री प्यारीजी के उत्कर्ष वर्णनरूप बीज बोवत है ता पाछे वा खेत रूप श्रीकृष्ण हृदये आशामयी कोई एक अपूर्व वल्ली उदय होत है श्रीस्वामिनीजी के पधारवे को निश्चय सखीजन सू श्रीठाकुरजी सुने हैं। सो वल्ली की अंकुरितता है ऐसे सुखदवल्ली फूली रहत है। क्योंकि श्रीस्वामिनीजी चरण सूं सदा रस भाव करिके पूरित हैं। और श्रीस्वामिनीजी को देख देख के ये फूले हैं। यह वेली निपट रसीली है। याकी मकरंदता युगल स्वरूप में है।

ऐसे अनंत युगल के प्रणय रस मकरंद ते श्रीवल्लभ निकुंज समस्त पूरित हे रही है (**'नमामि हृदये शेषे लीला क्षिराब्धि-शायनम' यत्र प्रमाण है)** विविध आभरण और वार्तालाप है सो प्रथम उदय पत्र हे पधारवेके मार्ग में यह वेली भूमि में प्रसरी है। (रसात्मक लीलाधाम की भूमि हू रसरूप है) सो युगल की जीवन मूरी (मूडी) है। पाछे श्री प्यारीजी के दर्शन सो सुखदवल्ली को पुष्प होंठ चुंबन, अलिंगन, दंतक्षत, अधरखंडन, स्पर्श, हास्यादिक फल है। ता पाछे प्रेम सह-हास्य-विनोद रीत विपरीत सुरत होत है। सोई सुखदवल्ली के सुन्दर फल को रस है। ऐसे सुखदवल्ली के स्थानरूप श्री वल्लभ चरणकमल छायांतर विश्राम करते थके श्री ठाकुरजी अपने सुख की अवधि यही चरण में माने है। अर्थात् सर्व कृत को सिद्ध फल प्राप्त मानत है तब श्री प्रियाजी हू परम सुख को अनुभव करत है। ता समें अंतरंग सखीजन महोत्सव मनावत है। निकुंज निकुंज प्रीत महोत्सव होत है। ऐसे श्रीवल्लभ चरणगत सुखदवल्ली के आश्रित होय के नवकिशोर श्रृंगार रसात्मक कृष्ण निरवधि परम रसानुभव करे हैं यह सुखदवल्ली अन्तरगत जो रसानुभव है सो केवल रसिक भक्त ही कर सके हैं। औरन कू यह भाग्य नहीं। श्रीवल्लभ आश्रित कृष्ण भक्त जा पे श्री वल्लभ कृपा करे ऐसेन कू ही जानिवे योग्य है। आपकी जा पर कृपा है ताकू ताप भाव को दान कर रसलीला योग्य देह-प्राण-इन्द्रिय-अंतकरणादि में सर्वात्मभाव सिद्ध कराय लीला में प्रवेश कराय है। इनके लिये महात्मीक स्नेह गोण है। उपरोक्त प्रकारे युगल को सुखदान करवे वारे श्रीवल्लभ प्रभु है। तामें

सुखदवल्ली कारणरूप है और ता भाव कू दिखायवे वारे पताका और तोरण चिन्ह हैं या प्रकार तीनों चिन्ह की एक संगति है सो पद्मनाभदासजी पद में कहे है कि,

नंद सुवन सुख अवधि यहांइलो...

श्रीवल्लभ प्रभु में ही नंद सुवन श्री ठाकुरजी के सुख की अवधि (सीमा) है. ताकू जतावे वारी सुखदवल्ली है। सो यह वेल उभय (संयोग-वियोग) भावरूप उभय युगल स्वरूप में फेल रही है तातें कह्यो -

कनक वेल वृषभान नंदिनी श्याम तमाल चढ़ी...

विपरीत रमण सोई श्याम तमाल पर चढतो है। यह सुखदवल्ली रमण विलास सुख के अगाध समुद्र तुल्य है तातें अवर्णनीय है लीलाधाम में अनंत श्री स्वामिनीजी है। तिनके भावात्मक कृष्ण अनंत है। ऐसे अनंत युगल के रमण विहार रस सूं पूरित सुखदवल्ली है तातें अनिवर्चनीय हैं (उपरोक्त वर्णन धर्म संयोग और धर्मी संयोग विहार सुख को भयो) धर्मी विप्रयोगात्मक जामे केवल कृष्णास्य स्वरूप को विलास है सो पृथक है। यह विलास अवर्णनीय है। अनुभव वैद्य है। संयोगात्मक अनंत रासादिलीलारस के भोक्ता कृष्णास्य देव हैं। ऐसे अनंत कृष्णास्य स्वरूप को मूल घनीभूत सुधा स्वरूपे जामें विलास है यह धर्मी विप्रयोगात्मक अवस्था वाम श्री स्वामिनीजीओं में है सो तो केवल अनुभव वेध है। जाको ज्ञापक नाम **'स्वानंद तुन्दिल'**! है यह स्वरूपानुभव में दान-मान-पनघट आदि लीला को समावेश नहीं। धर्मी

विप्रयोग में तो केवल स्वरूप को ही अनुभव है या प्रकार सुखदवल्ली चिन्ह संयोगात्मक विप्रयोगात्मक सुख समूह ते पूर्ण है यह सुखदवल्ली को उर्ध्वरेखा हू कहत है जैसे ब्रज की यात्रा ब्रज की लीला तत्व रूप है और श्रीमहाप्रभुजी की बैठक के अनुसार है सो उर्द्धरेखा श्रीठाकुरजी के मन में समाय रही है स्फुर्जद रासादि लीलामृत जलधि भरिता श्रीवल्लभ प्रभु हैं तातें यह उर्द्धरेखा को स्वरूप कोइ पार पावत नाही, याको ध्यान ज्ञान जे कोई हृदय में धारण करे ताकूं मन वांछित फल प्राप्त होय है और स्वतंत्र भक्ति को दान होय, अथवा उर्ध्वरेखा उर्ध्व गति प्रकटावे है। लीला में सू पतन नहीं होयवे है उर्ध्व रेखा सं उभय भावात्मक (संयोग-विप्रयोग) विलास को अनुभव होय, तथा भक्ति हृदय में बिराजे काल-कर्मन को बंधन छूटे यह रेखा लंबी ब्रज कू सुख दानार्थ धारण करी है (ब्रज कहवे ते स्वकीय जन को हृदय सो भक्तन को हृदय पुष्टि प्रभुन के बिराजवे को गोलोक धाम है)

जब पंच-पर्वा अविद्या की निवृत्ति होय है। तब पुष्टि प्रभु कोटिशः लीलासहित वेभक्त के हृदय में प्रादुर्भुत होय है। जाको वर्णन वेणुगीत-युगलगीत की श्रीसुबोधिनीजीमें कियो है। जैसे श्रीयमुनाजी-गिरीराजजी लंबे हैं और भक्तन कू लीला सहायक है तेसे युगल स्वरूप तथा सगरे भक्तनके सुखदानार्थ श्रीवल्लभ ने उर्ध्वरेखा धारण करी है। सो यह उर्ध्वरेखारूप श्रीयमुनाजी लीलाधाम तांई महालंबी मानो

पुष्टि मार्ग की निसेनी है। तातें श्रीयमुनाजी स्वरूप यह रेखा अगाध है। जैसे श्रीयमुनाजी रासादि लीला श्रम जल को धारण करवे वारे हैं। तैसे यह उर्ध्वरेखा है। जैसे श्रीयमुनाजी अष्ट सिद्धि दाता है तैसे ये उर्ध्वरेखा हू अष्टसिद्धि दाता है। कहवे को तात्पर्य ये है कि जो जो धर्म श्रीयमुनाजी मे है सो सब धर्म उर्ध्वरेखा में है।

उर्ध्वरेखा अमृत रसधारा अति आनंद उर में बहावे है। भक्त हृदय में सदा-सर्वदा रस सरिता रूप बहत है। तिलक के मिषते यह रेखा मस्तक पे धरी जाय है। तातें उभय लोक-भूतल और (लीलाधामँ) ते पतन न होयवे देय है। श्री वल्लभ चरण कमल में जीवकी मति है तिनकी कबहू अधोगति नहीं होय। सो उर्ध्वरेखा जतावत है और वायु तथा लहेर रमण के लिये बंधादि में सुखद हैं तेसे ये श्री यमुनाजीस्वरूप यह रेखा हू सुखद है।

रेखा के बीच में रस की सरिता बही रही है तातें श्रीयमुनाजी युगल को तथा लीला परिकर को समस्त पुष्टि धाम में करवे वारे है। श्रीवल्लभ को मूल स्वरूप स्वतंत्र भक्ति रूप है और स्वतंत्र भक्ति धर्मी विप्रयोगात्मक है (धर्मी विप्रयोग कहवे वे जीनकी दान, मान, पनघट आदि लीलाओं में सू निकस के केवल स्वरूप में आसक्ति है और केवल स्वरूपानंद को स्थायी अनुभव जो कर रहे है तिनकू धर्मी विप्रयोगात्मक कह्यो जाय है। अर्थात् बाहर स्वरूप की जीन में अपेक्षा नाहीं और आंतर भावात्मक स्वरूप सू तादात्मक

होय के परम निरोधावस्था में स्वरूपानंद को स्थायी अनुभव करवे वारे भक्त धर्मी विप्रयोगात्मक हैं और जैसो आपको स्वरूप है स्वतंत्र भक्तीरूप तैसे आपके चरण के चिन्ह हू अलौकिक शक्तिरूप और स्वतंत्र भक्ति दायक है ताते यह शक्तिरूप चिन्ह कू अपने हृदय में धारण करवे वारेन कू स्वतंत्र भक्ति में प्रवेश करावे है। जैसो आपको स्वरूप है तेसो शक्तिरूप यह चिन्ह भी जाननो। या प्रकार सो समस्त चिन्ह को ध्यान करके जैसे उर्ध्वरेखा को चिन्ह श्रीयमुनाजी को स्वरूप है और श्रीयमुनाजी को एक स्वरूप अंतरंग योग मायारूप महान शक्ति है। जो एक क्षण में कोटि ब्रह्मांड प्रकट करे तेसो सामर्थ्य योग मायारूप श्रीयमुनाजी में है और भक्तन कू अनुभव कराके लीलाधाम में प्रवेश करावे हैं और रसात्मक अष्ट सिद्धि को दान करे है। तैसे आपके (श्रीवल्लभ) के चरण चिन्ह महान् शक्ति रूप है। और आपके उभय चरण कमल में १५ चिन्ह है तातें इतने ही चिन्ह (स्वामिनीजी, श्रीठाकुरजी) आपके चरण में होंगे ऐसो हू नहीं जाननो ।

भगवद्[1] चरणारविंद के कमल, वज्र, अंकुश, ध्वज को वर्णन करके श्रीआचार्य चरण आज्ञा करे हैं कि ऐसे तो अनंत चिन्ह है तातें परब्रह्म स्वरूप श्रीवल्लभ ऐसे अनंत शक्तिओं कू अपने में धारण करवे वारे हैं। यासू आपको नाम सर्व शक्ति धृक है और वे शक्तियों हू अचिंत्य है। जीवकी

---

[1] (सु. ३-२८-२१)

कल्पनातीत है। श्रुतियाँ हू नेति नेति कहे के आगे परमतत्व की खोज में थक जाय है। और मन वाणी जहां प्रवेश नहीं कर सके है। अति सूक्ष्म दुःग्र्राह्य जाको तत्व है ? ऐसे अंचित्य अनंत शक्तिवारे उग्र प्रतापी श्रीवल्लभ प्रभु है। बड़ोंन ने या स्वरूप को ज्ञान करायवे के लिये किंचित वर्णन कियो है। परंतु आपके अनंत शक्ति युक्त महीमाओ को पार पायो नहीं जाय है। ऐसे ऐश्वर्य वारे श्रीवल्लभ प्रभु है। तातें दुराराध्य आप को नाम है। आपके निरवधि रसात्मक महिमा को वर्णन करवे पुष्टि श्रुति हू समर्थ नहीं कारण के आत्मानुभव स्वरूप केवल अनुभव वेध है। ऐसे आपार जल राशि समुद्र को अंगुली निर्देश करके दिखायो जाय है। परंतु सागर को अंतः (थाह) कोउ नहीं पा सके हैं। तेसे पुष्टि श्रुतिओं ने परब्रह्म स्वरूप श्री लक्ष्मण सुवन को ज्ञान करायवे के लिये अंगुली निर्देश रूप आपको यशोगान कियो है-

एक ब्रह्मांडे जेना यश न माया तेना हुवा कोटि अनंत ।
तोय त्यां थकी वाधियो जई वस्यो मुख श्रीमंत ॥

यहां कोटि अनंत यह 'अनंत' पद की महिमा को अंत नहीं ऐसे परब्रह्म स्वरूप श्रीवल्लभ प्रभु को जानना, ऐसे आपके महिमा को अवगाहन करी आपके युगल चरण कमल को द्रढआश्रय करनो ये ही कर्त्तव्य है ॥

उर्ध्वरेखा चिन्ह को धोल

श्री वल्लभ पद अंबुज कोमल, चिन्ह चरणमां सोहेजी॥
उर्ध्वरेखाको पार न पामे कोई, अंबुज चरण सुमरीयेजी॥
एना ज्ञान ध्यान उर धरशे, ते मन वांछित फल पामेजी॥
सदा स्वतंत्र रहे ते प्राणी, दोष न आवे पासेजी ॥
भक्ति स्वतंत्र उर स्थिर थाये, उर्ध्व गीत प्रकटावेजी॥
लीलामांथी पतन न थाये, उर्ध्वरेखा जे गायेजी॥
तेना तो छे स्वरूप अलौकिक, लहेर लहेर रेखा थायेजी॥
जेम यात्रा वृजनी लहेराता, प्रभुजी ना मन घणु मायेजी॥
वृज लीला नुं रस अमृत जे, उर्ध्व रेखामां ते सोहेजी॥
गुढ स्वामिनी स्वरूप श्रीवल्लभ, वृजजन नुं मन मोहेजी॥
भगवद भावनी अनुभव सिद्ध, भक्ति हृदयमां बिराजेजी॥
काल कर्म नुं बंधन छूटे, चरण कमल शिर गाजेजी ॥
श्री यमुनाजी स्वरूप अगाधते, अष्ट सिद्धि ने देताजी॥
ते सहु उर्ध्वरेखामां पामे, मनना मनोरथनी सिद्धिजी॥
जे प्राणी ना उरमां ए पद, कृपा करी ने बिराजेजी॥
ते जीवने ए रस रूप प्रभुजी, हृदयमां स्थिर करी राखेजी॥
जे पद कोमल भक्त हृदयमां, दृढ़ करी स्थापन करशेजी॥
श्रीयमुनाजी को स्वरूप अलौकिक, रस स्वरूप मन धरशेजी॥
उर्ध्वरेखा रस अमृतधारा, अति आनंद उर मानोजी॥
भक्त हृदयमां सदा सर्वदा, रस सरिता एने जाणोजी॥

.... यहां सुखदवल्ली चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

धनुष चिन्ह

दक्षिण चरणमें सातमो चिन्ह धनुष को है ताको भाव कहत है,

यह चिन्ह वैराग्य गुण वारो है। श्रीठाकुरजी के वाम चरणमें सात चिन्ह है। श्रीस्वामिनीजी के दक्षिण चरणमें हुं सात चिन्ह है। और श्रीमहाप्रभुजीके दक्षिण चरण में हुं सात चिन्ह है।

श्रीठाकुरजी के उभय चरण में १५ चिन्ह है। श्रीस्वामिनीजी के उभय चरण में १५ चिन्ह है तैसे श्रीमहाप्रभुजी के उभय चरण में १५ चिन्ह है। ताको भाव यह जो यद्यपि श्रीमहाप्रभुजी उभय भावात्मक है तोउ आपको श्रीस्वामिनीजी में विशेष आग्रह-पक्षपात है। (पक्षपात को हेतुश्री स्वामिनीजीओ केवल भगवद स्वरूप अतिरिक्त अवलंबन रहित है)

श्रीगोवर्धनधर सब अवतार के शिरोमणी अवतारी हैं। तातें सबन की रक्षा करत है। ऐसे श्रीगोवर्धनधर की रक्षा श्रीवल्लभ करे है। ताते यह धनुष्य चिन्ह ते यह जतायो के जो याको चिंतवन करेगो ताकु प्रथम काल माया ते निर्भय पनो होयगो। तदनंतर स्वरूपानंद दानसू सकल मनोरथ की सिद्धि होयगी, (**शंका**=यहां श्रीगोवर्धनधर की रक्षा श्रीवल्लभ करत है ऐसे कह्यो सो केसे घटे ? **समाधान** = श्रीस्वामिनीजी के मान समे श्रीठाकुरजी सूं श्रीस्वामिनीजी को वियोग सह्यो नहीं जाय है। सो वियोग ताप में श्रीवल्लभ प्रभु अपने स्फुरत प्रेम

माधुरीभाव सूं रक्षण करत हैं ये ही श्रीगोवर्धनधर को रक्षण है) ताते जे कोई यह धनुष चिन्ह को आश्रय करे ताको बिना प्रयत्न श्रीठाकुरजी हृदय में पधारे और विविध ताप की निवृत्ति होय। जे जन श्रीमदाचार्य चरण पत्र की छाया में रहेगो ताकू काहू प्रकार के तापकी संभावना नाहीं है।

धनुष है सो अग्नियास्त्र बाण जैसो है ता करि भक्तनके द्वेषी को सम्यक प्रकार जताय देते है फेरि भूल के हू द्वेषादिक न करे। तासू यह चिन्ह को या भाव सू चिंतन करनो। श्रीवल्लभ प्रभु की सेवा अति स्नेहपूर्वक करनी। सुखदवल्ली और धनुष कृपा युक्त है। अक्कड-कठोर हृदयवारेन कु यह चरण कमल सेवन दूराराध्य है। नम्र दैन्य भावी जन कूं सदा गम्य है दैन्य भाव ते ही सदा भक्त को आपके चरण कमल में निवास होय है आपके चरण कमल आधिदैविक भूमिरूप है अथवा लीलाधाम रूप आपके चरण कमल है। तातें जो भक्त आपके चरण कमल को आश्रय करे है ताको लीलाधाम को हू आश्रय सिद्ध होय के लीलाधाम में ही निवास होय है। (सु.१०-२१-२४ में) श्रीआचार्यचरण आज्ञा करे है कि भगवान के चरण परमपुरुषार्थरूप है। जब जीव में भगवान को आवेश होय तब जीव में सर्वज्ञता प्रगट होय है। और सर्वज्ञता सू ही आपके साक्षात चरण कमल के दर्शन होय है। अर्थात् परमपद रूप आपके लीलाधाम के दर्शनहोय है। ताते श्रुति को कथन है कि ज्ञानीओ और भक्तको सदा विष्णुके परम पद के दर्शन होत है अथवा करी है। या प्रकार श्रीवल्लभ चरण कमल में जीन भक्तन की निष्ठा भई तिनकू निसंदेह आपके

लीलाधाम के दर्शन होयगेही और आपके चरण कमल में निष्ठा भये ते रसात्मक पुष्टि प्रभुन की समग्र लीला यथार्थ पणे जणावेकी सर्वज्ञता हू प्राप्त होय जाय है ताते आपके चरण कमल को आश्रय परम पुरुषार्थ रूप ही जाननो।

अब पुष्टि प्रभुन को स्वरूप कैसो है ताको वर्णन करत है (सु. १०-९-का.२ में) श्रीआचार्यचरण आज्ञा करे हैं के हरि के स्वरूप को और दयालुपने को वास्तवीक जाननो चाहिये के पुष्टि प्रभु पुष्टि भक्त की अपेक्षा कौन प्रकार रखते है। ताकू श्री हरिराय चरण की श्रीकृष्ण शरणाष्टक स्तोत्र में वर्णन करत है। याको निरूपण अब करत है के जैसे श्री स्वामिनीजी के मिलाप के चिंतासूं भरित मनसा रति की भावना करते मिलन कू व्याकुल मनवारे मुरली के नादमें प्रकर्ष करके रत भये थके कृष्ण निकुंज मंदिर में अंतःस्थ सुमन तथा पल्लव की तुल्य रचना करवे वारे और श्रीस्वामिनीजी की प्राप्ति की प्रतिक्षा करवे वियोग भावसूं विहसद वदनांबुज तो सुंदर लग रहे हैं और अलीगण के गुंजारव कुं सुन रहे हैं। अश्रु नेत्रमें सू गीर रहे हैं। कब हू लोट रहे है कबहू मत्त की नाई मुरली में राधे-राधे गाय है - कब हूक नृत्य करत है सो रस में आसक्त हे मन जाको ऐसे श्रीकृष्ण शैया में अकेले पोढे भये कु स्वप्न में प्रियाजी को संबंध भयो। भोग के पश्चात तृप्त भये ऐसे जो रसरूप है, रस रीत कू जानने वाले है, रस लीला परायण में रसात्मक परिकरों में हू रसिक शिरोमणी है जे कृष्ण के भावसू भाविक श्री वल्लभ प्रभु भूतल बैठकजी में बिराज रहे है। सो जीन भक्तन पे आपको अति अनुग्रह है, अनुराग को भर है

ताकी प्रतिक्षा में बिराज रहे है। तासू **'एक समे चिंताचित आई दैवी किहि बिध जानी जाय'** यहा वैराग्य गुण है जैसे श्रीकृष्ण श्रीस्वामिनीजी के मिलाप की चिंता सू खेद युक्त तैसे श्री वल्लभ हुं निज अंतरंग जन के मिलाप की प्रतिक्षा में खेद युक्त बिराज रहे हैं। जैसे पृथुराज ने धनुष सू पृथ्वी सपाट करी और सर्व रस गाय के रूप में दोहन करे हते। तैसे श्रीवल्लभ प्रभु ने हू वेद, दधि मथकर श्रुतिन को रहस्यरूप भक्ति मार्ग प्रकट करते भये तैसे आपके बिराजवे की बैठक आपके चरणगत धनुष सू योग्य अधिकरणरूप करके तद्रूप आप रूप करी है।

वस्तुतः श्रीवल्लभ को मूल स्वरूप धर्मी विप्रयोगात्मक अमूर्त सुधा स्वरूप है। यह स्वरूप के वरणीय जन कू बाहिर स्वरूप की अपेक्षा नाही। संयोगदल वारे भक्तन कू बाहिर स्वरूप की अपेक्षा है और स्वतंत्र भक्ति वारे जन कू तो अपनो हृदय ही आपके बिराजवे की बैठक है। अथवा निकुंज भवन है। वरणानुकूल यह सिद्धांत स्फुटत होय है, आप तो **स्मृति मात्रार्ति नाशन हैं अथवातो ते तामस ना अद्य हर्याः प्रताप पदरज गंध** आपके चरण कमलके रज की सौरभता भूमि स्थित दैवी सृष्टि के हृदय प्रदेशमें प्रवेश करके व्यापक स्वरूपे समग्र के 'अद्य' हरवे समर्थ है और श्रीहरिरायचरण हू आज्ञा करत है, ''रसिक मनकी मिटी अविद्या परसी चरण समीर'' और धर्मी विप्रयोग वरणीय जन के लिये तो श्रीहरिराय चरण ने एक पद में कह्यो है के यह जन को अपने हृदय में ही भगवद प्राकट्य अभिष्ट है सो पद -

प्रगटे पुष्टि महारस देन ॥
श्री वल्लभ हरि भाव, अग्नि मुख रूप समरपीत लेन ॥१॥
नित्य संबंध कराय भाव दे, विरह अलौकिक बेन ॥
यह प्रागट्य रहत हृदयमें, तिन लोक भेदनको जेन ॥२॥
रहिए ध्यान सदा इनके पद, पातक कोउ न लगेन ॥
रसिकन यह निराधार निगम गती, साधन औरन हेन ॥३॥

या पदानुसार विप्रयोग वरणीय जन कू अपने हृदयमें ही प्रागट्य अभिष्ट है। ताके लिये बहार स्वरूप की अपेक्षा नहीं रहे है। चरण के स्वभाव सुं ही बहार स्वरूप के अपेक्षित के लिये तीन की भावना सू आप बैठक में बिराज रहे हैं और भाविक भक्तों के भाव कू पोषण कर रहे हैं परंतु स्वतंत्र भक्ति वारेन कू तो अपने हृदय भीतर ही रसात्मक मूलधाम की भावना श्रीवल्लभ प्रभु स्फुरित करे हैं। और हृदय भितर भावात्मक रूपते परम निरोधावस्था में सब अनुभव करावे हैं। ताते एक पद में श्रीहरिरायचरण ने कह्यो है के "**हरि वश छीन हीमें होत स्फूरन सघलो भक्ति मारग रूप हृदय वसे अरु रस समूह धाम।**" या प्रकार रस समूह धाम नित्य लीलाधाम सहित आप श्रीवल्लभ तीनके हृदय में विराजमान होय है। या भावानुसार को पद निम्न प्रकार को है -

श्रीवल्लभ वर के मिलन हेत, रस जोगिन बन जाउंगी ॥
श्रीवल्लभ वर की कृपा दृष्टिते, रस योगीन बन जाउंगी॥१॥
मत्त मधुप मधुपान हेतु, मकरंदी बन जाउंगी ॥
हृदय निकुंज अंग द्वादशवन, प्रेम अलख जगावुंगी ॥२॥

रोम रोम प्रति वृक्ष लता पर, पीक रस-वचन सुनावुंगी ॥
मधुर मेघ हित मन मधुर कर, मधुरे शब्द उच्चारुंगी ॥३॥
स्वाति प्रिय हित चित्त चातक कर, पियु पियु रटन लगावुंगी॥
लावण्य सुधा पान करन कुं, नयना चकोरी बनावुंगी॥४॥
सुद्ध स्नेह मय गोरस नवनीत, अधरामृत चाख चखावुंगी॥
रित प्रित विपरीत रमण कर, अनरीत रमण रमावुंगी ॥५॥
रोम रोम प्रति केवल रसमय, अनन्त रमण करावुंगी ॥
'रसिक' प्रितम के रोम रोम में, रस रूप व्हे जाउंगी॥६॥

या प्रकार धर्म विप्रयोगावस्थामें आतंर विहार है।

अब आगे कहत हैं के जब व्रज में २२ (बावीस) बैठक आप की है। सो श्रीस्वामिनीजी को निकुंज रूप है। सो सारस्वत कल्प में ग्वालन को गैया चरायवे पठाय और आप कृष्ण भाव ते निकुंज में श्रीस्वामिनीजीसो रमण विहार करत हते ता भावकी आपकी, बैठक है और दो बैठक श्रीमद् दामोदरदास की है। तो मील के २४ बैठक भई तो रास मंडल में सोल (१६) गोपी आठ (८) कृष्ण चोवीस (२४) प्रकार के बंध ते श्रीमद दमलाजी तथा श्री वल्लभ प्रभु को रमण विहार है। यह २४ बैठक उभय स्वरूप तद्रूप है। यातें यह प्रार्थना आपके सानिध्य में करनी, **वल्लभी वल्लभास्य वियोगाग्ने कृपा कर अलौकिक निजानंद श्रीवल्लभ तवास्म्यहम्॥**

या भावते विनंती करनी जो श्रीमद् दमला वल्लभ में तुम्हारो हुं। ऐसी सतत भावना रहे तिनपे आप कृपा करे है और बीना श्रम सकल मनोरथ रूप आपके चरण कमल की प्राप्ति

होय। (श्रीवल्लभ प्रभु की प्राप्ति श्रीमद् दमलाजी की कृपा और श्रीमद् दमलाजी के आश्रय बिना नहीं होय शके है। कारणके अमूर्त सुधा स्वरूप को जो आधार है सो तो श्रीमद् दमलाजी है। ताते आप श्रीवल्लभ श्री मुखते आज्ञा करत हते। दमला और भक्त बहोत हैं में तेरे बसमें हुं जो जाके वस में है वे परतंत्र है। ताते श्रीमद् दमलाजी की कृपा होय तो श्री वल्लभ प्रभु की प्रीत भावते प्राप्ति होय। यहां कोई कहे जो श्रीमद् दमलाजीकी कृपा कोन प्रकार से होय ताको साधन कहा? तहा कहत है कि श्री दमलाजी ने भूतल में प्रागट्य लेयके श्रीवल्लभ की प्राप्ति के लिये जेसे चातक वत अनन्य पतिवृत भावसुं विरह को अनुभव कियो है। तेसे साधन में जो तत्पर रहेंगे तापे श्रीदमलाजी की कृपा होयगी। अथवा यह विरहानुभव के साधन द्वारा श्रीमद् दमलाजी को हृदय में प्रवेश होयगो तब श्रीवल्लभ की पतिभाव से प्राप्ति होयगी ताते श्री वल्लभ में जाकी निष्ठा है ऐसे वल्लभीजनकुं श्रीदमलाजी की कृपा प्रथम प्राप्त करनी आवश्यक है। कारणके आधेय स्वरूप आधार बिना न रह सके। ताते जेसो साधन भूतल में प्रागट्य लेके श्रीदमलाजी ने कियो है तेसे साधन में तत्पर रहेनो यह साधन द्वारा ही श्रीदमलाजी की कृपा को प्रवेश होय है।

श्रीवल्लभ को मूल स्वरूप वैश्वानर, पुरुषाकार सुधा स्वरूप है। ताके विलास के अधिकरण आधाररूप मुख्य शक्ति रूप श्रीमद् दमलाजी है सो मूल शक्ति, अचिंत्य अनंत कोटी दुर्विभाव्य शक्तिओं को धारण करवे वारे है। ताकि अंतरंग शक्ति ताको नाम प्रसादरूपा कृपा शक्ति है यह कृपा

शक्ति के प्रवेश सु श्रीवल्लभ प्रभु के साथ रमण योग्य आधिदैविक देह सिद्ध होय है। जैसे अग्निकुमारीकान को वस्त्र दान में आधि दैविक देह (स्वामिनी भाव) की प्राप्ति भई। श्रुतिरूपान को वेणुनाद में सर्वा भोग्या सुधा द्वारा आधि दैविक देह की प्राप्ति भई। तेसे आधि दैविक देह की प्राप्ति होय तब उग्र प्रतापी श्रीवल्लभ के साथ रमण विहार रसानुभव की योग्यता प्राप्त होय। यह आधिदैविक देह विरहानुभव सूं प्रभु वियोग जनीत तापात्मक भाव के सेवन ते सिद्ध होंय। तातें श्रीवल्लभ प्रभु की प्राप्ति में विरहानुभव ही साधन है)

आगे कहत है कि यह चिन्ह (धनुष) वीर रस उपजावे वारो है। ताको आधिदैविक भाव अलौकिक सामर्थ्य जो सर्वात्मभाव रूप है ताकी प्राप्ति करावे है कारण के धनुष चिन्ह निर्भयता को सूचक है और पुष्टि भक्तनकी निर्भयता लीलाधाम में प्रवेश होयवे सू है। श्रीमद् प्रभुचरण ने विज्ञप्ति में कह्यो है।

अहं कुरंगी द्रग भंगीनांगी कृतोऽस्मि यत ।
अन्य संबंध गंधोऽपि कंधरामेव बाधते।

साक्षात स्वरूपनुं भाव करवे वारो भक्तनकु स्वरूपातिरिक्त अन्य संबंध के गंध मात्रते मृत्यु समान भय उत्पन्न करे हैं। यह अन्य संबंध को भय धनुष चिन्ह दूर कर देय है। जैसे धनुष शत्रु को संहार करवे वारो है। तैसे भगवद्भाव अतिरिक्त आसुरभाव को नाश करके सर्वात्मभाव सिद्ध करे है और सर्वात्मभाव सिद्ध भयेते लीलाधाम में प्रवेश होय है और पुष्टि भक्तन को मुक्त भावनो लीलामें प्रवेश सूं ही है।

धनुष चिन्ह को धोल

सातमुं चिन्ह धनुष नुं सो हे, पद अंबुज शोभा भारीजी ॥
महाबली पुरुषारथ राखे, कर लाई धनुष धारीजी ॥
महाबली पूर्णपुरुषोत्तम, श्री वल्लभ वर इजी ॥
आसुरतिमीर उच्छेद कीधा, धरी धनुष जगदीशजी ॥
कृष्णदेवराजा ने त्यांहे, चरण सरोज पधार्याजी ॥
मायावाद सहु खंडन कीधा, भक्त सर्वे ने तार्याजी ॥
नवरस छे नीकुंज लीलामां, पंचम रस जे कहीयेजी ॥
ते धनुष वीर रस उपजावे, एवु मनमां लहीयेजी ॥
एउना चरणनुं ध्यान ज्ञान, हृदयमां राखे जे प्राणीजी ॥
चरण प्रतापे दोष कटे सहु, दास पोतानो जाणीजी ॥
श्री वल्लभ पद नित्य प्रति गैये, आनंद उर न समावेजी ॥
सदा सर्वदा चरण कमल थी, पुष्टि भाव प्रगट थायेजी ॥
कृष्ण कमल बल बल चरणनमें, नित नौतन रस सोहेजी ॥
नित्य लीला नीत नवली लीला, रह्या भक्त मन मोहेजी ॥

... यहां धनुष चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

...दक्षिण चरण के सात चिह्न को वर्णन पूरो भयो...

ध्वज

वाम चरणमें प्रथम ध्वज को चिन्ह है ताको भाव कहत है,

‘तिन लोक की संपदा, तृण सम लेखत दास चरण रज पाय।

सो आपके चरण को तल भाग वृंदावन की रज सुं युक्त है। **वृंदावने रजो युक्त यमुनाजलपंकिलम्** कदापद तलं **मूर्ध्नि श्रीमद्वल्लभ धास्यसि** वृंदा जो प्रतिक्षण तरुणानंद रूप वारे अनंत स्वामिनी गणनके प्रेम ते पूर्ण जिनके चरण कमल की रज है सो श्रीवल्लभ के पद पंकज की रेणु मेरे मस्तकपे कब बीराजेंगे ? ऐसी प्रार्थना मर्मज्ञ शिरोमणी श्रीहरिरायचरण कर रहे है भक्तन को आपकी चरण कमल में निर्भय पनो जतायवे के लिये ध्वजा को चिन्ह धारण कियो है। अपनी परम दयालुता पनते वे चरणकमल के भजन करवे वारे भक्तन के सामने कृपा कर के स्वयं पधारे है जैसे कि श्रीदमलाजी, पद्मनाभनदासजी, महाभाग्यवान रजोबाई, श्यामदासजी, महावन की क्षत्राणीजी आदि को दान करवे सामने से पधारे है, और विमुखते सदा विमुख है। सो यह ध्वजा को चिन्ह आपके चरण कमल में बिराजे है। वे लीलाधामस्थ तथा भूतलस्थ परिकर को निर्भयता को दान करे है। जैसे श्री गोवर्धनधर के ध्वज को आश्रित को काल

कर्मादिक कोऊ बाधा नहीं कर सके है। तैसे श्रीवल्लभ के चरणगत ध्वज के आश्रित को महारस की प्राप्ति में कोऊ बाधा नहीं कर सके है। और तो कहा स्वयं श्रीगोवर्धनधर हुं बाधा नहीं करत है। परंतु आप वह भक्तनकु अनुकल होय तिनके मनोरथ पूर्ण करवे में सहायक होय मनोरथ पूर्ण करावत है। यह ध्वजा के चिन्ह तले सघरे लीलाधाम की श्रीस्वामिनीजी अपने मनमें आश्रय भाव सिद्ध करके रहे है। ताते सकल स्वामिनीजी के विरह दुःख दूर करके रसदान होत है

लीलाधाम में प्राकृत देहादिक संबंधि कोउ दुःख नहीं है। परन्तु प्रभुनके वियोगरुपी दुःख को अनुभव संयोग दल लीला संबंधी भक्तन कु होत है। यह दुःख श्रीवल्लभ चरणगत ध्वज के आश्रय ते दूर होत है। कारण के श्रीवल्लभ महा कारुणीक है। ताते स्वामिनीजीओको दुःख सहन नहीं करे है।

शंका - उपरमे कह्यो जो श्री स्वामिनीजीओ को वियोग दुःख दूर श्रीवल्लभ चरणगत ध्वज के आश्रय ते होत है सौ केसे घटे ?

समाधान - श्रीवल्लभ मधुराधिपति मधुर प्रेम के अनंत सागर तुल्य है। आप सर्वांग रोम रोम में हुं मधुर प्रेम में पूर्ण है। तेसे ही आपके चरण कमलगत ध्वज चिन्ह को आधिदैविक गुणमयी मधुर प्रेम के सागर तुल्य है। और मधुर प्रेम तत्सुखी है और श्रीठाकुरजी यह तत्सुखी मधुर प्रेम रस मकरंद के पान में लोभी तो रहे। तासु बिना बुलाये श्रीवल्लभ चरणकमल आश्रित भक्तनके हृदयमें आप बिराजे है। और बहार प्रकट होय के भक्तन के इच्छित मनोरथ रसानंद को

अनुभव करावत है। ताते ध्वज चिन्ह के आश्रित भक्तन को वियोग दुःख दूर होय जात है। **‘अरे कारे प्यारे रतनारे भोरा बदन कमल के लोभी‘** यह धमार को अनुसंधान यहां पर करनो। याको आश्रय यह भयो के ध्वजचिन्ह मधुर प्रेम रस सूं पूर्ण होय वे ते आश्रित भक्तोन कुं मधुर भावो को दान करे है। याते श्रीठाकुरजी वशीभुत होय जाय है। यह ध्वजा मधुर प्रेम राजधानी की है। ताते इन के आश्रितन को निर्भयता को सूचन करी रही है। आगे के चिन्ह में वर्णन कियो है के आप के चरण के चिन्ह सब शक्तिरूप है। तैसे ध्वज हुं शक्ति रूप है और ध्वज को आधिदैविक गुण मधुर तत्सुखी प्रेम को दान करके प्रभुन सुं संगम करायके भक्तोनकुं निर्भय करवे को है। ताते वियोग दुःख को भय ध्वज को आश्रय ते दूर होय जाय है। जैसे यह ध्वज चिन्ह को आधिदैविक गुण मधुर प्रेम ते पूर्ण है। तैसे आपके चरण कमल के प्रत्येक चिन्ह को जाननो।

आपके चरण कमल के प्रत्येक चिन्ह के दोय प्रकार के धर्म है। एक त्रिविध प्रकार के (आधिभौतिक आध्यात्मिक-आधिदैविक) दोषों कुं दूर करनो और दूसरो धर्म दोषों कुं मिटायके रसात्मक स्वरूपानंद संबंधी तत्सुखी प्रेम भावों कु प्रकट करनो। अथवा जैसे भगवान आधिभौतिक आध्यात्मिक आधिदैविक त्रिविध स्वरूप है। तैसे चिन्ह हुं त्रिविध स्वरूप है। सो ध्वज को आधिभौतिक स्वरूप ध्वज जैसो स्थुल आकृति वारो है। तीन को आध्यात्मिक स्वरूप भक्तनके भौतिक आध्यात्मिक प्रतिबंध समूह काल-मायान के धर्मन कुं दूर कर

के निर्भय करनो सो ध्वज को आध्यात्मिक महात्म्य स्वरूप है और आधिदैविक स्वरूप रसरूप है। सो भक्तनके आधिदैविक प्रतिबंध दूर करवे में ताको विनियोग है। सो भक्तन कुं तत्सुखी प्रेम रसको दान करके प्रभुन को संगम कराय के निर्भय करे है। या प्रकार चिन्ह के त्रिविध स्वरूप है।

तासू ध्वज के चिन्तवन ते पुष्टि महाफल दान होय यामें कोई संदेह नहीं। वे ध्वज के चिन्ह में मुख्य शक्ति को चिन्ह है। सो मुख्य शक्ति को स्वरूप मुख्य शक्ति स्तोत्र में श्रीहरिरायचरण ने वर्णन कियो है। सो प्रभु निकुंज मंदिर में बिराज ते थके श्रीराधा की प्राप्ति अर्थ राधा के नाम को जप करे है। और राधा तो हरि हृदय में बिराजमान है। सो श्रीराधा ध्वज के दोउ और बिराजे है। तासू ध्वज के चिन्ह चिन्तवन करवे वारे भक्तनकुं सम्यक आश्रय सुं श्री मुख्य शक्ति के करुणायुक्त को निश्चय कृष्ण शीघ्र फलदान करत है। तामे नेकहुं शंका नहीं है जा मार्ग में भक्त भगवान कुं खोजे सो तो प्रमाण मार्ग है और जामे प्रभु भक्तन कुं ढूंढे सो प्रमेय मार्ग है। श्रीवल्लभ चरण कमल के आश्रित भक्तन की खोज स्वयं रसात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम करत है। कारण के श्रीवल्लभ चरण कमल आश्रित भक्तों में ऐसों दान भयो है के वा भक्तन के विग्रह में ते श्रावीत माधुर्य मकरंदता श्री पूर्ण पुरुषोत्तम कुं लोभाय देती है। और श्रीठाकुरजी या मकरंद पान में भोराकी नाई परवश होय जाय है ताते ऐसे भक्तन की खोज करते डोले है। कारण के श्रीठाकोरजी को मन रसपान में चक्रायमान भ्रमण शील है। तासुं तामस फल प्रकरण में मनस्यके ऐसो

श्री ठाकुरजी के मन को लक्षण कह्यो है। और वेणुगीत की श्री सुबोधिनीजी में हुं कह्यो है के भाव रसपान रसिक भक्तों की अपेक्षा करते है। तासू श्री वल्लभ के आश्रित प्रमेय मार्ग में भगवान भक्तन कुं ढूंढे है।

प्रमेय मार्ग प्रमाण मार्ग ते विपरीत है। प्रमाण मार्ग में लक्ष्मीजी भगवान के चरण की सेवा करे है और प्रमेय मार्ग में पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीराधिकाजी के चरण कुं पलोटत है और अग्निकुमारिकान में जब गुणातीत स्त्री भावात्मक भगवद् स्वरूप को प्रवेश भयो तब अग्निकुमारिका मधुर प्रेम के सागर तुल्य होय गये। तामे श्रीठाकुरजी को मन मीन रूप होय के डुब्यो ही रहत है। ऐसे श्रीमत्प्रभुचरण ने रससर्वस्व ग्रंथ में आज्ञा करी है और जो कात्यायनी है। सो सर्वशक्ति धृक श्रीवल्लभ प्रभु की गुणातीत स्त्री भावात्मक भगवद स्वरूप भूता एक शक्ति है। ताके प्रवेश ते अग्नि कुमारिका मधुर प्रेमभाव को प्राप्त होय गये। गुणातीत भाव महामधुर तत्सुखी प्रेमते पूर्ण है। पुष्टि प्रभुकी दशधा लीला में दशधा प्रकार के भक्त है, तामे नव प्रकार की लीला सगुण है : राजस-तामस-सात्विक तीन के तीन-तीन भेद या प्रकार सगुण नव प्रकार के भक्तन है। तीन के हुं अनेक भेद है इन भक्तनकु श्री पूर्ण पुरुषोत्तम कोटि मन्मथ लावण्य स्वरूप सू अपनेमें मोहित करत है और दशमी निर्गुणलीला के गुणातीत भक्त में स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम मोहित होय जाय है। ऐसो गुणातीत भक्त को महिमा है। ताते श्रीठाकुरजी अग्निकुमारिका को वशीभूत होते भये, भगवान पुष्टि प्रभुनको निरवधि रसानुभव करवे

को जो स्वार्थ है सो ऐसो भक्तो में सिद्ध होय है। ताते श्री वल्लभ चरण कमल के आश्रित जन खरे ही महा भाग्यवान है। इनके सौभाग्य की सराहना कैसे करी जाय।

किंच वैश्वानर विभुकी निकुंज वे वृक्ष वृक्षनमें, पत्र पत्रनमें युगल को केलि विहार है तो देखवे में सखी को चित्त लोभायमान भयो तब निकुंज की सौन्दर्यता देखत देखत भीतर प्रवेश भयो यह निकुंज वैभव प्रभुनके दर्शन करायवे वारे है। सो सखी तीन है राग-भोग-सींगार यह तीन्योन को निकुंज में प्रवेश है। प्रथम राग प्रभुन को अति प्रिय है। याते यशोगानते प्रभु प्रसन्न होय है। राग में हुं विराहात्मक तापात्मक भाव पूर्वक को गुणगान आपकुं अत्यंत प्रिय है। भक्तों के अति भावों के श्रवण की प्रभु अपेक्षा करत है। ताते तापात्मक राग युक्त यशोगानते प्रभुनके स्वरूप में प्रवेश होय है। दुर्जय मनको वश करवे में राग को अतुलीत प्रभाव है।

अब दूसरे भोग - ताते सखड़ी प्रिय है। सखड़ी गुणातीत भक्तको यूथ है। गुणातीत भक्त केवल स्वरूप निष्ठावान है। अन्य लीलाभाव को तामे मिश्र नाही है। ताते सखड़ी को स्वरूप भी स्वेत है और तीसरे श्रृंगार में रीत विपरीत रमण या प्रकार तीन्यो सखी को निकुंज में प्रवेश है। यह तीन्यो सखी भगवद् संबंधी आधिदैविक है श्रीवल्लभ की अदेय दान देवेकी जो चातुर्यता है सो आपके प्रकटित सेवा मार्ग के भीतर है। भूतलस्थ भक्तनकी सर्वांश प्राकृतता की निवृति करके आधिधैविक स्वरूप सिद्ध करावे तेसी सेवाकी मर्यादा है। भूतल की सेवा प्रणाली में राग-भोग-श्रृंगार रूप

आधिदैविक सखी भूतलस्थ भक्तन को निकुंज लीलामें स्वतः प्रवेश करावे है ऐसी ऐसी अदेयदान सिद्ध करायवे वारी अनेक प्रकार की चातुर्यता ते सेवा मार्ग कारुणीक श्री वल्लभ ने प्रकट कियो है। ऐसी करुणा के दर्शन करके श्रीमत प्रभुचरण वल्लभाष्टक में कहत है के **'सन्मनुष्याकृति अति करुणस्थं प्रपद्ये हुताशम्'**

अब वाम चरण में चार चिन्ह है तामें ध्वजा को चिन्ह प्रथम है। गीनती में आठमो है। ताको अभिप्राय अष्टविध ऐश्वर्य युक्त ध्वजा चिन्ह है छ-धर्म और धर्मी में स्त्री पुरुष भावात्मक उभय प्रकार याविध अष्ट ऐश्वर्य युक्त ध्वजा चिन्ह है। (ध्वजा है सो ऐश्वर्य सह विजय चिन्ह है। अनंत ब्रह्मांड के अधिपति महान चक्रवर्ती राजाधिराज श्रीवल्लभ प्रभु है सो ध्वजा चिन्ह जताय रहे है। तामस फल प्रकरण में श्रीगोपीजन के मानमदसुं भगवान जब अंतर-ध्यान भये तब श्रीव्रजरत्ना प्रभुन को ढुंढे है। ता समे-वज्र-अंकुश-ध्वजा युक्त आपके चरण कमल के दर्शन भये तहांकी श्री सुबोधिनीजी (१०-२१-२४) में आप आज्ञा करे के प्रभुनके आवेशते ही भक्तन में सर्वज्ञता आवे है। तब प्रभुन के चरण कमल के दर्शन होय है। अथवा चिन्ह युक्त सर्व पुरुषार्थ रूप आपके युगल चरण कमल भक्तन के हृदय में जब स्थिर होय है तब परम पद नित्यलीला धाम के दर्शन होय है । कारण के पद है सौ धाम रूप है जब आपके युगल चरण कमल हृदय में स्थित भये तब वे भक्त लोकातीत होय के लीलाधाम की व्यापकता में ही स्थित होय है।

भौतिक प्रपंच की सर्वथा-विस्मृति होय जाय है। श्री गोपीजनो की प्रभु के अन्वेषण समय की पुतनादि लीलानुकरण समयकी और गोपीगीत रूप-गुणगान समयकी जो स्थिति है सो भौतिक आध्यात्मिक सर्वांश-विस्मृति युक्त लोकातीत है। ताते आपके उभय चरणकमल को जो आश्रय है। सोई आपकी प्राप्ति में साधन की अवधि है। जब महद सौभाग्य सिद्ध करायवे की महा कारुणिक श्रीवल्लभ जिनके लिए इच्छा करे है ऐसे बड़भागी जनकी निष्ठा आपके ललित युगल चरण कमल में अनन्य भाव ते होय है। याके लिये विशेष कितनो लिखे ? छोटी बुद्धि को यहां पर अल्पता है, यह ध्वजा परम पुरुषार्थ पहोंचवे में सर्व औरते रक्षा करे है या प्रकार ध्वजा चिन्ह को आध्यात्मिक और आधिदैविक भाव विचार के हृदय में आपके पियूष वर्णित युगल चरण कमल को धारण करनो ।

ध्वज चिन्ह को धोल

श्री वल्लभ पद कमल ने वंदुरे, काटे विषय ना सहुरे दुरे ॥
वाम चरण नी छे शोभा भारी रे, अष्टम चिन्ह नी लीला न्यारी रे ॥
प्रथम चिन्ह ध्वजा श्रेष्ठ जाने रे, सहुनी उपर ध्वजा ए मानो रे ॥
देव सहु जेने प्रभुजी कहे छे रे, तेना मंदिर शिखरे ध्वजा रहे छे रे ॥
मंगल काज मां ए ध्वजा शोभे रे, जन्म उत्सव पूजा मां मन लोभे रे ॥
होरी उत्सव मांहे डांडो रोपे रे, संगे नंदलाल रमे मग्न गोपी रे ॥
भक्तजन ध्यान एतु जे करशो रे, ताप सहु हृदयनाते हरशे रे ॥
जेना मस्तक ए चरण राजे रे, ध्वजा फर हरती व्यास जेरे ॥
जेने ए ध्वजा आश्रय लीधारे, तेना कारज सहु थशे सिद्धा रे ॥

.... यहां ध्वज चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो....

अंकुश

वाम चरण में दूसरो चिन्ह अंकुश को हे ताको भाव कहत हैं -

यह अंकुश को चिन्ह निरोध की सिद्धि के अर्थ है, पुष्टि भक्ति मार्ग में एकादश इंद्रियन को निरोध प्रभु स्वरूप में होय यही फल है। सो भक्तन के मनरूपी मदोन्मत्त निरंकुश हस्ती को वश करके निरोधको दान करवे के लिये अंकुश चिन्ह को धारण कियो है. जैसे मत्त भयो हस्ती कोई प्रकार ते काबु में नहीं आवे तेसे जीव की इंद्रियन के विषय को भोग करवे वारो मन रूपी मातंग काबु में नहीं आवत है। जैसे सब इंद्रियन को राजा मन है सो कोई प्रकार सो भगवद धर्म में नहीं लगत है। अलौकिक विषय में ही भ्रमणशील है और लौकिक है सो जन्म मरण को कारण रूप है। तातें जगत प्रपंच और देहादिक प्रपंच प्राकृत विषय कुं भोग के मन रूपी हस्ती मत्त वारो रह्यो है। ताकू वश करवे अंकुश चिन्ह धारण कियो है ।

“जब ते वीछुर्यो श्रीनाथसूं पर्यो जगत भव कूप..”
दैवी जीवात्मा जबतें अपने नित्य सखा प्रभुन ते विछुर्यो है तबतें जगत विषय सागर में डुब्यो है। इंद्रिय गण बहिर्मुख होय के जगत तथा देहादिक विषय में विचरण कर रही है। प्राकृत विषय सेवत सू मन बे काबू मत्त हस्ती की नाइ है रह्यो है। प्रभुन सु विछुर्ये सू दैवी जीव को अपने अलौकिक

स्वरूप को विस्मरण होय गयो है। और देहाध्यास इंद्रियाध्यास, प्राणाध्यास अंतःकरणाध्यास और स्वयं को आत्मा स्वरूप ताकी विस्मृति या प्रकार पंच पर्वा अविद्या पाछे लागी डोलत है। जहां तांई यह अविद्या निवृत्त नांही होय तहां तांई प्रभुन के स्वरूप को अनुभव नांही होय शके है। जैसे के एक पात्र में जल भर्यो है तामे दूसरी प्रवाही वस्तु नहीं समा सके तेसे दैवीजीव के इंद्रिय अंतःकरणादि भगवद रस के पात्र हैं, परन्तु यह पात्रों में प्राकृत प्रपंच विषय रस भर्यो है सो नीकस न जाय वहां तांई भगवद् रस केसे भर्यो जाय ? ताते सर्वप्रथम दैवी जीव को जगत प्रपंच तथा देहादिक प्राकृत विषय देह इन्द्रियादि पात्रों में से नीकासनो चहिये, श्रीगोपीजनों कुं भी जब यह प्रपंच दूर भयो, तब स्वरूपानुभाव कर सके, जब पांच प्रकारकी अविद्या दूर भई तब गोपीजन के इंद्रियादि पात्रमें वेणुनाद द्वारा स्वरूपात्मक सुधा को प्रवेश भयो, ताते श्रीवल्लभ ने सन्यास निर्णय में आज्ञा करी है कि,
‘विषयाक्रांत देहानां नावेशः सर्वथा हरिः’

जहां ताई प्राकृत प्रपंच विषय को आवेश इंद्रियादिक में है वहां तांई भगवद् आवेश कैसे होय ? याते भगवद् प्राप्ति के चाहना वारे कुं प्राकृत प्रपंच की निवृत्ति करनी परम आवश्यक है, यह प्रपंच निवृत्ति-सेवा-स्मरण गुणगान स्वरूप चिन्तवनादि भाव कू धर्मन के साधन सु सतत प्रभु सानिध्य रहेवेसु ही होय है। दूसरे प्रकारते नहीं। ताते श्रीहरिरायचरण ने (शि. १.१० में) कह्यो है के सेवा स्मरणादि अलौकिक सम्पत्ति प्रभु दैवी जीवको प्राप्त कराय ताको हृदय उपरोक्त

भगवद् धर्मरूप साधनते शुद्ध करत है। ता पाछे आप लीलासह हृदयमें पधारे है। ताते भगवद् धर्मरूप साधन द्वारा सतत सन्मुख रहेवे ते प्राकृत विषय दूर होय है। आपश्री वल्लभ प्रभु के चरण कमल गत अंकुशचिन्ह को यह प्रभाव है के प्रभुन सुं विमुख करके प्राकृत प्रपंच में ले जायवे वारे मदोन्मत हस्ती मन कुं वश कर लेनो। परन्तु यह अंकुश चिन्ह को प्रभाव तब ही प्रगट होयगो के दैवि जीवात्मा आपके चरण कमल की सन्मुख रहे। काहु प्रकार ते सन्मुख रहेवेसुं ही मन वशीभूत होयगो। दूसरे प्रकारने नहीं। ताते आपश्री वल्लभने नवरत्न ग्रंथ में आज्ञा करी है के,

तस्मात सर्वात्मतानित्यं श्रीकृष्णः शरणं मम ।
वदद् भीरेवं सततं स्थेयं इत्येवमेमति ॥

आपकी आज्ञा सतत सन्मुख रहेवे की है, भगवद् सेवा स्मरणादि जो कछु बनो है सो हुं प्रभुन की कृपाते ही बन सके है। अथवा श्री वल्लभ जाको अपनो स्वरूपानंद दान करवे की इच्छा करे है ताको ही भगवद् धर्मरूप सेवा स्मरणादि अलौकिक साधनो को दान करे है। यह साधन साधनरूप नहीं है। फलरूप है जामे प्रभु स्वरूप को संबंध रही आवे ऐसो साधन फलरूप ही कह्यो जाय है। ताते यह पुष्टि मार्ग में साधन और फल की अभेदता है। भगवद् नाम भी फलरूप है। फलात्मक याते है के भगवद् नाम सच्चिदानंद रूप है। ताते यह पुष्टि मार्ग को मुख्य सिद्धान्त ये ही है के काहु प्रकार सो सतत् प्रभु सन्मुख रहेनो। एक क्षणकी सानिध्यता छुट जायतो ताक्षण आसुरावेश होय है। जेसे सागर

में नाव चल रही है तामें सुकानी की असावधानता ते नावमें छिद्र पड़ जाय और ता छिद्र में ते नाव में जल को संचार होयवे लगे इतने में सुकानी सावधान न होय तो नावकुं सागर में डुबाय देवे है। तेसे यह प्राकृत जगत विषय सागर तुल्य है। तामे प्रभु की सन्मुखता जा क्षण छुट जाय ता ही क्षण छिद्र होयके प्राकृत प्रपंच को प्रवेश होउवे लगे है ताते सतत सन्मुख रहेवे की आज्ञा करी है, प्रभुन को विस्मरण और प्राकृत प्रपंच की स्मृति सोइ आसुरावेश कह्यो जाय है। भक्ति को दूसरो नाम प्रेम ही है सो यह प्रेम मार्ग तलवार की धार पर चलवे जेसो है। याको अर्थ चारो ओरते सावधान राखके मनकुं वश करते भये प्रभुकी सन्मुख रहेनो।

मन और इंद्रियगण यह अति चंचल है थोड़ीसी असावधानता में भक्ति मार्गीय पथिकको पतनकी खाई में पटक देते है। ताते पुष्टि भक्ति मार्ग में इन्द्रिय रूपी अश्वों को निग्रह करवे में बडोनको विशेष आग्रह कियो है। समग्र साधनो को अंत मन वश करवे मे है और जहां तांई पांच प्रकारकी अविद्या विद्यमान है यहां तांई साधन अवस्था ही कही जाय है। ऐसी साधन दशामें श्रीवल्लभने तथा श्रीमत्प्रभुचरण श्रीगोकुलेशजी श्रीहरिरायचरणादि करुणात्मा पुरुषोने जो जो आज्ञा करी है ताके पालन में तत्पर रहेनो परम हितकारी है। आधुनिक भक्ति मार्गीय साधक प्रमेय बल को अवलंबन लेय के मनगढंत आचरण करे है। खान-पान-आहार विहार में स्वतंत्र आचरण करे है ऐसे कृत्रिम प्रमेय अवलंबी साधक कबहुं भगवद् प्राप्ति नहीं कर शके है।

साधन दशामें बड़ोन की हितकारी आज्ञाओको उल्लंघन करके स्वतंत्र आचरण करनो सो एक महान दोष है ऐसी आज्ञा श्री हरिराय चरणने २१ में शिक्षा पत्र में करी है। और वर्तमान में या प्रकार की स्वतंत्रता दिखवे में आवे है। ताको कारण ऐसो दियो है के अब आधिदैविक लीलामध्य पाती सृष्टि भूतल में क्वचित है। प्रवाह और मर्यादा सृष्टि को पुष्टि सृष्टि में प्रवेश होय गयो है। पुष्टि सृष्टि को येही लक्षण है की स्वामिकी आज्ञा को अमल करनो और सेवा स्मरणादि ते भगवद् धर्म में स्थित रहेनो और भगवद् प्राप्ति के लिये नीतांत ताप भावन पूर्वक प्रभु वियोग दशा को अनुभव करनो ऐसी सृष्टि अब क्वचित है। करुणा सागर श्री वल्लभ ने यह सेवा मार्ग जो प्रकट कियो है सो अत्यंत निपुणतापूर्वक जीवको परम हित विचारी के प्रकट कियो है और सेवा की जो जो मर्यादा राखी गई है सो सब रति पथ के रीत की है।

प्रभुन में स्नेह भाव की वृद्धि हो तेसी ही मर्यादा बंधी है। अन्न में सुं मन बने है अर्थात मनकी वृत्तीओ की उत्पत्ति अन्न में सु होय है। ताते सेव्य स्वरूप को समर्पण करके आपकी प्रसादी अधरामृत को सेवन करवे वारे की बुद्धि में सुन्दर भावना प्रकट होय है और प्रमेय की ओट में स्वतंत्र होय के आसुरी मनकी आधीनता में असमर्पित लक्षण जो करे है ताको मन कबहु वश में नहीं होयगो। जाको उत्तमोत्तम अधिकार है वेही जन श्री वल्लभ की आज्ञानुसार चलेगो। इनकुं ही भगवद् प्राप्ति होयगी वैष्णव सृष्टि कुं तथा श्री वल्लभ कुल कु श्री आचार्य चरण की आज्ञा रूपी मर्यादा

में रहेनो परम हितकारी है। अन्यथा कृति गति में अथवा मर्यादा के त्याग में जेसे जनक नंदीनी सीताजी भगवान राम की दुहाई (मर्यादा) को त्याग करके आसुर सम्पत्त रावण को भीक्षा देयवे गये। तासु आसुर नगरी लंकामें प्रभुन के वियोग में असुरन के बीच में रहेनो पर्यो। तेसे श्री आचार्य चरण की आज्ञा रूपी मर्यादा के त्याग में अन्यथा कृति गति के आचरण ते काल माया के आसुर भावों के बंधन में पड़ जाते है। ताते शिक्षा श्लोकी सार्धत्रयी में उभय सृष्टि (वैष्णव तथा श्री वल्लभ कुल) के लिये आपने बहिःर्मुख नहीं होयवे की अन्तिम शिक्षा करी है। ताते पुष्टि प्रभुनकी प्राप्ति की चाहनावारे श्री आचार्यचरण की आज्ञा में रहेवे को प्रयत्न करे। यद्यपि यह कराल कलि काल है। तामें सर्वांश करके स्वामिनीजी की आज्ञा को पालन न होय तो हृदय में ताको दुःख राखे और अशक्य भावते दैन्यता संयुक्त आप श्री वल्लभ के चरण कमल को शरण वारंवार विचारे। पुनः पुनः आप के चरण कमल को नमन करतो रहे। अति हीन कृपण भावते सन्मुख रहे। तो महा कारुणिक स्वामिदैन्य भाव देखी के प्रसन्न होयेंगे और आप अपने धर्म के सामर्थ्य को दान करेंगे ताते अशक्यता में सुशक्यता में आपके चरण कमल की शरण रहेनो और दुःसंग दोषते सावधान रहेनो। दुःसंग आत्मा को घात करवे वारो है। दुःसंग कोन को कहिये ? जो श्री महाप्रभुजी की आज्ञा से विरुद्ध चलवे वारे तथा आपके वाक्य से विरुद्ध सिद्धांत प्रकट करवे वारेन को दुःसंग जाननो। ऐसे जीव पुष्टि मारग में प्रवेश करके यतकिंचित पुष्टि के आचरण करते दिखते हो तोउ मोह

के वश होय ताके दुःसंग में नहीं फसनो, श्रीसर्वोत्तमजीमें **‘अंगीकृतो स मर्यादा’** आपको नाम है। सो ब्रह्मभाव रूपी मर्यादा अर्थात् तापात्मक भावयुक्त सर्वात्म भाव रूपी मर्यादा सूं ही आप दैवि जीवको लीलामध्य पातित्वपने अंगीकार करे है। यह ब्रह्मभाव तनुजा वित्तजा सेवा मन लगाय के करवेसुं सिद्ध होय है। तनुजा वित्तजा सेवासुं अहंता ममतात्मक संसार बंधन दूर होय जाय है।

पांच प्रकार की अविद्या निवृत्त होय है। जन्म मरण और सांसारिक दुःख सुख के द्वंद भावों की निवृत्ति से ब्रह्मभाव सिद्ध होते है। ऐसे तनुजा वित्तजा सेवासुं ब्रह्मभाव की प्राप्ति होय है तेस आपके लीला चरित्र के गुणगान सुं और आपके नाम के स्मरण सु भी ब्रह्मभाव की प्राप्ति होय है। तब दैवी जीव निरावरण होय के दुराराध्य पुष्टि प्रभुन के स्वरूपानुभावके योग्य पात्र बने है। ताते श्रीवल्लभ प्रभु की आज्ञा में स्थिति करनी परम हितकारी है।

ऊपर में जो दुःसंग को वर्णन कियो सो बहार को दुःसंग है। यातें हुं बलिष्ट दुःसंग भीतर को है। सो आप कहत है के मन और इंद्रिय दो प्रकार के है। एक दैवि दुसरे आसुरी। मन एकादशमी इंद्रिय में गिने जाय है। १० इन्द्रियोको राजा मन है। यह मन आसुरी और दैवि दो प्रकार को है। दशो इन्द्रियो मनके आधिन है। अब दैवी मन भगवद् प्राप्ति करायवे में सहायक है। दैवि मन में प्राकृत वासना को संकल्प विकल्प नहीं उठे है परंतु भगवद् स्वरूप तथा भगवद् लीला के मन स्वभाव वारो है और आसुरी मन भगवान सुं विमुख करावे है। प्रभुन की

सानिध्यता छोड़ाय के जगत प्रपंच तथा देहादिक प्राकृत प्रपंच में बल पूर्वक खींच के जीवात्मा कुं ले जाय है। सो आसुरी मनको पोषण असमर्पित लक्षण करवे सुं होय है। याते मिथ्या विचार सृष्टि के संकल्प, विकल्प उठे है और प्रभुन सुं विमुख करावे हे ताते साधन दशा में मार्ग मर्यादा में चालनो हितकर है। यह आसुरी मनको समजनो कठिन है। सदा भगवद् सन्मुख रहेवेवारे जन ही मनकी चंचल गति कुं पकड़ सकते है। ताते महानुभाव सूरदासजी कहत है, **“मन ते बहुविध पोल चलाई और मन लोभी मन लालची मन कपटी मन चोर मन के मते न चालीए होत है क्षण क्षण और”** यह आसुरी मन भीतरको चोर है सो आंखन से देख्यो नहीं जाय है। दोष के पुंज रूप यह आसुरी मन है ताते यह मनको कबहू भरोसो नहीं करनो। भक्ति मार्गीय पथीको के दैवि सम्पत्त लुंटवेवारो भयंकर शत्रु है अब आसुरी और दैवी इन्द्रियो के ही गोलख में रहे है। साधन दशा में इन्द्रियो के भीतर दैवि और आसुरी धर्म भाव साथमें रहत है। जैसे के नेत्र इन्द्रिय को धर्म (विषय) पदार्थ को देखनो है। सो नेत्र इन्द्रिय जब भगवद् स्वरूप को देख तब दैवी जाननो और प्राकृत प्रपंच कुं जब देखे तब आसुरी जाननो या प्रकार समस्त इन्द्रियनको दोय प्रकार के धर्म साधन दशामें रहत है और दोनो (दैवी और आसुरी) धर्म एक ही गोलक में साधन दशामें मिले भये रहत है। ताते महानुभाव नंददासजी ने कह्यो है के, **“गरल अमृत एकदा कर राखे, भिन्न भिन्न कर विरला चाखे,”** ताते साधन दशा में आसुरी इन्द्रियन को निग्रह करके भगवद् सानिध्य रखवे को प्रयत्न करनो श्रीआचार्य

चरण में निरोध लक्षण ग्रंथ में आज्ञा करी हे के, करके भगवद् सानिध्य रखवे को प्रयत्न करनो, श्रीआचार्य चरण ने निरोध लक्षण ग्रंथ में आज्ञा करी हे के,

यस्य वा भगवत्कार्य यदा स्पष्ट न द्रश्यते ।
तदा विनि ग्रहस्तस्य कर्तव्य इति निश्चयः ॥ (नि. १९)

जो जो इन्द्रिय भगवत्कार्य (सेवा स्मरण गुणगानादि) में स्पष्ट रूपमें न दिखे ताको बलपूर्वक विशेष करी के निगृह करवो यह पुष्टि शरणस्य दैवि जीव को कर्त्तव्य है ऐसी आज्ञा करते है और श्री यमुनाजी के घना (घरा) में कालीय नाग (सर्प) रही आवतो यह कालीय नाग प्राकृत इन्द्रियो से जो प्राकृत विषयोको भोग कियो जाय है। सो विषय रूपी विष को देवता है और श्रीयमुनाजी भक्ति स्वरूप है। सो दैवि जीव के हृदय धरा में श्री यमुनाजी रूपी भक्ति जल रहे है। ताके भीतर प्राकृत विषय रूप विष को देवता कालीय नाग रहे है। यह कालीय नाग को दमन प्रभुने इन्द्रियो रूपी फणो पर नृत्य करके कियो है। याको अर्थ ऐसो जाननो के प्राकृत विषयनमें ते इन्द्रियोन कु छुड़ाय भगवद् स्वरूप और भगवद् धर्मरूप सेवा स्मरण गुणगानादि में सन्मुख रखनो सोई प्रभुने इन्द्रिय वश नृत्य कर्यो । ताते आसुरी इन्द्रिय को निग्रह करनो देवी जीव को कर्तव्य है और आसुरी मन को कबहुं विश्वास नहीं करनो। साधन दशा में यह आसुरी मन की पहचान हुं महत पुरुषो की वाणी के आश्रय ते होय है। ताते यह वाणी को आश्रय करके वारंवार ताको विचार करनो। महत वाणी ते स्वतंत्र नहीं होनो। सबते बड़ो दुःसंग आसुरी मन को है।

ऐसे (भा.११.२३ में) भगवानने उद्धवजी प्रति कह्यो है और श्रीहरिरायचरण ने शिक्षा पत्र में कह्यो है के पुष्टि प्रभु सर्व करण समर्थ होंयवेते अशक्य कुं सुशक्य करे है। परंतु अशक्य हुं सुशक्य जब होयगो की अन्नदोष संगदोष कालदोष बाधक न होय।

सेवाफल ग्रंथ में आचार्य चरण ने आज्ञा करी है के **उद्वेग- भोग और प्रतिबंध** प्रभु की मानसी सेवामें बाधक है। यह तीन्यो प्रकार के प्रतिबंध में मुख्य अन्नदोष है। अथवा लौकिक भोग है। अन्न दोष सुंही काल दोष संगदोष आय लगे है। अन्नदोषसु बुद्धि भ्रष्ट होय जाय है। तब दैवि जीव अपने हित अहित को विचार नहीं कर शके है। अर्थात लौकिक को अलौकिक समजे है। अनात्म वर्ग कुं आत्मा समजनो सोई लौकिक कुं अलौकिक जाननो है। तेसी विपरीत बुद्धि अन्न दोष सुं होय जाय है। बुद्धि अथवा चित्त स्वभाव सुं निर्मल जल भरे सरोवर जेसे है। तामें अन्न दोष सुं पुष्ट भयो आसुरी मन प्राकृत विषय के संकल्प विकल्प रूपी कुडो कचरो डारके बुद्धि रूपी सरोवर में भक्ति रूपी रहे भये जल कुं मलीन (गंदो) कर देय है।

अंतःकरण में चार तत्व है **मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार** तामें बुद्धि रूपी सरोवर के किनारे बेठयो भयो अन्नदोष सुं मलीन संकल्प विकल्प वारो मन बुद्धि कु भी भ्रष्ट कर देय है। पूर्व में कह्यो है के दैवी जीव को हृदय ही श्री यमुनाजी रूपी भक्ति जल को घरो है। यह अंतःकरण कु ही हृदय कहत है। ताते अंतःकरण में जो बुद्धि तत्व है तामें भक्ति

रूपी जल रहे है ताकुं आसुरी मन संकल्प विकल्पते मलीन कर देवे है। ताते दैवि जीव अपनी आत्मा को हित चाहे तो महान अन्नदोषते बचते रहे। करुणा निधि श्री वल्लभ ने यह सेवा मार्ग जो प्रकट कियो है सो बड़ी ही निपुणता ते एसो अद्भुत मार्ग प्रकट कियो है के आंख मुंदके चलवेवारेनकुं भी ठोकर न लगे, कहेवो को तात्पर्य यह है के सब कुछ बुद्धि के अधिन है। सुंदर बुद्धि रहेवे सुं ही श्री प्रभुन के सेवा-स्मरणादि सब कुछ बन शके है। और अपने हीत-अहीत को भी विचार होय शके है। बुद्धि के नाश में आत्मा को नाश ही समझनो चाहिए भगवान को विस्मरण ताकु ही आत्मा को नाश है। यह बुद्धि की सुंदरता प्राणनाथ प्रभु के अधरामृत सेवन सुं ही होय है। जेसे दूध में जामन डारने से ही गोरस बनवे की क्रिया स्वतः ही होयवे लगे है। ताके लिये कोई प्रयास नहीं करनो परे है तेसे प्रसादी-अधरामृत के सेवन ते बुद्धि में स्वतः भगवद् भावनाकी स्फुरणा होयवे लगे है और यह सर्वोत्कर्ष अनुगृहात्मक पुष्टिमार्ग में प्रभु साक्षात् समर्पित पदार्थ को अंगीकार करे है। याते अधरामृत सेवनते अलौकिक सामर्थ्य रूप महान पुरुषार्थ सिद्ध होय है यह महान पुरुषार्थ सरलता सुं सिद्ध होयवे के लिये ही महा कारुणिक स्वामिने सेवा मार्ग प्रकट कियो है यह सेवा मार्ग अद्भुत हे अद्भुत कहेवे ते आश्चर्य हुं उपजायवे वारो है। ताको निरूपण श्रीमत्प्रभुचरण गुसांईजी 'सप्त श्लोकी' में कहत है,

मायावार तमो निरस्य मधुभित्सेवाख्य वर्त्माद्भूतां ।
श्रीमद् गोकुलनाथ संगम सुधा सं प्रापकं तत्क्षणात ।
दुष्प्रापं प्रकट चकार करुणा रागति संमोहनः ॥
स. श्री वल्लभ भानुर ल्लसतिय: श्रीवल्लवीशांतर: ॥३॥

दैवी जीव जबते लीलाधामते वीछुर्यो है तबते आसुरी सृष्टि में मील जायवे सुं आसुरी भावो को अंधकार तीनके हृदयमें छाय गयो है। यह अंधकार कुं दूर करवे के लिये श्रीवल्लभ प्रभुने यह सेवा मार्ग प्रकट कियो है। सो यह सेवा मार्ग हुं सूर्यवत दिव्य लीलाधाम के दिव्य विलास को प्रकाश करवे वारो है। जाको दैवी जीव कुं विस्मरण होय गयो है और यह सेवा मार्ग कैसो है ? मधु जो अहंता ममतात्मक संसार यह संसार रूप मधु दैत्य को नाश करवे वारो है और 'अद्भुत' कहेवेसुं संसार में रहेते भये भी महान दुर्लभ ऐसी श्रीगोकुलनाथ के संगम सुधा कुं क्षण एक में प्राप्त करावे है। ऐसो अद्भुत यह सेवा मार्ग है और श्रीगोकुलनाथ की संगम सुधा जो अत्यंत दुर्लभ है। यह दुर्लभ सुधा हूं करुणानिधि श्रीवल्लभ अपने आश्रित दीन जन कुं भली प्रकार प्राप्त कराय के कोटी मन्मथ लावण्य सुधा सिन्धु में देवी जीव को निमग्न कर देय है। ऐसो अद्भुत सेवामार्ग श्री वल्लभभानुने प्रकट कियो है। उपरोक्त श्री गोकुलनाथ की दुर्लभ संगम सुधा मात्र सेवा निष्ठ होय के अधरामृत सेवन ते भली प्रकार प्राप्त होय है और (भा. ११-६-४६ में) उद्धवजी के वाक्य है के हे ! नाथ आपकी करुणा को सेवन करवे वारे हम आपके दासो ने आपकी दूस्तर माया को जीत लिये है सो माया केसी है? ताको स्वरूप श्री ठाकोरजी स्वयं अपने श्री मुखते भगवती गीताजी में कहत हे के,

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते (गी. ७.१४)

यह दैवी गुणमय माया अद्‌भुत श्रीगुणमयी बहुरूपी को पार करनो बड़ो ही दुस्तर है। केवल प्रभुनके अनन्य शरण में रहवेके आपके अधरामृत सेवनते यह माया दूर होय शके है। चोर्यासी दो सो बावन वैष्णव में ऐसो हुं भगवदीय होय गये हे के जाकु विद्या को बल नहीं हतो सो हुं प्रभुन के अधरामृत के सेवन ते आठ बेर काल कुं पाछे फीरावत भये ऐसो श्री प्रभुनके अधरामृत को महान प्रभाव है। ताते यह रतिपथ में चलवेवारो रसिक दैवी जीव के जाको उत्तमोत्तम अधिकार है वह अपने प्रियतम प्रभुनके जूठणाते ही अपनी जिंदगी को निर्वाह करे और जहां तहां प्रसाद के निमित्त खान पान करनो नहीं ओकी आदर्शता नहीं और नतो हितकर है। देखा देखी अथवा भावलापनसुं जहां तहां प्रसाद समजके ग्रहण करनो तामें कितनो अनिष्ट परिणाम प्राप्त होय है ताको उदाहरण दो सो बावन की वार्ता में दो सेवक को है। सो तामे एक साधारण हुंते और दूसरे तदीय है। जीनने कन्या विक्रय के द्रव्यनते प्रभुनके भोग धरे प्रसाद को त्याग कर दीयो सो जो तदीय है और दूसरो साधारण यह मार्ग के सुक्ष्म सिद्धांत कुं नहीं जानते तीनने प्रसाद लियो वाते ताकी बुद्धि मलीन भई. या उदाहरण को विचार करके जहां तहां प्रसाद के निमित खान पान करनो कितनो हानिकारक है ? कितनों यह मार्ग को सुक्ष्म सिद्धान्त है ? कितनी यह रति पथ में सावधानता की आवश्यकता है ? ताको प्रभु प्राप्ति करवे वारे साधक स्वयं विचार करे, प्रमेय

बल की ओट में आसुरी मन की स्वतंत्रता में फस जानो आत्मनाश की निशानी है। प्रमेय कोन कुं कहे ? प्रमेय को अनुभव कब होय ? याकु समझनो चाहिये, वर्तमान साधको भगवद् शास्त्र में प्रमेय बलको वर्णन कियो है, यह 'प्रमेय' शब्द कुं पकड़के कल्पना के हवाई महेल हृदय आकाश में बनावे है। ताकु प्रमेय को अनुभव कैसे होयगो ? अब प्रमेय को स्वरूप कहत है के भगवद् शास्त्र में जो प्रमेय है सो तो भगवान को साक्षात् स्वरूप है ताते कह्यो है के, **प्रमेयं हरि रेवेकः** साक्षात् प्रभु को जो स्वरूप है ताकु प्रमेय कहत है यह प्रमेय को अनुभव कैसे हो? जब पांच प्रकारकी अविद्या समूल निवृत्त होय ताके पश्चात प्रमेय को अनुभव होय।

प्रमेय बलकी भावात्मक स्वरूपात्मक सुधा धारा आत्मा रूपी समुद्रमें ते प्रवाहित होत है। यह धारा अन्तःकरण में प्रथम प्रवेश करे है जाकुं हृदय कुं कहत है। परन्तु अन्न दोष से अंतःकरण के द्वार बंध होय जात है। तब प्रमेय की धारा कैसे झेली जायेगी ? अथवा अन्न दोष सुं प्रभुनने बहिर्मुखतां होय है। यह विमुखता ही अन्तःकरण के द्वार बंध कर देती है। तब प्रमेय की धारा कहा सुं प्राप्त होयेगी ? तासु प्रमेय बल केसे प्राप्त होयगो ? प्रमेय कौन कुं कहे ताको समजनो चाहिये, दैवी जीवमें प्रभु सदैव कृपा युक्त है और प्रमेय बल की वर्षा होती रहेती है । कारणके नाद ब्रह्म नित्य है यह वेणुनाद में ही प्रमेय बल की वर्षा है, परन्तु झेल वेही सके है जो सुंदर बुद्धि सुं सन्मुख रहे तब ही भगवद् प्राप्ति होय शके और सन्मुख रहेवे सु ही आपके

चरण कमल के चिन्ह प्रभाव जताय शके. जोके पुष्टि प्रभु कर्तु अकर्तु अन्यथाकर्तु सामर्थ्य वारे और स्वतंत्र इच्छा वारे साधन रहित विपरित कृतिगति वारेनकु भी अपनो स्वरूपानंद दान कर शके है । इनको अचिन्त्य अनंत शक्ति युक्त महात्म्य है । तद्पि आधुनिक सृष्टि को पुष्टि मर्यादा में अंगीकार कियो है । ताते जितनी मर्यादा तितलो साधन (सेवा-स्मरण गुणगानादि) करनो अभिष्ट है और अनिवार्य भी है । और पुष्टि की मर्यादा कहेवे ते आप श्रीवल्लभ की आज्ञानुसार चलनो तामे ही परम हित है । अब प्रभु सन्मुख रहेवे सुं अंकुश चिन्ह को प्रभाव जो अनुभव में आवे है ताको आगे कहत है ।

यह अंकुश स्वयं टेडो है सो टेडे मनको वश टेडो अंकुश ही कर शके ताते यह अंकुश के चिन्तवनते बिना ही श्रम इन्द्रिय सहित मन लौकिक विषयन में ते निकस के भगवद् परायण होयेगो । अंकुश चिन्ह को उपरोक्त कार्य आध्यात्मिक भयो अब अंकुश को आधिदैविक कार्य कहत हैं जो श्रीगोवर्धनधर प्रभु व्रज में सकल स्वामिनीन को अपनी कोटी मन्मथ लावण्यताते और सुरत संग्रामते सर्वप्रकारते वशीभूत करते भये । ताते श्री ठाकुरजी कुं निरंकुश पने ते मद भयो के सब मेरे वश हे । मेरी सेवा में तत्पर है । सो श्री ठाकुरजी को वश करवे के लिये अति मोहन श्रीवल्लभ प्रभु ने चरणकमल में अंकुश चिन्ह धारण कियो है । जो श्रीठाकुरजी निरंकुश हे ताकुं श्रीवल्लभ प्रभु जतावत है के आपतो यह अंकुश चिन्ह के वश रहोगे । ताते श्रीवल्लभ प्रभु के अधीन श्री गोवर्धनधर तथा सकल स्वामिनीजीगण होय रहे है । कारण के सबन के जीवन मुरी रमण विलास के कारणरूप जीवनरूप सुधा के दाता सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ है ।

शंका - पूर्ण पुरुषोत्तम स्वरूप श्रीगोवर्धनधर है ताकुं वश करवे में यह अंकुश को कार्य कैसे घटे ? अथवा अंकुश चिन्ह आप श्रीवल्लभ प्रभु ने श्रीहस्त में धारण नहीं कियो है और चरण कमल में धारण कियो है ताको कहा अभिप्राय है ?

समाधान - जो श्रीगोवर्धनधर को वश करवे को अंकुश को कार्य है सो अंकुशरूप विरहभाव है । जब श्रीमत स्वामिनीजी मान में बिराजे है तासमे श्रीठाकोरजी श्रीप्यारीजी के विरह में व्याकुल होय जाय है और श्रीप्रियाजी को दैन्य भावे शरण मांगे है । यह युगल स्वरूप में विरह भावके दान कर्ता श्रीवल्लभ विरहाग्नि है और श्री प्रियाजी को मान छुडाय के उभय युगल के संगम सुख के दाता हुं श्रीवल्लभ प्रभु है ताते विरह रूप अंकुश को श्री ठाकोरजी वशीभूत होय जाय है । अब दूसरी शंका जो श्रीवल्लभ प्रभु ने अंकुश चिन्ह श्री हस्त में धारण नहीं कियो और चरण कमलमें ही धारण कियो है ताको कारण यह पुष्टि मार्ग को मुख्य सिद्धांत दास्य भाव है। दास्य भाव ते ही रसात्मक समस्त विलास सुखो को अनुभव होय है। सो यह दास्यभाव के आलय रूप श्रीवल्लभ प्रभु के युगल चरण कमल है। ताते लीला परिकर समस्त को दास्यभाव ते अवधि रहित सुख प्राप्त होय है। ताके लिये चिन्ह आपने चरण कमलमें धारण कियो है और आपके जो चरण कमल है सो दास्य भक्ति रूप और दास्य

भक्ति प्रदाता है। यह दास्य भाव मर्यादा विहिप भक्ति रूप नहीं जाननो परन्तु पुष्टि अविहित भक्ति के जामे स्वरूपानंद को अनुभव होय है। ऐसो पुष्टि लीला संवादक यह दास्य भाव हे जो दास्य भावमें सर्वात्मभाव को दान है और सर्वात्म भाव रूप दास्य दुर्लभ होयवे सूं श्रीहरिराय चरणादि महत पुरुषोने आपके चरण कमल को ही आश्रय सेवन मांग्यो है। आपके चरण कमल तापात्मक भाव के प्रदाता है। जो तापात्मक भावते निरवधि रसानुभव स्वरूपानंद को अनुभव होय है तातें यह रहस्य मर्मज्ञ शिरोमणि श्रीहरिराय चरण जानने होयवे सुं आप श्री वल्लभ के युगल कमलको आश्रय सेवन मांगत है। सो आप पदमें कहत हैं -

नमो श्री वल्लभाधिश पद कमल युगले सदा वसतु मम ह्रदय,
विविध भाव रस वलितं और रूचिंरतर वल्लभाधिश चरणम ।।
और सब सुखद अवधि है जब पाउ यह दानी हो ।
चरण कमल निकट राखी 'रसिक' तबे जानीयो ।।
और चरण शरण अब आय ग्रहे है,
मन वच कर्म सबनसुं और रसनिधी जानो ।
सोई कीजे तुम बिना हमें नहीं ओर ठोर ।।
भूलजीन जाय मन अनत मेरो
रहुं निशदिवस श्रीवल्लभाधीश पद कमल सूं लाग
बिना मोल को चेरो । और
वृंदावनेरजोयुक्तं और श्रीयमुना जल पंकीलम् कदापदतलं मूर्ध्नि
श्रीमदवल्लभधास्यसि, और चरण कमल की
निशदिन सेवा अपने हृदे वसै येहो ।।

या ही प्रकार श्रीवल्लभ चरण कमल के शरण आश्रय-सेवन की प्रार्थना करत है ताको यह आशय हे के श्रीवल्लभाग्नि के चरण कमल तापात्मक भक्ति प्रदाता है नवधा विहित मर्यादा भक्ति के दाता नहीं है और पुष्टि प्रभु श्रीगोवर्धनधर अष्ट धर्म युक्त ऐश्वर्यवान है यह ऐश्वर्य धर्मनकुं छोंडके दास्य भावते श्री प्यारीजी के पाद पद्म को सेवन करत है । श्रीप्रियाजी के पधारवे के निकुंज मार्ग में पुष्पनकी बिछात करत है । कठिन कठिन कलीन कुं पृथक करत है। कोमल कोलम कलीन की बिछात करत है। या प्रकार षट ऐश्वर्यवान पूर्ण पुरुषोत्तम भी प्रेम रस चाखवे के लिये दास्य भाव ते ही श्रीवल्लभ की राजधानी में अगणित अनीर्वचनीय आनंदानुभव करत है ताते दास्य भाव की सिद्धि करायवे के लिये अंकुश चिन्ह श्रीवल्लभ ने चरण कमल में धारण कियो है । या प्रकार समस्त चिन्ह को आधिदैविक कार्य जाननो दीनता तथा दास्य भाव बिना दिव्य प्रेम तत्व को अनुभव सर्वथा दुराय है । जैसे मनुष्य दो पांव ते चल सके है। तैसे आधिदैविक प्रेम मार्ग में चलवे के लिये दीनता और दास्य दो पांव है । यह दीनता और दास्य भाव श्री वल्लभ चरण कमल में ही निवास करे है और लीलाधाम में निरवधि रसात्मक विलास है । यह विलास में विविध क्षण क्षण में नौतन नौतन रूपते जो रसात्मक भावोंकी उत्पत्ति होय है यह भाव संप्रदाय प्रदाता श्री वल्लभ के युगल चरण कमल है ताते आपके चरण कमल ही पुष्टि मार्ग में सर्व पुरुषार्थ की अवधि रूप है अब आगे कहत है के भक्ति मार्गाब्ज मार्तंड

रूपते आपके उभय चरण कमल के उभय कमल चिन्ह में संयोगात्मक विप्रयोगात्मक रस मकरंद है । सो प्रकट कर विकसित करत है ताते आप यज्ञकर्ता है, फेरी संपूर्ण निकुंजोमे प्रभुनको रमण सिद्ध करके विलास करावत है सो सकल रसनको भोग श्रीमुख स्वरूपते स्वयं श्रीवल्लभ प्रभु करत है। ताते आप यज्ञ भोक्ता है । रसउद्दीपन करता विलास कर्ता हुं आप है और वे रसते आप स्वयं परिपूर्ण हैं । ताते यज्ञभोक्ता है ।

प्रतिक्षण निकुंजस्थ लीला रससु पुरितः । रासलीलैक तात्पर्यः ।
रासादि लीलामृत जलधि भराक्रांत सर्वोपिशश्वत् ।
वृन्दावन सम्पत्ति अंग अंगे ।

आदिकी यहां संगति करनी । यह संपूर्ण विलास प्रेमको है।

लीलाधाम प्रेमकी राजधानी है। वहां स्थावर जंगम सब प्रेम तत्व के ही बने भये है। ताते संपूर्ण लीलाधाम प्रेम तत्व ते ही पूर्ण और श्रीमहाप्रभुजी स्वयं प्रेम (सुधा) स्वरूप है। आप श्रीवल्लभ के मूल सुधा (प्रेम) स्वरूप में सु ही गौलौक धाम को लीलाविहार प्रकट भयो है तासू जेसो कारण तेसो कार्य होय यह न्यायते आपके मूल सुधा स्वरूप मे सु प्रकट भयो । बहारके गौलौक विलास भी प्रेम तत्व ते पूर्ण है ताते कह्यो,

प्रेम भावे प्रेम गावे प्रेम में अनुदिन रहे ।
प्रेम सेवा करे, करावे प्रेम बानी नित कहे ।।

और आपश्री वल्लभ ते अनंत प्रेम समुद्रते पूर्ण है, ताते श्रीकृष्णमें हुं प्रेम को दान करे है। फेर वाके विलास ते पूर्ण

पूरित होय है। ताते अति भरिता है कहेवे को तात्पर्य यह है की लीला परिकर तथा युगल हुं सुधा स्वरूप श्रीमहाप्रभुजी के सानिध्यता (आधिन रही के) अनुसरत है। 'सानिध्य मात्र दत्त श्रीकृष्णप्रेमा' याको द्विधा भाव है एकतो श्री कहवे ते स्वामिनीजी तथा ठाकुरजी उभयको प्रेम दान करवेवारे आप श्रीवल्लभ है। ताको प्रमाण **सप्त श्लोकी** में देखनो। दूसरो भाव पुष्टि दैवीजीव जो अंगीकृत है सो आपके चरण कमल सानिध्य रहे तब ताकु युगल भाव संबंधी प्रेमको दान करत है। अर्थात् भूतलस्थ दैवीजीवको आपकी सानिध्यता ते दैवीजीव में स्वामिनी भावको और पुं भावात्मक कृष्णभाव को दान करी फेर उभय भाव संबंधी विलास में प्रेम को दान करी दैवी जीव को लीला मध्यपातित्व सिद्ध करत है। युगल में तथा लीला परिकर में प्रेम को दान करी ताके विलास के भोक्ता हुं आप है। लीला परिकर समस्त में भोक्ता रूपे श्रीकृष्णस्य देव श्रीवल्लभ सदा स्थिति है अर्थात् समस्त लीला विलास के भोक्ता श्रीवल्लभ ही हैं। रासस्त्री भाव पूरित विग्रह सो श्रीकृष्णा **हार्दवित** स्वरूप ते श्री भागवत गूढार्थ प्रकाशन करने में परायण है । श्री भागवत को भावार्थ श्री कहेवे ते स्वामिनीजी और भागवत कहेवे ते ठाकोरजी यह उभय युगल की गूढ रसात्मक लीला प्रगट करवे वारे श्रीवल्लभप्रभुजी है । सो रसात्मक उभय युगल रूपी पियूष समुद्र मंथन करन में आप ही समर्थ हैं । सौ समुद्र मथनार्थ बंधादिक कर्म प्रकट करते भये । ताते आपको नाम कर्म मार्ग प्रवर्तक है । या प्रकार रसात्मक रूपये १०८ नाम नित्य

लीला में सदा बिराजमान है । सो एक नाम में रसात्मक लीला के कोटि कोटि समुद्र है । ताते श्रीसर्वोत्तमजी जो है सो सर्वोत्तम ही है। यह विलास आगे तो अवधि रहित है । या प्रकार लीलाधाममें अनंत कुंज निकुंजस्थ अनंत युगल स्वरूपों में लीला परिकरन में स्वयं पूर्णानंदः पूर्णकाम स्वरूपते सबन के पूर्ण काम करवे वारे श्री वल्लभ प्रभु को ही जाननो। यह संपूर्ण प्रकार जतायवे कुं अंकुश चिन्ह धारण कियो है। तेसेई भूतल में प्रकट भई मूलधामकी सृष्टि श्रीवल्लभ प्रभु के चरणगत अंकुश को आश्रय करेंगे ताके संपूर्ण मनोरथ की सिद्धि स्वयं श्रीमहाप्रभुजी करेंगे और श्रीमुखवियोगाग्नि रूप महाफल को दान करेंगे । यामें संदेह नही (जेसे हस्ती पे बेठयो महावत अकुंश के बल पे अपनी अभिष्ट राह पर ले जाय है तेसे आपके चरण कमलको अंकुश चिन्ह आपके शरण में रहे भये दैवी जीवको वशमें रखके यह मनको मूल धाम के लीला में ले जाय है । यह चरण कमल के चिन्ह त्रितीयात्मक स्वरूप श्रीवल्लभ के है । आपको मूल स्वरूप केसो है ताको ज्ञान प्राप्त करके ता भांति चरण कमलको आश्रय करके चरण चिन्हको जो जन चिन्तवन करे है ताके मन कुं आपके चरण चिन्ह अंकुश आप की मूल लीला में प्रवेश करावे है । ऐसे महावत अपने अभिष्ट मार्ग पे हस्ती को ले जाय है तेसे यह अंकुश चिन्ह आपके चरणकमल के आश्रित जन कुं आपकी मूल लीला में प्रवेश करावे है । अंकुश चिन्ह को या प्रकार आधिदैविक अद्भुत कार्य भाव विचारी के आप के युगल चरण कमल के आश्रित होय रहेनो ।)

अंकुश चिन्ह को धोल

बीजू चिन्ह अंकुश नुं शोभे रे, चरणन पर हुं तन मन वारु रे ॥
जीव नु मन छे मातंग रूप रे, पुष्टि पथ देखाऽयो वल्लभ भूपरे ॥
चरण अंकुश मुकी भक्त शीशरे, ठे लीने कीधा मारगमां इक्षरे ॥
मातंग मन एकयु न रहे छे रे, तेने अंकुश वश करी ले छे रे ॥
जेने शिश ए अंकुश जानोरे, ते हवे पाम्यो मारग मानो रे ॥
जेने हृदय मां अंकुश लीधुरे, तेनु पुष्टि कारज सहु सिध्धु रे ॥
जीव ने ए चरण नित्य भजवारे, माया मोह सर्वे तजवारे ॥

... यहां अंकुश चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो....

मीन

वाम चरण में तीसरो चिन्ह मीन को है ताको भाव कहत है,

यह मीन को चिन्ह प्रिया-प्रितम उभय में भी है ताते उभयभावात्मक है । मीन अत्यंत चंचल होय है । जल में रहत है तैसे श्रीगोवर्धनधर सकल व्रज में नेत्र कटाक्ष के बल ते सब व्रजवधुन को मोह लिये। सो श्री गोवर्धनधर के नेत्ररूपी मीन कुं जीत के श्रीमहाप्रभुजी यह मीन कुं अपने चरणनमें राखत भये ताको आश्रयते श्रीजी कुं आनंद है। सो यह मीन चिन्ह को आश्रय ते स्वरूपानंद को अनुभव होय है। 'स्फुरत कृष्ण प्रेमामृत रस भरिताः' रूप पने ते श्रीठाकोरजी के संपूर्ण प्रेम (सुधा) रस को चरण कमल में धारण करवे वे प्रेम सरोवर में श्री ठाकोरजी के नेत्र रूपी मीन कुं राखत भये । ता करी ये हुं जतायो जो श्री मतस्वामिनीजी के श्रीमुख अधर सुधा सुं श्री ठाकोरजी को नेत्र द्वारा जो रसानंद है सो श्रीमहाप्रभुजी के चरणमें मीन होय के रहत है । ताके आश्रय ते स्वरूपानंद को दान होय अथवा सकल वज्र में नेत्र कटाक्ष करी के सबन को श्रीठाकोरजी मोह लिये ता करी सगरो रस वज्र सुंदरीनके हृदयते खींच के श्रीठाकोरजी अपने नेत्र में राखत भये । वह नेत्र रूपी मीन श्रीवल्लभ के चरण कमल में है ताते हे मन तुं श्रीवल्लभ चरण कमल को सेवनकर ।

शंका - उपरोक्त कथन में यह कह्यो के यह मीन चिन्ह प्रिया-प्रितम उभयमें हु है । सो उभय भावात्मक मीन चिन्ह श्रीवल्लभ के चरण कमल में है तो जब प्रिया-प्रितम को चरण कमल में हुं यह मीन चिन्ह है । अब श्रीमहाप्रभुजी के चरण कमल के मीन चिन्ह की कहा विशेषता है ? अथवा या विशेषता कहेवे को कहा आशय है ?

समाधान -ताको आशय ऐसो है के श्री ठाकोरजी के नेत्र रूपी मीन श्री प्रियाजी के सौंदर्य लावण्य सुधा पान में सदा मग्न रहत है । यह सुधा पान ते क्षण एक न्यारे नहीं होय है। जैसे मीन जल बीना एक क्षण अपनो जीवन नहीं निभाय शके है जल ते न्यारे होते ही तलफते रहते है तेसे श्री ठाकोरजी के नेत्र रूपी मीन श्रीप्रियाजी के श्रीमुख लावण्य सुधा के पान विना तलफे है । तेसे श्री प्रियाजी के नेत्र रूपी मीन श्री ठाकोरजी के श्री मुख लावण्य सुधा के पान में सदैव निमग्न रहे है । परमानंद दासजी ने एक पद में कह्यो है के,

कमल मुख देखत तृप्ति न होय है।।
यह सुख कहा दुहागीन जाने रही निशा भर सोय।।१।।
ज्यों चकोर चाहत उडुराजे चंद बहत रही जोय।।
नेक चकोर देत नहीं राधा लेत ही पिय ही निचोय।।२।।

या पदानुसार श्री प्रियाजी के नेत्र रूपी मीन श्री ठाकोरजी के श्री मुख लावण्य सुधा को पान अविरत करत है । तोऊ लावण्य सुधा ने तृप्ति नहीं होत है । (कारण के यह दिव्य सुधामृत ऐसे ही अतृप्त स्वभाव वारे है) तेसे श्रीठाकोरजी प्रियाजी के श्रीमुख लावण्य सुधा को पान करत हे । सो

परमानंद दासजी पदमें गावत हे के,

आनंद सिंधु बढ्यो हरि तनमें।।
राधा मूख पूरण शशि निरखत उमंग चल्यो व्रज वृंदावन में।।१।।

तथा दूसरे पदमें,

राधेजुं के वदन की शोभा।।
जाही देख मन्मथ थाकयो कृष्ण मन लोभा।।१।।

या प्रकार श्रीठाकोरजी के नेत्ररूपी मीन प्यारीजी के श्रीमुख लावण्य सुधा के पास में सदा नीमग्न रहत है । तोऊ तृप्ति नहीं पावत है । यह उभय प्रिया-प्रितम के श्रीमुख जो लावण्य सुधा है। यह सुधा को स्वरूप ही श्रीवल्लभ को हे याको प्रमाण श्री सर्वोत्तमजी के तृतीय नामते प्राप्त होय है।

तृतीय नाम :- **‘श्रीकृष्णास्य’** हे श्री कहेवे ते स्वामिनीजी और कृष्ण - श्रीठाकोरजी यह उभय प्रिया-प्रितम के श्रीमुख स्वरूप श्रीवल्लभ है। ताते उभय युगल के श्रीमुख की लावण्यता में जो सुधा है। यह सुधा को स्वरूप हुं अनुक्त सिद्ध भयो। अथवा श्रीवल्लभ को विग्रह ऐसी सुधा के अनंत सागर में आक्रांत है। (आपको मूल स्वरूप जो अमूर्त सुधा हे सो या विध को ही जाननो) यह आपके विग्रह में जो अनंत सुधा सागर को विलास हे सो विग्रह में सु सब सुधा अवतरीत होय के आप के उभय चरण कमलमें स्थित भई है। ताते प्रिया-प्रितम के नेत्ररूपी मीन श्रीवल्लभ चरण कमल में ही स्थित कर रहे है। लीलाधाम में प्रिया-प्रितम तथा समस्त परिकर को जीवन सुधा ते ही हे। यह आपके चरण के मीन चिन्ह जताय रहे है। और जैसे प्रिया-प्रितम के नेत्ररूपी मीन की स्थिति आप श्रीवल्लभके चरण कमल में है। तेसे लीलाधामस्थ समस्त परिकर को हुं जाननो। अथवा लीला परिकर अथवा प्रिया-प्रितम समस्त के सुखकी अवधि आपके उभय चरण कमल मे हे। ताते श्री मत्प्रभुचरण गुंसाईजी कहत हे, **‘दुर्लभांधि सरोरुहः’** जहां पर समस्त लीला परिकर को निवास है अथवा समस्त लीला परिकर जहां सुं अपनो जीवन (सुख) संपादन करे हे। वह आपके **‘चरण सरोरुह’** की प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ है। या प्रकार आपके चरणकमल गत मीन चिन्ह की हुं विशेषता जाननो। यह आपके चरण कमल केसे है ? सुभग हे सु कहेवे ते सुंदर, भग कहेवे ते ऐश्वर्य - वीर्य - यश - श्री - ज्ञान- वैराग्य। यह छ रसात्मक धर्म जीनमें हे (यह छ धर्म सदानंद स्वरूप के हे)। आन्तर विलास में यह छ धर्म को कार्य है। ताते सबके आधार रूप अति सुक्ष्म है। भग को विशेषण सु हे ताको येही आशय हे के सदानंद स्वरूप के आतंर के यह छ रसात्मक धर्म सुं ही सच्चिदानंद स्वरूप को बहिरंग विलास सिद्ध होय हे जाको प्रमाण श्री मत्प्रभुचरणोक्त सप्त श्लोकी प्राप्त होय है। ऐसे सुभग मूर्ति श्री वल्लभ नाम सूं भूतल में प्रसिद्ध भई है। सो आपके चरण के दश नख चन्द्र सुधा पति है। सो अपनी शीतल किरणन सुं सकल स्वामिनीन को वियोग समे पुष्ट करत हे। अथवा दश नखचन्द्रो में सुं दशधा भक्ति प्रकट भई है। सो दशधा प्रकार के अनंत स्वामिनीजीओ कुं पोषण आपके दश नखचंद्र सुधापति ते होय है। (कारण के नख भी स्वरूपात्मक-सच्चिदात्मक है)

चरण कमल के तलवा जीनके आरुण है। अथवा प्रतिक्षण नौतन नौतन प्रेम अनुराग सुं पूरित हे। सो प्रियाजी को मुख सदृश हे। और आपके चरण को उपरी भाग श्याम हे। सो श्रृंगार रस पूरीत है। सो नील कमल सदृश श्री ठाकोरजी को मुख कमल है। सो उभय भक्ति मार्ग (संयोग-विप्रयोग) रूपी मुख कमल यह मुखारविंद की भक्ति रूपी जो नील अरुण शोभा हे सो तो निश्चय श्री वल्लभ चरण कमलमें हे। दश नखचंद्र की चांदनी फेल रही है तासुं यह चरण कमल एक अनुपम शोभा विविध प्रकार की अमंदताको धारण करत है। (श्रीहरिराय चरण आपके स्वरूप को अनुभव करते पदो मे वर्णन करते है -

श्रीवल्लभ तज अपुनो ठाकुर कहो कोन पे जैये हो ॥

तथा सुरदासजी हुं लीला प्रवेश के अनंत समे निष्कर्ष करके भूतल की सृष्टि को बोध करत हे के,

भरोसो दृढ़ इन चरणन केरो।।
श्रीवल्लभ नखचंद्र छटा बिन सब जुग मांज अंधेरो।।१।।

ताते श्रीवल्लभ सबन के जीवन मूडी हे, अब कहत हे, जो लीलाधाम में भौतिक चंद्रमा तथा भौतिक सूर्य को प्रकाश अथवा प्रवेश नाही है । रसात्मक धाम में चन्द्रमा कोन से हे सो कहे हे, रसात्मक धाम में रसात्मक प्रेम अमृत सुं भरी कोटि कोटि भौतिक चन्द्रमा कुं तीरस्कृत करे ऐसे परम अलौकिक श्रीस्वामिनीजी के और इनके भावात्मक श्रीजी के श्रीमुख ही चंद्रमा है ।

वहां लीलाधाम में अनंत स्वामिनीओं तथा अनंत

श्रीठाकोरजी के स्वरूप होय वे सुं अनंत अलौकिक चंद्रमां पूर्ण रूप सूं प्रकाश रह्यो है। जो श्रीमुख चंद्रमा में ते प्रेम रूपी अमृत के विविध कीरण फेल रहे हैं। ऐसे अनंत दिव्य चंद्रमा की सब शोभा श्रीवल्लभ नखचंद्रमा में समाय रही है। तासुं श्रीवल्लभ चरण तथा चंद्र की शोभा अनुपम है। अथवा अनंत आधिदैविक चंद्रमा के समूहात्मक आपके चरण कमल के दश नखचंद्र हे। परब्रह्म को स्वरूप या प्रकार को विलक्षण है। पुष्टि प्रभु अति सुक्ष्म धाम में निवास करे हे। अति सुक्ष्म कहेवे सुं जामे अनंत आकाशकी अथवा अनंत ब्रह्मांड की व्यापकता समाविष्ट होय गई है। ऐसो अति सुक्ष्म धाम पुष्टि प्रभुनके बिराजवे को स्थान है, ताते भौतिक स्थुल दृष्टि ते अति सुक्ष्म स्वरूप समज्यो नहीं जाय है। जहां मन वाणी पहोंच नहीं सके है। ऐसो पुष्टि प्रभुन को स्वरूप है। तेसो ही आपको धाम है। भूतलस्थ पुष्टि की मर्यादा में हुँ यह स्वरूप और धाम गये है। ताते श्री सर्वोत्तमजी में आपके नाम **वेद पारगः** और **सर्वज्ञात** बिराजे है, योगी पुरुषो अतिन्द्रिय पदार्थ तत्व कुं देख शके है। वे योगी लोक समाधीष्ट होय के जगत विषयते पृथक होय के आत्म प्रदेश में पहोंचे जाय है। ताकुं जो अन्य मानव की दृष्टि ते अगोचर दिव्य तत्व है। सो दृष्टि गोचर होय जाय है। तैसे ही पुष्टि भक्त हुं जगत प्रपंचसुं पृथक होय के स्वरूप चिन्तवन करते रहे तो ताकुं अति सुक्ष्म पुष्टि प्रभुनके लीलाधाम की समग्र लीलाके दर्शन प्रत्यक्ष होयवे लगे है।

श्रीयमुनाजी अष्ट सिद्धि के दाता है। तामे एक सिद्धि

ऐसी हे के परावृत चक्षु द्वारा लीला लोक को श्री यमुनाजी दर्शन करावे है। **परावृत चक्षु** कहेवे ते यह समजनो के एकादश इन्द्रियनको जगत प्रपंचादिक तथा देहादिक भौतिक प्रपंच ते निग्रह करके अन्तर मुख होय के श्री प्रभुन के स्वरूप को तथा आपके लीला चरित्र को चिन्तवन करते रहे तो इन्द्रियो की अन्तर मुखता चिन्तवन द्वारा बनवे सुं लीलाधामके प्रत्यक्ष दर्शन होय वे लगे है । सुबोधिनीजी (३.९.३२) में कह्यो है के जैसे काष्ट के मन्थन सुं काष्ट के भीतर को अग्नि प्रकट होय जाय है। तेसे चित्तवृति निरोध पूर्वक स्वरूप और लीला के चिन्तवन करवे सुं और तपरूपी विप्रयोग की अग्नि सुं एकादश इन्द्रियोकी शुद्धि करवे सु दैवी जीव के भीतर को दिव्य विश्व प्रकट होय जाय है। व्यास सूत्र के अणुभास्य प्रथम अध्याय के वैश्वानर अधिकरण में कह्यो हे के भगवान् को स्वरूप प्रादेश मात्र अणुरुप ते जीवात्मा में बिराजे हे, स्वरूप अणु होते छते अनंत ब्रह्मांड में व्यापक हे अथवा अनंत ब्रह्मांड की व्यापकता वारो स्वरूप ही अणु रूपते जीवात्मा की भीतर बिराज रह्यो हे। ऐसे विरुद्ध धर्माश्रय परब्रह्म को स्वरूप है। तासुं लीलाधाम और प्रभुन के साक्षात दर्शन करवे की अभिलाषा जीनकुं है ऐसे दैवी जीव कुं सर्व प्रथम जगत विषय देह। प्राण इन्द्रिय, अन्तःकरण में सुं निकासनो चाहिये, श्रीव्रजरत्ना गोपीजनों ने एकादश इन्द्रियन के विषयन में को समूल त्याग कियो है, तब महारास में स्वरूप को अनुभव करवे पहोंच शके, ताके जहां तांई जगह विषय तथा देहादिक विषय इन्द्रियोमे सुं दूर

न होय वहां तांई लीलाधाम और पुष्टि प्रभुन को स्वरूप जो महान अलौकिक है ताको प्रत्यक्ष दर्शन दुर्लभ है। करुणानिधि श्रीवल्लभ प्रकटीत यह मार्ग गोपीजनों के भावभावीत है। ऐसो त्याग गोपीजनोने कियो है तेसो त्यागजीनमें हे ऐसे रसिक विरही जन ही पुष्टि प्रभु को तथा तीनके लीलाधामको साक्षात् दर्शन कर सखे है। **“बिन वैराग्य नहीं पाइए गिरधर को अनुराग।”** एक प्रियतम प्रभु बिना जगत विषय विष समान दुःखदाई (कडुवो) न लगे वहां तांई प्रभु स्वरूप में अनुराग उत्पन्न नहीं होय, स्वरूपासक्त रसिक भक्तनकुं तो अपने प्रियतम प्रभु के सौन्दर्य लावण्य माधुर्यता के दर्शन बिना अन्य संबंध की गंध मात्रते मृत्यु सद्रश दुःख होय है। ताते श्रीमत्प्रभुचरण विज्ञप्ति में आज्ञा करत है,

अहं कुरंगी द्रग भंगी नांगी कृतोऽस्मियत।
अन्य संबंध गंधोऽपिः कंधरामेव बाधते॥

या प्रकार स्वरूपासक्त रसिक भक्त की अवस्था है। यह रतिपथ है सो पूर्ण परित्याग ते भर्यो भयो है। बहुधा पुष्टि शरणस्थ जीव ऐसे समजे हे के यह मार्ग ठोर मठरी को है। सुंदर सुंदर पकवानादिक सामग्री करके श्री प्रभुन को भोग धर के अधरामृत की भावनाते सेवन करनो और साधन सम्पत्ति है तो सुंदर श्रृंगारो तेल फुलेल वस्त्रादि ते और विविध मनोरथों में आनंद के अनुभव करके प्राकृत (भौतिक) अवस्था में ही अपनी कृतार्थता समजे हे और स्वस्थता को अनुभव करे है। वस्तुतः ऐसे साधकों ने गोपीजनों के तापात्मक विरह व्यथा भरे प्रेम पथको नहीं पहेचान्यो हे। तापात्मक प्रभु बिना

प्रेमको शिखर स्थान जो तन्मय अवस्था हे तापे पहोच्यो नहीं जाय है। भूतल स्थित दैवी जीव श्री प्रभुन की सेवा करे हे। सो अनोसर करायके श्री प्रभुन के वियोग समे जो वियोग दुःख होनो चाहिये ताको लववेश अनुभव नहीं है। जब व्रज ललनाओ कुं तो श्रीठाकोरजी गौचारण को पधारते ता समे गोपीजन प्राण विनाके चित्र (जड) जेसे होय जाते और दिवस प्रभु वियोग में अति कष्टते विलापते जब संध्या समय गौरज मंडित सुन्दर घुंघरारी अलकनसुं आवृत प्रिय मुख चन्द्रको दर्शन करते तब प्राणवान होते, कहां है भूतलस्थ आधुनीक पुष्टि पथ साधको में ऐसे दुःखको अनुभव ? भौतिक स्थिति में ही प्रभु सम्बन्धी आनन्दको अनुभव करके अपनी कृतार्थता समजेहे और वियोग दुःख रहित होय के स्वस्थता को अनुभव करेहे, ऐसे साधकोकुं मुख्य फल भजनानंद स्वरूपानन्द को दान नहीं होय है, सायुज्य अथवा वैकुंठ में सेवोपयोगी देहकी प्राप्ति होय है, कारणके देहादिक संघात तापात्मक भाव के सेवनते सर्वात्म भाववान न होय वहांताई महान अलौकिक प्रभुनके साक्षात् स्वरूपसुं रसानुभव करवेकी योग्यता नहीं होय शके, और सर्वात्मभाव व्यसन जैसी काष्टापन्न दशामेही सिद्ध होय है । ताते लोकातीत भये विना पुष्टि प्रभुनके अति सुक्ष्म दिव्य प्रदेशमें प्रवेश कैसे होय शके ? ताते भजनानंद तो साक्षात् स्वरूपानुभवरूप हे. सो तो दुःखते भर्यो भयो है । तापात्मकहे एक एक क्षण प्रिय वियोग में युग समान बिते है - प्रत्यक्ष प्रलकान्तर है वनान्तर देशान्तर विरह के अनुभव करायवेवारो हे, ऐसो अनुभव जामें नहीं ताकुं भजनानन्द

स्वरूपानुभव को दान नहीं होय शके, ताते तापात्मक प्रिय वियोगजनीत दुःखभरे प्रेमबीज जो भक्तने अपने हृदय में बोयो है । सोई साधक गोपीजनोके अग्निमार्ग पे चल शके है और प्रभु प्राप्ति कर शके है। ठोर, मठरी आदि विविध सामग्री में आधिदैविक भावनको स्फुरणहो और ता भावनासो श्रीप्रभुनको समर्पण होय ताको श्रीठाकोरजी साक्षात् अंगीकार करे ता अधरामृतके सेवन में तो लीला और साक्षात् स्वरूपके दर्शनकी तीव्र तापाग्नि प्रकटेहे, जब आधिदैविक भावना प्रकट नहीं भई है और प्रसाद के खाने भोग करनो है[1] । तामे तो रसना (जीभ) के स्वादकी पूरती प्रसाद कर देय है । और श्रीप्रभुनकुं सुन्दर-सुन्दर श्रृंगार वस्त्र धरिके ताके दर्शन करके हृदय में चोट नहीं लगी तो सुन्दर सुन्दर श्रृंगार वस्त्रो को भी कहा प्रयोजन ? गोपीजनोकी तो दर्शन करत मात्र में यह दशा होय हे के '**मनमृग वेध्यो मोहन नयन बानसो तथा कमलसी अखीयां लाल तीहारी । तीनसो तकी तकी तीर चलावत बेधत छतीया हमारी**' या प्रकार प्रियतमके दर्शन में नेत्रकी कटाक्ष ते हृदय भेदायो नहीं तो सुन्दर सुन्दर श्रृंगार वस्त्रों धरवेको कहा प्रयोजन सिद्ध भयो ? ताते यह रतिपथ परम काष्टापन्न है । कोई बिरलाही यह अग्नि मार्ग पर चले है, ताते कह्यो हे के **शीश दीये नहीं होत निबेरो-** अब प्रसंग वसात आपके चरण के नुपूर को वर्णन करत हे के आपके चरण अंगुरी तो कमल पल्लव हे ताके आगे चक्रवाक हे और निलमणि के नुपूर कुंजन करते धरे हे। सो

---

[1] अणुभाष्य प्रथम अध्यायके आनन्दमय आधिकरण में अन्नमयादि विभुती स्वरूप की और आनन्दमय स्वरूप को तारतम्य दिखायो है ताको विचार उत्तम अधिरारीकुं उचित है।

आपके नुपूर कुंजन ने विशेष करके मानवती के मान को हरण कर लियो है । नुपूर कुंजन परम कौतुक करवे वारो है। सो श्री प्यारीजी जब कोई प्रकार ते मान नहीं छोड़े है ताकुं एक नुपूर के नादते क्षण मात्र में मनावत भये, यह कौतुक समग्र निकुंज में फेल्यो। जो यह कहा आश्चर्य भयो?

या प्रकार मानवती के मानकुं हरण करता और रसिकनके मनकुं मोह करता नुपूर है। माननी को स्मर उदय भयो, सहसा कछु बोले नहीं। प्रियतम कुं आप धाय आलिंगन करत भई, विरह मग्न कुं नुपूर नाद परम मोद करता है (**शंका** - आप श्रीवल्लभ के चरण कमल के नुपूर नादते श्रीस्वामिनीजी को मान केसे दूर भयो ?)

समाधान - श्रीवल्लभ 'रासस्त्रीभाव पूरित' और स्त्री गूढ़ भावो पुष्टि मार्ग तत्व रूप हे। स्त्री गूढभाव और रासस्त्रीभाव रतिकेली के सार भाव रूप है। अनंत रासस्त्री स्वामिनीओको एकट्ठो भयो रमणाग्निको प्रचुर भावता भावते पूरीत विग्रह श्रीवल्लभ को है। तेसेही आपके चरण कमलके नुपूर हूं भावसुं पूर्ण हे। ताते नुपूर नाद श्री स्वामिनीजी में स्मराग्निको प्रचुर पने उदय करवे वारो है। श्री वल्लभ विग्रह की प्रत्येक रोम स्मरकी प्रचुर अग्नि सूं पूर्ण है। और लीलाधाम हुं ये ही अग्नि सुं व्याप्त है तथा श्री वल्लभ को भोग हुं येही अग्नि है ताते आप वैश्वानर नाम ते प्रसिद्ध है। यह वैश्वानर मधुर अग्नि को ज्ञान दुराराध्य है। लीला अन्तःपाति स्वकियेन जो स्वतंत्र भक्ति वारे है ताकुकी यह अग्नि स्वरूप को बोध है। आप अति करुणावान होयके विरह की संपूर्ण

सम्पत्ति सहित साकार स्वरूपे भूतल पे प्रगट भये। सो लीला अन्तःपाति स्वकियेन के भाग्य विस्तारवे के लिये प्रकट भये है। (लीला अन्तःपाति कहेवे ते केवल कृष्णास्य स्वरूपको जामे विलास है ऐसे धर्मी विप्रयोगावस्थावारे जो भक्त है ताकुं ही श्री गोकुलेश प्रभु लीला अन्तःपाति कहत है) ताते श्री मत्प्रभुचरण वल्लभाष्टक में कहत है "**प्रादुराक्षीत भुमौयः सन्मनुष्याकृति अति करुणस्तं प्रपद्ये हुताशम**" मानुष तनुधरी के भुतले प्रकट भये।

श्रीवल्लभ अति करुणावान है। जो स्वरूप लीलाधाममें हुं बाहिर प्रकट नहीं है। युगल तथा लीला परिकर समस्त में आत्मारूप ते सबन के भीतर रहवेवारो आपको मूल कृष्णास्य स्वरूप है। सोई श्रीवल्लभ महाकारुणिक भुतल स्थित अपने विरही स्वकीय के हितार्थ प्रकट भये है। ताते आप अति करुणावान है और कृष्णदासजीने पदमें कह्यो है,

शरण वल्लभ गही भाग्य को पार नहीं,
भजो कृष्णदास अंतरजामी॥

अंतर जामी रूपसुं भूतल की सृष्टि और लीलाधामस्थ परिकर में आप श्रीवल्लभ सबन के जीवन मूडी (जीवनदाता) है, अर्थात् सबनके प्राण-आत्मा श्रीवल्लभ है, वेहीजन महाभाग्यवान है के जीनने श्री वल्लभवर कुं रीझाये है ऐसे श्रीवल्लभ के शरण में युगल स्वरूप संयोगावस्था में, क्षण क्षण में रहत है, श्रीवल्लभ जीन की गती है। ताते पृथक् शरणमार्गोपदेष्टा आपको नाम है जाके शरण मे युगल रहे। सदा सर्वदा प्रिया-प्रितम यहां ही एक स्थान करी बिराजे है।

सहज प्रितते युगल ने श्रीवल्लभ स्वरूप हृदय में धारण किये है, एक तिनके आश्रय सुं सर्व रीतसुं श्रीवल्लभ रूप ही होय रहे है। ताते प्रेम (सुधा) स्वरूप सबनके जीवन मूरि श्री वल्लभ कोही समस्त परिकर गुणगान करत है। या प्रकार युगल एक क्षण हुं सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ के चरणारविंद नहीं छोड़त है।

रासादि अनंत लीलाओं में जो आनंद रह्यो है ता आनंद के सार भुत सुधा-सोई सुधा को मूर्तिमान (घनीभूत) स्वरूप श्रीवल्लभ है । ता स्वरूप कोही कृष्णास्य कहत है । ताके और हुं पर्याय नाम है सो कहत है । वैश्वानर मूल पुरुषाकार सुधा स्वरूप और स्फुरत कृष्ण प्रेमामृत की सुभग मूर्ति तथा स्त्री गुढभावो पुष्टि मार्ग तत्वम ऐसे यह सुधा स्वरूप ही पर्याय नामोते प्रसिद्ध है । यह सुधा युगल स्वरूप में - स्वामिनीजी गणन में तथा पशु पक्षी कुंज निकुंज समग्र लीला सामग्रीमें प्रविष्ट भई थकी सर्व की आत्मा रूप ते समग्र में व्याप्त है रही है, जैसे के देह को आत्मा जीव है, यह जीवात्मा देह में न रहे तो देह की कोई क्रिया नहीं होय शके है, तैसे रसात्मक धाममें समस्त लीलापरिकर लीला सामग्री है। आत्मा रूप यह सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ ही है । यह सुधा स्वरूप की प्रेरणा सुं ही लीला धाम समस्त की प्रवृत्ति होय रही है ताते श्री मत्प्रभुचरण ने 'श्रीकृष्णज्ञानदः गुरुः' यह नाम प्रकट कियो है । श्री कहेवे ते स्वामिनीजी तथा श्रीठाकुरजी को हुं ज्ञान देयवेवारे सबन के मूल गुरु स्वरूप (रसात्मक क्रिया की प्रेरणा करवेवारे) श्रीवल्लभ ही है तैसे अक्षरात्मक

अनंत विश्व की तथा भौतिक अनंत विश्व की आत्मारूप श्रीवल्लभ को ही जाननो, परंतु आधिदैविक लीला धामस्थ सृष्टि में श्रीवल्लभ आधिदैविक स्वरूप ते सबन की आत्मारूप ते बिराजे है और आध्यात्मिक सृष्टिमें आपको आध्यात्मिक स्वरूप है और आधिभौतिक सृष्टि में आप आधिभौतिक स्वरूप ते सबन की आत्मा रूप ते बिराजे है।

त्रिविध विश्व में, अर्थात् त्रिविध अनंत ब्रह्मांडों में श्रीवल्लभ बिना और कछु नाही है, और यह त्रिविध सृष्टि हुं नित्य है। ताको विलास हुं नित्य है । कारण के “एकोऽहं बहु श्याम” आपने अनंत रूप ते क्रिड़ा करवे की इच्छा करी तब त्रिविध सृष्टि की रचना करीके त्रिविध स्वरूप ते आप क्रिड़ा करत है, तदपि पुष्टि सृष्टि के दैवी जीव आधिदैविक विश्व के होयवे सुं भौतिक तथा आध्यात्मिक सृष्टि ते प्रथक होयके अपने आधिदैविक लीलाधाममें स्थित होयवे को प्रयत्न करे । अब कहत है जो आपके १०८ नाम है सो लीला धाममें नित्य बिराजमान है । निज धाममें जो जो लीला नित्य अनंतपने होय रही है ताके अनुरूप भावनावारे महान अलौकिक १०८ नाम है । ताते श्री प्रभुचरण गुसांईजी आपके प्रत्येक नाम कुं रसात्मक गुणोके निधि (सागर) कहत है, और १०८ नाम अंतरगत कोई कोई नाम भुतल चरित्र संबंधी है । तहां ऐसो समजनो के साधन अवस्था वारे भक्तनके कार्यरूप आपके जो चरित्र है सो आपके नाम वारो स्वरूप आध्यात्मिक कार्य करे है और सोई नाम को सिद्ध अवस्थावारे लीला धामस्थ भक्तों में अथवा भूतलस्थ आधिदैविक

अवस्थावारे भक्तनमें जो कार्य है (आपको जो चरित्र है) सो आपको आधिदैविक नाम स्वरूप है। अब भूतल चरित्र संबंधी नाम को स्वरूप या प्रकार जाननो जैसे कि, मायावाद निराकर्ता और **मायावादाख्यतूलाग्निः**। यह नाम भूतल संबंधी चरित्र के है, मायावाद में जगत असत्य माने है ताको खण्डन करीके ब्रह्मवाद को स्थापन कियो और सब पदार्थकी भगवद्रुपता जताई और दूसरे नाम में मायावाद रूपी बड़े पर्वत कुं अग्नि की एक चिन्गारी ते जलाय देवे में आप समर्थ है। यह दोनों नामोको कार्य वस्तुतः निजजन के लिये ही प्रतित होय है कारणके आपको भुवि प्राकट्य प्रयोजन तो लीलाधामते बिछुरे निज सृष्टि के लिये है, निजजन में जो देहाध्यासादि पंचपर्वा आ विद्या है सोई मायावाद है। सो आत्मवाद नहीं यह मायावाद रूपी अविद्या जो जन्म जन्मान्तर की पाछे लागी है और लीला धामकी सीमातक बड़े लंबे पर्वत की समान खड़ी है, ताकु नेक कृपा दृष्टि रूप अलौकिक अग्नि के एक विस्फुलिंग ते दग्ध कर देवेमें आप समर्थ है, अर्थात 'तूल' पदते रूई के बड़े पर्वत कुं आपकी कृपादृष्टि रूपी अग्नि के एक स्फुलिंग जलाय देयवे में समर्थ है। यह कार्य भूतल संबंधी भयो तीनके दोय नाम कहे, अब लीला धाम में मायावाद निराकर्ता तथा **मायावादाख्यतूलाग्निः** यह दो नाम की लीला वहां कैसे घटे ताकुं कहत हे के, श्रीस्वामिनीजी के मान समय अंतरंग सखी आयके समजावे है। तोऊ प्यारीजी मान छोडत नांही कहां इनके पायन कछु मेंदी दईरी। ऐसे-ऐसे अनेक रसरूप वाक्य ते श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी सुं

प्रतिकूल होय है और खंडितामें हुं जैसे प्रतिकुल वाक्य भक्त भगवान् प्रति कहत है। यह जो खंडनरूप मायावाद सो मायावाद को स्वरूप आधिदैविक है, यह मायावाद को निराकरण लीलाधाममें सखी द्वारा प्रेरणा करके श्रीवल्लभ ही करावत है और प्रभुन को संगम करायके साकार ब्रह्मवाद को स्थापन संयोगानुभव सु करावत है ।

यह ''मायावाद निराकर्ता'' नाम को कार्य भयो अब मायावाद ख्यतूलाग्नि नाम के कार्य में श्री प्रियाजी जब गाढ़ मान में यह बिराजे है तब काहु प्रकारते मान छोडत नाही। ता समय श्रीवल्लभ यह गाढ़ मान रूप बडे पर्वत कुं अनेक विलक्षण चरित्र ते दुर कर देत है जीन के चरण के नुपूर नाद ते श्री स्वामिनीजी मान को त्याग करते भये ऐसे अनेक विलक्षण चरित्रवारे श्री वल्लभ है। सबन के तीन-तीन स्वरूप है तैसे माया हुं त्रिविधा है, लीला धाम में आधिदैविक, रसरूप, आनंदरूप माया को स्वरूप जाननो और रसात्मक त्रिगुणातीत श्रीवल्लभ के मूल स्वरूप केवलकृष्णास्य को जामे विलास है । यह धर्मी विप्रयोग विलास में आधिदैविक मायाकी गंध मात्र हुं नहीं है । ताते आपके मूल स्वरूपकुं गुणातीत कहत है । यह धर्मी विप्रयोगात्मक विलास खंड और निरवधि है, तामे मान खंडिता को सम्भव नहीं ।

सर्वाज्ञात लीलातिमोहन : यह मुल वैश्वानर पुरुषाकार सुधा की बहार विहार करवे की इच्छा भई तब गोलोक धामकी रचना करते भये । तामे अनंत स्वामिनीजीओं सु रसात्मक त्रिगुणात्मक विलास को **अनुभव** करे है । मूल

पुरुषाकार सुधा स्वरूप कृष्णास्य को विलास मूल स्वरूपते धर्मी विप्रयोगात्मक अनन्त स्वामिनीजीओं में अखंड है । जीनकी अवस्था को ज्ञापक नाम, स्वानंद तुन्दिल है। ताते सबन के आश्रय रूप, सबन के जीवनरूप, सबन के प्रतिक्षण नौतन नौतन आनंद दान दाता सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ को ही जाननो। अति प्रिय कुं वल्लभ कहे जाय सो सब की आत्मा रूप सु सब के अंतर्यामी रूप सूं सुधा स्वरूप श्रीकृष्णास्य बिराज रहे है। या प्रकार सबन कुं सुखद होयवे सुं नुपूर नादते स्वामिनीजी के गाढ़ मान को छोडाय प्रितम को मिलाप कराय विलास सुखको दान करत है। यद्यपि आपके भूतल चरित्र संबंधी नामों को कार्य लीलाधाम में न होय तो १०८ नाम को विहार लीलाधाम में नित्य है। यह कथन में विरोधता होय है और श्रीगोकुलेश प्रभु ने श्रीसर्वोत्तमजी की बृहद टीका में चौथे श्लोक में 'प्रवक्ष्यामी पद' के विवरण में कह्यो है के यह नाम पूर्व सिद्ध है, नित्य है ताते भूतल संबंधी चरित्र वारे नाम को कार्य लीला धाम में भी मानवे योग्य है।

अब आगे कहत है कि, माननी के मान मनायवे श्रीकृष्ण को साकार ब्रह्मवाद स्थापन करनो, वचनामृत माननी के भावको उद्‌बोध करनो, नुपूर कवणीतते रतिरस प्रेमको प्रादुर्भाव करनो, ताते प्रेम प्रकट कर दीनो और मान छुडाय निकुंज में रमण विहार करते भये और क्षण पहेले तो श्रीप्यारीजी मानवती होयके कहते भये, 'जैसे माई हों जीवन भर जीवुं तो लो श्रीमदन गोपाल लाल के पथनपानी पीवुं' ऐसे माननी कुं एक नुपूर नाद ते सब मानकी टेक छुडाय रस विलास करावते

भये। ताते यह देख सगरी निकुंज की स्वामिनीजी में कौतक सह हास्य रस प्रकट होतो भयो यह श्री महाप्रभुजीके चरण कमल की मकरंद को रस स्वाद तो एक युगल ही जाने है (ऐसे अनंत युगलो में सेव्यमान श्रीवल्लभ प्रभु है) ताते वे चरण सरोवर में प्रिया-प्रितम के मनरूपी मीन विहार करत है यह भावते श्रीस्वामिनीजी ने मकराकृत कुण्डल प्रियतम श्रीठाकोरजी के कर्ण में धराये है श्रीजी कुं श्रीमहाप्रभुजी की प्रसादी वस्तु ही प्रिय है ताते कह्यो राधा अधर सुधा विना पियु ने विभुते कई नव भावेजी।

याते आपकी प्रसादी ही धारण करत है प्रसादी ही अरोगत है। भूतल में आपकी कानीते भक्तनकी समर्पित सामग्री अंगीकार करत है। आपके हे संबंध वीना की कोई भी वस्तु को श्रीजी अंगीकार नहीं करे है। श्रीजी महाप्रभुजी के संबंधवारी वस्तु को ही अंगीकार करे है। ताको अभिप्राय, आप श्रीवल्लभ सुधा स्वरूप महामधुर मधुरापति है। ऐसे श्रीअनिवर्चनीय मार्धुयता श्रीवल्लभ के संबंध वारे प्रत्येक पदार्थ में रही भई है तासो श्रीवल्लभ संबंध वारी प्रसादी वस्तु को ही श्रीजी अंगीकार करे है। श्रीवल्लभ विग्रहकी प्रत्येक रोम मधुर सुधा के सागर ते पूर्ण है तामे प्रिया-प्रितम को मन रूपी मीन डुब्यो ही रहत है। पद्मनाभदासजी के छोला में श्रीवल्लभ के संबंध सुं महामधुर सुधाको भोग श्रीमथुरेशजी करत हते ताते पद्मनाभदासजी कुं छोडके श्रीमथुरेशजी अडेल नहीं पधारे पद्मनाभदासजी ने श्रीठाकोरजी सुं विनंती हु करी के राज आप श्रीमहाप्रभुजी के घर पधारो

तब श्रीठाकोरजी ने आज्ञा करी के मोही तो तीहारे छोला बहुत प्रिय है ताको कारण पद्मनाभदासजी की निष्ठा श्रीवल्लभ के मूल स्वरूप में हती तासु तत्सारभूत रासस्त्री भाव सिद्ध भयो हतो ता भावनात्मक सुधाके जामें निरवधि रसानुभव हे ता निरवधि आनंद सुधा को भाव पद्मनाभदासजी के छोलामें हतो तासुं पद्मनाभदासजी कुं छोडके अडेल नहीं पधारे। यहां पर यह शंका होय के भूतल प्रादुर्भूत श्रीवल्लभ रासस्त्री भाव पूरित विग्रह स्वरूप ही तो फेरी श्रीमथुरेशजी आपके पास अडेल क्यों नहीं पधारे ? यह शंका में कहत हे के श्रीमहाप्रभुजी के जहां अथवा आपके वंशजके वहां जो स्वरूप बिराजे हे सो तो जगत उद्धारक रूप सुं और नंदालय की भावनासुं तथा पुष्टि मर्यादा सह बिराजे है। यासुं गज्जन धावनजी के घरपे ते श्रीनवनीत प्रियाजी जब श्रीमहाप्रभुजी के पास पधारे है तब श्रीनवनीतप्रियाजी ने श्रीवल्लभ के संग पोढवे की आज्ञा करी तब आपने वेद मर्यादा और मार्ग मर्यादा के रक्षण के लिये नांई करी और बड़ी शैया पोढवेके लिये सिद्ध करवाई, या प्रकार आप मर्यादा को रक्षण करत है और पद्मनाभदासजी कुं तो आप श्रीवल्लभ ने प्रमेय स्वतंत्र भक्ति रस को दान कियो है और शुद्ध पुष्टि वरण हे ताते प्रमेय स्वरूपसुं मर्यादा रहित पद्मनाभदासजी के वहां बिराजके स्वतंत्र भक्ति रस को अनुभव करायो (प्रमेयात्मक स्वतंत्र भक्ति मे जो विरुद्ध धर्माश्रय ऐश्वर्य है यह ऐश्वर्य धर्म को कार्य पद्मनाभदासजी ने पुत्र कामनावाली एक वाणी कुं अपनो चरणोदक कर दिखायो हे। अथवा स्वामी सेवक उभय ने स्वतंत्र भक्ति रस को अनुभव कियो अथवा पद्मनाभदासजी की निष्ठा रासस्त्री भाव पूरित विग्रह स्वरूप में पूर्णपणो है और धुराधिपति श्रीवल्लभ में वेष्टित होयवे सुं मधुर सुधा भाव पद्मनाभदासजी कुं सिद्ध होयवे सुं यहां मधुर भाव में श्रीमथुरेशजी वशीभूत होय गये, जेसी माधुर्यता श्रीवल्लभ में है तेसी ही आपके अनन्य पतिवृत भावी जनमें है। कारण के उपास्य के गुण उपासक में प्रवेश करत है अथवा पति जेसो हे वृत्त जाको सो पतिवृता कहे जाय, या कथन सुं श्रीवल्लभ में जो अचिन्त्य ऐश्वर्य है सो सब पतिवृता भावीपन अपने में धारण करे है। श्री पद्मनाभदासजी को यहा प्रकार को अनुभव हे ताको प्रमाण श्रीगोकुलेशजी ने श्रीसर्वोत्तमजी की बृहद टीका में ‘सुखसेव्य’ नाम में दिखायो है। जिज्ञासुं कुं वहां वहां देखनो । तासुं पद्मनाभदासजी के हाथ सुं धरे भये छोला में रासस्त्री भावरूप महामधुर सुधा को भोग श्रीठाकोरजी करत हते । ताते श्रीठाकोरजी पद्मनाभदासजी कुं छोडके अडेल नहीं पधारे। अथवा श्रीमथुरेशजी को सेवन पद्मनाभदासजी रासस्त्री भाव पूरित विग्रह स्वरूप श्रीवल्लभ के भाव सुं ही करत हते। श्रीवल्लभ ने रासस्त्री भाव पूरित स्वरूप सुं श्री मथुरेशजी के स्वरूप में ईयता (गणना) रहित सुखको अनुभव करायो है ।

भगवान पुष्टि पुरुषोत्तम ‘रसोवैसः’ रसरूप हे भक्त को जेसो भाव हे तेसोही स्वरूप धारण करत तेसोही अनुभव करावे है, स्वरूप चाहे श्रीजी को होय-चाहे बालकृष्णजी को होय परन्तु भक्तनको जेसो भाव है तेसो स्वरूप सुं प्रभु सब

अनुभव करावे है। जैसे के रस की चासणी कुं जेसी आकृति के बीबा में ढाली जाय है, तेसी ही आकृति रस की होय जाय है। तेसे भक्त को भाव बीबा स्थानीय है और भगवान् रस स्थानीय है। ताते पद्मनाभदासजी को सिद्ध भाव रासस्त्री भाव पूरित महामधुर सुधा को हे, तेसो ही अनुभव मथुरेशजी स्वरूप में कियो है, जैसो अनुभव पद्मनाभदासजी ने श्रीमथुरेशजी के स्वरूप में कियो है। तेसो ही अनुभव महाभाग्यवान श्रीरजोबाई ने श्रीबालकृष्णजी के स्वरूप में कियो है । तांते यह मार्ग में भाव की ही प्राधान्यता है । पद्मनाभदासजी को ऐसो उत्कर्ष अधिकार है । ताते श्रीगोकुलेशजी कोटि में विरल कहत है,

भक्त तो वा समे ओर हुं हते,
परन्तु विनके जेसे तो वेही।।

श्रीवल्लभ के मूल सुधा स्वरूप को शरण आश्रय बहोत दुर्लभ है, आपके प्राकट्य समय में हुं आपके मूल स्वरूप को दान-क्वचित भक्तन को ही भयो हे **श्रीवल्लभाधिश के रूप रस सिन्धु में बहोत सिन्धु भरे पर स्वाद न्यारे-न्यारे जितनी वहां लो बिन पूरण कृपा बिच में भर लिये पात्र सारे ।** ''महानुभाव के अनुभव की युक्ति मात्र प्रमाण हे के आपके मूल स्वरूप की प्राप्ति अति दुर्लभ है, सबनके जीवन मूडी श्रीवल्लभ ही हे तोऊ अधिकारी जो हे ताको आप अपने स्वरूप को अनुभव करावे हे, आपके स्वरूप की प्राप्ति अति दुर्लभ कही ताको आशय यह नहीं समजनो के सर्वथा प्राप्त नहीं होय हे, परन्तु अति कष्ट ते प्राप्त होयवेवारो समजनो । जे जन अहर्निश परित्याग पूर्वक विरहानुभव में भींज्यो रहे हे ऐसे विरही रसिक भक्त दुर्लभांधिसरोरूह के मूलतक पहोंच शके हे। ताते विरहानुभवरूप परित्यागसुं दुर्लभ ही सुलभता होय जाय हे तब स्वरूपानंद को हुं दान होय अब आगे कहत हे जैसे मीन चंचल हे तेसे मन हुं चंचल हे। ताकुं चोतरफ सेकर्षण करके स्वरूप ध्यान करवे सुं स्थिर रहे ताते भक्तजन मनकी चंचलता छोडी के चरण कमल को ध्यान करे जहां प्रेम वहां ही यह मीन रहे ओर आप के युगल चरण कमल में जो निरवधि रस हे ताको अनुभव करवे के लिये मन की स्थिरता युगल चरण कमल के आश्रय ते होय। शुद्ध प्रेम बिना के हृदय में आपके चरण कमल स्थिर नहीं रहे, कारणके कमल हे सो जल में ही प्रगट होत हे ताते जा भक्त को हृदय सरोवर प्रेम जलसुं भर्यो हे तामें ही आपके चरण कमल प्रकट होय हे या प्रकार को विशेष करके बोध मीन चिन्ह करत है ।

मीन चिन्ह को धोल

त्रिजु चिन्ह मीन चरण धरीयाजी,
दैवीजीवना तो कारज सरीयाजी ॥
व्हालाना सर्व अंग रसमय भर्यारे,
संयोग रस ले सौ अंग धरीयारे ॥
संयोग रसतो ए जलनुं छे रूपरे,
तेथी मीन चरणमां लीधा व्रज भूपरे॥
चरण मां हे एवुं अमृत भर्यु छे रे,
तेथी मीन सदा परवस रहे छे रे ॥
पुष्टि मारगमां ज़े जीव शरणे रे,
तेने आ चरण आश्रय करवो कहे छे रे ॥
भक्त ने ऐ चरण नुं ध्यान करवुं रे,
मीन चिन्ह हृदय मां धरवुं रे॥
चरणनो संबंध जे जल थी थया रे,
ते चरणामृतनुं स्वरूप कह्या रे ॥
चरण मां हे एवु अमृत जाणो रे,
सुधा मय ऐऊना पद मानो रे ॥
चरण मां हे आनंद रस जे छे रे,
भोग सौ भक्त तेनो करे छे रे ॥
भक्त जनना मन ऐ चरणे जाये रे,
अमृत पीता कदी तृप्ति न थाय रे ॥
मीन जलने विषे जेम रहे छे रे,
तेम भक्तो ऐ चरण आश्रय करवो रे ॥

..... यहां मीन चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो....

सुदर्शन

वाम चरण में चोथो चिन्ह सुदर्शन को हे ताको भाव कहत हे,

यह चक्र तेजस्वी पुरुषके पास रहत है सो चक्र श्रीजी के मन्दिर पे ध्वजा के पास बिराजत है सो चक्र यहाँ श्रीवल्लभ प्रभु के चरण कमल में बिराजत हे। तासु श्रीजी कुं यह चरण को नित्य संबंध है। या प्रकार सुदर्शनजी को ध्यान निश्चय बुद्धि ते धारण करे तो भगवदीयपनो प्राप्त होय और यहा श्रीसुदर्शनजी श्रीस्वामिनीजी के कंकण रूप हे ताते श्रीगोवर्धनधर श्रीहस्त में राखत हे और माधव हे सो धर्म रक्षार्थ चक्र हस्त में धारण करत हे। ता करी सगरे देवता इन्द्र, ब्रह्मा, महादेव आदि सब भय करी आज्ञानुसार रात्रि दिन चले जाय है । तेसे श्रीवल्लभ अपने चरणमें चक्र राख श्रीजी तथा श्रीस्वामिनीजी और लीला परिकर कुं अपने वशमें राखथ हे । ताते श्रीवल्लभ के संबंधबिना कहुं विहार नहीं हे और श्रीप्यारीजी के मान दूर करवे के समय श्रीठाकोरजी यह चक्र को नमन करत हे । ताते श्रीप्यारीजी को मन फेरत हे तब प्यारीजी तुरन्त मान को छोडके प्रभु सो मिली के परम नूतन प्रित प्रकट करत हे । ताते याको आश्रय करे तो भगवद्भाव उत्पन्न होय, और सेवामें मन लगे यह सुदर्शन चक्र मर्यादा पुरुषोत्तम के पास हुं रहत है।

जेसे दुर्वासा ने अंबरीष को अपराध कियो तब उनके रक्षण

के लिये प्रभु ने सुदर्शन अंबरीश के पास राखे हते, सो दुर्वासा के पाछे लगे ताते विनके भयते काहुने रक्षा दुर्वासा की नहीं करी जब पाछे अंबरीष नेही वा भयते बचाये तब उबरे, या प्रकार सुदर्शनजी ने अंबरीष की रक्षा करी, कृत्याग्नि ते बचाये। ताते सुदर्शनजी को उपयोग भक्त रक्षार्थ हे सो भगवान् को खास आयुध्य सुदर्शनजी हे। ता करी भक्त की चारो ओरते रक्षा करत हे, दुष्ट को नाश करत हे । (या प्रकार सुदर्शनजी आधिदैविक स्वरूपते लीलाधाम में हुं बिराजत हे, आप के चरण रूप प्रत्येक चिन्ह को कार्य भूतल में हुं हे और लीलाधाम में हु हे। भूतल में साधन दशा वारे जनके भौतिक तथा आध्यात्मिक दोष दूर करवे में ताको विनीयोग हे और दोष निवृत्ति पश्चाद् आधिदैविक अवस्था में हुं ताके उपयोग है। लीलाधाम में तो सब परिकर आधिदैविक अवस्था वारे हे ताके कार्य में हु यह सुदर्शनजी को उपयोग हे ताते चरण चिन्ह को कार्य आध्यात्मिक और आधिदैविक स्वरूपते विचारनो । तामें लीलाधाम में आधिदैविक स्वरूपते सुदर्शनजी को कार्य हे लीलाधाम में हुं भक्त रक्षार्थ उपयोग हे ।

शंका - पुष्टि प्रभुन को रसात्मक लीलाधाम तो अक्षरातीत, ब्रह्मातीत, शब्दातीत, वेदातीत सबन ते परे हे वहां आसुरी सृष्टि को प्रवेश हुं असम्भव है, “**जहां प्रवेश नहि विधि हर नोरे**” ब्रह्मा और महादेवजी की हुं जहां गति नहीं, वहां ब्रह्मा की बनाई भई सृष्टि को प्रवेश केसे होय शके। जब भौतिक तथा आध्यात्मिक सृष्टि को वहां प्रवेश नहीं हे तब लीलाधाम में भक्तन को कोन प्रकार को दुःख होयगो के

सुदर्शनजी ताको रक्षण करत हे ? और रसात्मक लीलाधाम में तो केवल आनंद को ही अनुभव हे, वहां काहु प्रकार को भौतिक आध्यात्मिक दुःख नहीं, तो सुदर्शनजी को लीलाधाम में भक्त रक्षार्थ कहा उपयोग हे ?

समाधान - रसात्मक लीलाधाम में भक्तन को काहु प्रकार को और दुःख नहीं हे, परन्तु संयोगात्मिका-पूर्वदल की लीला में संयोग पश्चाद् वियोग को अनुभव संयोगात्मक सब भक्तन कुं होय हे और यह वियोगानुभव हुं पूर्वमें जो संयोगानुभव कियो है तासु विलक्षण रसानुभव श्रीठाकोरजी कुं और भक्तोनकुं करायवे के लिये त्रितयात्मक साक्षी स्वरूप श्रीवल्लभ ही वियोग दान करत हे। जेसे समुद्रमें ते एक तरंग प्रकट होय विलीन होय जात हे। फेरी नयो तरंग प्रकट होय हे अथवा अग्नि में सुं जेसे नई-नई ज्वाला प्रकट होय हे तेसेई पूर्व संयोगानुभव सुं विलक्षण नूतन रसानुभव के अर्थ रतियात्मक नौतन नौतन भावोंकुं प्रकट करवे अर्थ वियोगानुभव करावे हे। यह वियोग को दुःख लीलास्थ स्वामिनी गणन को असह्य है कारणके वहां भक्तन के प्राणाधार प्राण स्वरूप प्रियतम प्रभु हे ताते प्रिय वियोगानुभव को दुःख स्वामिनीओकुं सहन नहीं होय हे और वियोगानुभव को कारण विलक्षण रसानुभव के अर्थ है और पुष्टि प्रभु अभोग्य भोक्ता है, पूर्व संयोग में प्रभुने जो भक्त के साथ रसानुभव कियो हे, सो भक्त भोग्यरूप होय गये फेरी नूतन रसानुभव वेही भक्त में करवे के लिये वियोग दान हे अथवा वियोगानुभव में तनुनवत्वता होय हे, भूतल की सेवा प्रणाली में सखड़ी-अनसखड़ी-दुधघर, फलादि तथा प्रसादी-अप्रसादी

या प्रकार की जो मर्यादा हे सो पृथक-पृथक भक्तोन में पृथक-पृथक रसानुभव करनो और प्रसादि भोग्य भई सामग्री को अभोग्य-भोगवे योग्य सामग्री को संबंध न होयवेके लिये मार्ग मर्यादा स्थापन करी हे। सो सब उपरोक्त आशय ते हे और वेणुगीत की श्रीसुबोधिनीजीमें "**बर्हापीडं नटवर वपुः**" श्लोकमें वर्णन कियो हे तामे नटवर स्वरूप द्विधा हे एक **नटवद्** दूसरो वरवद् तामे **नटवद्** अमूर्त (भावात्मक) सुधा स्वरूप श्रीवल्लभ को हे जा स्वरूप को अनुभव धर्मी विप्रयोग अवस्था में भाव द्वारा ही कियो जाय है, और वरवद् स्वरूप संयोगात्मक हे जाको अनुभव संयोग समे क्रिया द्वारा होय सो वरवद् स्वरूप अभोग्य भोक्ता है बाल लीला के पद में मातृचरण श्री यशोदाजी गोपीजन प्रति कहत हे, '**दिन दुल्हे मेरो कुंवर कन्हैया।**'

तातें आप श्रीठाकोरजी अभोग्य भोक्ता होयवे सुं वियोगानुभव पश्चाद् नौतन रस को भोग करे हे लीलाधामस्थ स्वामिनीगण आत्मस्वरूप होयवे सुं जेसे समुद्र अपार जलरासी ते भर्यो भयो हे तेसे ही प्रत्येक श्री स्वामिनीजी रसात्मक रस सम्पत्ति के सागर तुल्य हे। तासु संभोग पश्चाद् वियोगानुभव में नौतन सौन्दर्यता तारुण्यता और नौतन केलि बंधादिक की रस सम्पत्ति के साथ श्रीस्वामिनीजीओ के स्वरूप में परिवर्तन होय जाय हे। या प्रकारकी तनुनवत्वता लीलाधाम में वियोगावस्था में होय हे कारण के प्रियतम प्रभु अभोग्य भोक्ता महा रसिक शिरोमणि हे और नौतन नौतन सौन्दर्य-तारुण्य-माधुर्य रस संपत्ति के अपेक्षित है तासुं वियोगावस्थामें श्री स्वामिनीजी गणन में एक विलक्षण रस सम्पत्ति प्रकट होय हे ताके लिये वियोगानुभव लीलास्थ भक्तोंकुं अद्भुत कर्मणा दुर्विभाव्य अनंत विलक्षण सक्तिवारे साक्षी स्वरूप श्रीवल्लभ ही करावे हे अनंत लीलारस समुद्रोकुं धारण करवे वारे रासस्त्रीभाव पूरित विग्रह साक्षी स्वरूपे लीलास्थ स्वामिनीगणन के आन्तर स्थित हे यह स्वरूप मे सु ही स्वामिनीगण वियोगावस्था में नौतन रस सम्पत्ति प्राप्त करे हे।

(श्रीस्वामिनीजी के मान के कारण भी नौतन रसानुभव के अर्थ हे) ताते सप्त श्लोकी में श्रीमत्प्रभुचरण निरूपण करे हे। "**वल्लवीशान्तर**" और "**प्रिया गोपी भर्तु स्फुरतु सततं वल्लत्र इति**" वल्लभ सब परिकर की आत्मा रूप ते सबके भीतर बिराजे हे सो नौतन रस सम्पत्ति को दान करत हे यहा आपको यज्ञ करता नाम स्मरणीय हे। आत्म तत्व बड़ो ही विलक्षण हे ताको प्रमाण (गी.२.२४.२९) में हे तहां प्रभुते अर्जुन को कह्यो हे के 'आत्मतत्व अचिन्त्य-अनंत शक्ति युक्त-प्राकृत अध्यास इन्द्रिय मन के अविप्रय हे। हे पार्थ यह आत्म तत्व बडोही गहन हे ताते कोई महापुरुष ही यह आत्म तत्व कुं आश्चर्य की भांती देखते हे और वेसेई दूसरे कोई महापुरुष आश्चर्य की भांती कहत हे और कोईक आश्चर्य की भांती सुनते हे और कोई कोई सुनके हुं आत्माकुं नहीं जानते हे। भगवान् पूर्णब्रह्म श्रीलक्ष्मण सुवन को यह अचिन्त्य अनंत शक्ति युक्त महिमां सर्वात्मभाववती श्री स्वामिनीजीओं में होयवे सुं अगाध समुद्र रस सम्पत्ति ते भरे भये हे और प्रतिक्षणे नौतन नौतन सौन्दर्य माधुर्य तारुण्यता ते प्रियतम प्रभु कुं रसानुभव करावत हे। यह विलक्षण रस सम्पत्ति के दाता महोदार चरित्रवान

श्रीवल्लभ प्रभु है सबके भितर साक्षी रूप सुं बिराज के यह रस सम्पत्ति को दान करत हे या प्रकार सुदर्शनजी को कार्य आधिदैविक स्वरूपते लीलाधाम में हे सो संयोग में ते वियोगानुभव में मन को फीरावनो और मानसिक भावकुं फिरायके संयोगानुभव करावनो और वियोग दशामें रक्षण करनो) ताते वियोग समें श्रीस्वामिनीजी कुं वियोग दुःख दूर करवे में आपके चरणचिन्ह सुदर्शनजी को उपयोग है । सो दुःख समन कर उभय युगल को मिलाप कराय परस्पर रस विहार सिद्ध करत हे, जेसे अंतरंग योग माया रमण के लिये रमणोपयोगी सकल पदार्थ सिद्ध करके रमण विलास करावत हे । यह कार्य योगमाया को हे और वह खास प्रभु की शक्ति है और प्रभुन सुं निकट रहे है तेसे ही सुदर्शनजी हुं प्रभुकी खास शक्ति हे। इनको हुं कार्य प्रभु को तथा भक्त को दुःख दूर करी के सुख प्राप्ति में उपयोग है जाकी वक्र धार है भगवान् आत्मारामं के मनकु चक्र फिराय के रमण में प्रवर्त करत है ताते कह्यो "**मनस्चक्रे**" जैसे श्रीयमुनाजी भक्तन के दुःख काटवे में पेनीधार है सो पद में दीखाये है के 'अवधार पेनी' तेसे सुदर्शनजी को हु स्वरूप जाननो यह विजय हथीयार हे सदा प्रभु पास में राखत है सो सुदर्शन को चिन्ह श्रीमहाप्रभुजी चरण कमल में धारण करीयत् जतावत है के भक्त के सकल विरह दुःख दूर करी सुखदान करूंगो । जा समे प्रभुने शरद कालीन रात्री उदय करी ताकुं देखके रमण के तांई प्रभु को मन चक्रायमान भ्रमणशिल भयो चक्र गोलाकार हे तेसे रास मंडल हूं गोलाकार है सोई चक्र को स्वरूप सुदर्शनजी को हे ।

या प्रकार खास रमण विहार के मध्यपाती भावरूप सुदर्शन हे। तेसेई भूतल प्राकट्य में हु श्रीवल्लभ चरण में सुदर्शनजी धारण करी यह जतावत हे के तुमारो सकल अनिष्ट दूर करूंगो, अनिष्ट दूर करवे तांई चक्र पेनी जेसी जाकी धार हे। तासो तुम तो केवल मेरे चरण कमल को आश्रय करके सेवा स्मरणादि ते मेरी सन्मुखता में तत्पर रहो। तुमको कोई प्रकार की चिन्ता कर्तव्य नाही हे, (आपको अचिन्त्य ऐश्वर्य ही स्मरण करवे योग्य हे ताते आपके कर्तु-अकर्तु-अन्यथाकर्तुम विरुद्ध धर्माश्रय ऐश्वर्य को आगे करके निज निर्गुण स्वकीय जन के लिये नवरत्न ग्रंथ में महाकारुणिक स्वामी ने श्रीमुखते आज्ञा करी हे-**चिन्ता कापि न कार्या**) ऐसो आशय सुदर्शनजी धारण करी के जतावत हे श्रीनाथजीने हुं मंदिर के ऊपर आपके चरण चिन्ह सुदर्शनजी धारण किये हे। सो यह चक्र महा तेजस्वी पुरुष के पास ही रहत हे, यहां भगवान् वैश्वानर विभु वदन विना ऐसो कोन पुरुष समर्थ हे के जीनके स्मरण मात्रते सकल आर्ति'को नाश होय के पुष्टि चतुर्थ पुरुषार्थ को दान करी वाही क्षण लीलामध्यपाति पनो सिद्ध करे हे ताते श्रीमत्प्रभुचरण-गुसांईजी कहेते भये, **स्मृतिमात्रार्तिनाशनः॥**

सुदर्शन चिन्ह को धोल

चक्र सुदर्शन धर्या अति शोभिता रे लोल,
चिन्ह चरणमां धर्या ते मन लोभितारे लोल॥
बलवान तेजस्वी पुरुषना साथमां रे लोल,
चक्र सुदर्शन रहे छे तेमना हाथ मारे लोल॥
वल्लभ तेज नुं मुखारविंद शोभातु रे लोल,
तेज कोटि सूर्य नु प्रकाशतु रे लोल॥
के छे शास्त्र अेने तेजो मय पुंज छे रे लोल,
व्हाला भक्ति मार्तंड नुं स्वरूप छे रे लोल॥
असुर माया वादीना ते भ्रम जाय छे रे लोल,
ऐनी कृति तेज थकी भस्म थाय रे लोल॥
पुरुषोत्तम मे चक्र तो कर में धर्या रे लोल,
दैवी पोताना जाणी ने रक्षा करी ले लोल॥
ज्यारे वर्षा थकी कर्या ग्वाल गोपीयु रे लोल,
त्यारे रक्षा करी हरि चक्र रोकीया रे लोल॥
छाया करी भक्त सहुं समस्त नेरे लोल,
गिरि धर्या वाम अंगुली श्रीहस्तनी रे लोल॥
ऐज चक्र चिन्ह जेने शिर पर धर्यारे लोल,
बलवान कालकर्म तेना भयतो हर्यारे लोल॥
छाप शितल एज भक्त शिश गाजती रे लोल,
तेज भक्त शिश ऊपर बिराजता रे लोल॥

...यहां सुदर्शन चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो....

अष्टदल

वाम चरण में पंचम चिन्ह अष्टदल को हे ताको भाव कहत हे,

अतः इनको दासपनो ही फलरूप हे श्रीमद् विठ्ठलेश्वर चरणतल निवासी श्री हरिरायचरणके वचनामृत दास्याष्टक ग्रंथमें हे के अपने भक्तन सु श्रीमद् दमलाजी के भक्त श्री महाप्रभुजी कुं अति प्रिय हे। ताते कह्यो हे के श्री महाप्रभुजी में अनन्य स्वतंत्र भक्तिवारे भक्त को ही सदा दास्य मोकुं देऊ (होय)। इनते परम फल और कहा हे ? तथा जन्म को दूसरो फल कहा है ? और दूसरे फल सिद्ध भये ते हुं कहा ? वे अगाध मधुर प्रेम सागर श्रीपुष्टिमार्ग को मूल है तीनके चरण कमल श्रावित निर्गुण भक्ति रस (मधुर) मकरंद को मोकु पान होऊ वेही परम फल है। तीनके पाद सरोज में मेरी मति और रति होऊ, जो सेवा फल में कहे अलौकिक सामर्थ्य रूप हे (श्रीहरिरायचरणने दास्याष्टक ग्रंथ में श्री महाप्रभुजीके दास श्रीमद् दमलाजी के दासत्व की प्रार्थना करी हे, श्री हरिरायचरण पुष्टि मार्ग के मर्मज्ञ शिरोमणी रूपते प्रसिद्ध हे। पुष्टि रस रसाब्धि के मंथन करवे वारे हे और रसाब्धि के तल भाग में पहोंचके परमतत्व की खोज करके ताको प्रकाश करवे वारे एक विलक्षण महा पुरुष हे। आप जाके दास्य की प्रार्थना करे हे वे आप श्रीहरिरायचरण में परम तत्व की खोज

के अधिष्ठान स्वरूप हे ।

सो परम तत्व को वर्णन अनेक पदों में, स्तोत्रों में, ग्रंथों में कियो हे । ताको संकेत निम्न पद में करत हे,

श्रीवल्लभ श्रीवल्लभ कृपानिधान,
अति उदार करुणामय दीन द्वारे आयो।
कृपा भर नयन कोर देखिये जु मेरी ओर,
जनम जनम सोध सोध चरण रेणु पायो।।१।।
कीरती चहु युग प्रकाश दूर करत विरह ताप,
संगम गुणगान सदा आनंद भर गाऊ।
विनती यह मान लीजे अपनो ''हरिदास'' कीजे
चरण कमल वास दीजे बल बल बल जाऊ।।२।।

ओर दूसरे पद - ''श्रीवल्लभ तज अपनो ठाकुर कहो कोनपे जैये हो'' या प्रकार परम तत्व की खोज करके जो परम तत्व 'स्त्री गूढ भावात्मक-रासस्त्री भाव पूरित विग्रह-मूल वैश्वानर पुरुषाकार सुधा स्वरूप हे। सो तो आधेय रूपते श्रीमद् दमलाजी के हृदय रूप अलक्ष कुटिर में बिराज रहे हैं, अथवा श्रीमद् दमलाजी के ही आधीन है। ताते श्री वल्लभ प्रभु स्वयं श्रीमुखते आज्ञा करते दमला ओर भक्त बहोत हे में तेरे वसहुं जो जाकुं वश हे, वे पराधीन हे ताते पुष्टि परमतत्व मूल वैश्वानर सुधा स्वरूप श्रीमद् दमलाजी के आन्तर होयवेसुं मर्मज्ञ शिरोमणी श्री हरिरायचरण श्रीवल्लभ के दास श्रीमद् दमलाजी के दासत्व की प्रार्थना करे है। दास को पर्याय गुढार्थ भाव वारो नाम श्रीमत स्वामिनीजी है। प्रमाण में दास शब्द सखी के दिव्य शब्द गोप्य करवे को

कारण आधुनिक में एक महत दोष है। जो अलौकिक में लौकिक दृष्टि हे, ऐसे तृतीय शिक्षापत्र में आज्ञा करी है, यह प्राकृत दृष्टि वारेनसुं अलौकिक स्वरूप गुप्त रखवे के तांई प्रमाण में पर्यायवाची शब्दों को प्रयोग कियो है और दूसरो कारण प्रभु परोक्ष प्रिय है। तातें रहस्य कुं गोप्य किये हे। मूल पुरुष में श्रीद्वारकेशजी ने कह्यो हे अलौकिक सब भक्त जन जे लीने आप हे क्वचित स्थानपे चोरासी दोसोबावन की भावात्मक स्थिति है यह स्थिति आधुनिक में न होयते पुष्टि मार्ग की स्थिति हुं नहीं होय शके, परन्तु भौतिक दृष्टि वारेन ते यह भावात्मक स्थिति को पहेचान्यो नहीं जाय हे जामे नहीं होय आसुरी भावों की बाहुल्यता हे। ताके लिये ताके हृदय में सुं देवभाव सम्पत्ति को तिरोधान पनो होंयवे सुं ताके लिये पुष्टि तत्व को हुं तिरोधान पनो है और जीमे दैवी गुणों की बाहुल्यता है, ताके लिये पुष्टि मार्ग और पुष्टि तत्व को वर्तमानपनो है ताते अलौकिक में लौकिक दृष्टि के कारण सुं भक्तोनके अलौकिक नाम को पर्याय शब्दों में व्यवहार कियो हे। जेसे वेणुगीत में गोपीजन के लिये शक्ति शब्दो को प्रयोग कियो हे। तेसे चोरासी दोसो बावन के लिये जाननो, अब कहत हे के द्विधा श्रृंगार रसात्मक अनंत कल्पतरु के जो मूल हे। सोतो श्रीमद् दमलाजी को स्वरूप हे। ताते कह्यो के, **'दमला मोसो न्यून नहीं मम रस के अनुकुल, श्रीमुखते आज्ञा करी यह मारग को मूल।।'** श्रीवल्लभ स्वयं श्रीमुखते आज्ञा करत के द्विधा श्रृंगार रसात्मक पुष्टि मारग को मूल दमलाजी हे और पुष्टि मारग हे सो द्विधा शृंगार रसात्मक हे

सो शृंगार रसात्मक के अनंत कल्पतरु रूपे यह मारग फेल्यो है, अब कहत हे के श्रीमद् दमलाजी वियोगात्मक कृष्ण वस्तुतः कृष्णएव मूल पुरुषाकार सुधा स्वरूप की धर्मी विप्रयोगात्मक मुख्य श्रीस्वामिनीजी स्वरूप हे। अनंत कोटि कंदर्प लावण्य की अधिष्ठात्री है, श्रुतिओंने परब्रह्म को महिमां गायो हे के भूमा भगवान वैश्वानर विभुवदनके रोम रूप छिद्र आकाश तुल्य व्यापक हे। ता रोम रूप आकाश में परमाणु समान अनंत ब्रह्मांडो में विचरण करे हे। सो पूर्ण ब्रह्म स्वरूप श्रीवल्लभ विरहानल की मुख्य श्रीस्वामिनीजी स्वरूप श्रीमद् दमलाजी है, श्रीमद् दमलाजी के रोम रोम में हुं वल्लभ विरहाग्नि के कोटि कोटि स्वरूप बिराजमान हे। ऐसो स्वरूप होयवे सुं श्रीहरिरायचरण दासत्व की प्रार्थना करत हे। श्रीमद् दमलाजी में श्रीमहाप्रभुजी के मूल सुधा स्वरूप को विलास हे। यह अमूर्त घनीभूत सुधा स्वरूप भावात्मक विरहात्मक हे, श्रीमद् दमलाजीने भूतल में प्रागट्य लेय के विरहानुभव कियो हे। सो तो एक **अनुकरणा मष है, सो अनुकरण** करके भूतल की वल्लभी सृष्टि कुं श्रीवल्लभ के मूल स्वरूप की प्राप्ति को एक मार्ग दिखायो हे। वस्तुतः श्रीमद् दमलाजी तो स्वतः सिद्ध स्वरूप सुं प्रगटे हे जेसे सारस्वतकल्प की अवतार लीला में वृषभानुजा श्रीराधिकाजी आलंबन रूपते श्री ठाकोरजीके पहले ही प्रकट भये हे। तेसे विरहात्मक मार्ग के आलंबन रूप श्रीमद् दमलाजी को वियोग-उत्तर दलात्मक मुख्य श्रीस्वामिनीजी स्वरूपे श्रीवल्लभके पहेले ही प्रागट्य भयो हे यह मूल युगल (दमला-वल्लभ) को स्वरूप ज्ञान

भी विरह के अनुभव सुही होय हे, अथवा चरण सुही यह सर्वा ज्ञात लीला विहारी मुल युगल को स्वरूप ज्ञान होय, ताते कह्यो, **जानत वे विरही जना अनुभव होत प्रमाण,** यह मूल स्वरूप के ज्ञान में अनुभव ही प्रमाण हे। कारण के उभय स्वरूप भावात्मक हे विरहात्मक हे ताते विरह के अनुभव सु जीनको देहादिसंघात विरहात्मक सर्गरूप विरहभाव तद्रुप होय गयोहे ऐसे विरही रसिक भक्त को मूल युगल (दमला-वल्लभ) के स्वरूप को अनुभव होय है और ताको अनुभव हुं भावात्मक भाव द्वारा ही होय है।

[1]**व्यापी रह्यो सब जनन में, ज्यों लो दमला अंश ।**
त्यों लो श्रीमहाप्रभुन को, दानदेत निज वंश॥
दमला श्रीमहाप्रभुनको, सरस स्नेह विलास।
जागत सोवत स्वप्नमें, मीलनी रहत रस रास॥
रोम रोम रसना रटु, तोऊ न होत बखान।
जानत वे विरही जना, अनुभव होत प्रमाण॥
श्रीदामोदरदास को, दासी कहु के दास।
अपनी करुणा जानके, करे दास को दास॥
[2]**ते पदरज की एक कण, आय परे वा माथ।**
तुर्त तरे भव सिन्धु को, मीले रास रस साथ॥
जन्म जन्म प्रति जाय हुं, वा दमला पद धुर।
ओर अधिक इच्छा नहीं प्रतिज्ञा है भरपूर॥

याविध करुणात्मन पुरुषोने मुल युगल स्वरूप को अनुभव करके भुतल की वल्लभी सृष्टि को परम हित विचारी अपनो

---

[1] भावसिन्धु [2] पंचामृत व्यास बावाकृत

अनुभव व्यक्त कियो हे जेसे, भूतल में सन्मनुषाकार स्वरूप सुं श्रीवल्लभ प्रकट भये और दैवी जीवकुं देहाध्यासादि प्रपंच आवरणते उग्र प्रतापी श्रीवल्लभ स्वरूपको अज्ञान हे, तासुं श्रीमहाप्रभुजी को स्वरूप अज्ञान करायवे के लिये दया सागर श्रीमत्प्रभुचरण ने श्रीसर्वोत्तमजी-वल्लभाष्टक और सप्तश्लोकी में सर्वाज्ञात आप के स्वरूप को माहात्म्य प्रकट कियो हे। मानुष तनु धरवे सुं श्रीवल्लभ स्वरूप समजमें न आवे ता हेतु ते श्रीप्रभुचरण ने नाम-रूप और गुण सु आपको अचिन्त्य अनंत सक्ति युक्त महात्म्य प्रकट कियो। तेसे ही भूतल में श्रीमद् दमलाजी को स्वरूप जाननो, जाकी रोम रोम में उग्रप्रतापी श्रीवल्लभ कोटि कोटि स्वरूपते विलस रह्यो हे ताको महत्व कहेवे में केसे आय शके ? ताते कह्यो हे के, **हरि बड़े हरिजन बड़े बड़े हे हरि के दास। हरि सो हरिजन यों बड़े हरि हे इनके पास॥** तासु श्रीवल्लभ को माहात्म्य त्रिविध ग्रंथमें श्रीप्रभुचरण ने जो प्रकट कियो हे। ताको अनंत पनो श्रीमद् दमलाजी में जाननो और गायत्री भाष्य में हुं कह्यो हे के 'जामें ते रसात्मक जगत को प्रसव होय हे। ऐसे प्रसव धर्मी सर्वात्म भाव वारे भक्तोन को स्वरूप अगाध है यहां अगाध पद जाको अंत नहीं होय शके, तेसो अर्थ जताय रह्यो हे', ताते श्रीहरिरायचरण ऐसे अगाध स्वरूप श्रीमद् दमलाजी के दासत्वकी प्रार्थना करत है । अब आगे कहत हे के, **'तीन के दोउ चरण कमल के परम रेणु होऊ।'** ऐसी प्रार्थना के व्याज में श्रीवल्लभ के स्वकीय जन को सौभाग्य सिद्ध करत हे और स्वकियेन प्रति आशीष वचन हुं कहत है, के तुम कुं हुं येही महानिधि स्वरूप को दास्य प्राप्त होऊ (पुष्टि प्रभु भक्ताधिन है भक्तन की प्रतिज्ञा को स्वयं पालन करत हे, और भक्तनके आगे अपनी प्रतिज्ञा को त्याग करत है, भीष्मपितामह के लिये प्रभुने ऐसो ही कियो हे जब मर्यादा भक्त कोभी इतनो पक्षपात हे तो पुष्टि भक्त को तो कहेनो ही कहा ?

ताते श्रीहरिरायचरण की श्रीवल्लभ स्वरूप संबंधी जो वाणी हे, सो सब प्रतिज्ञा रूप ही है और ता वाणी को आश्रय करके श्रीवल्लभ के जो-जो जन शरण में रहे हैं तीन कुं श्रीहरिरायचरण के पक्षपात ते श्रीवल्लभ अंगीकार करत है भक्त के जो भक्त हे तामें पूर्ण प्रमेय बल को आश्रय है कारण के शुद्ध प्रेम के भक्त हे तामें पूर्ण प्रमेय स्वरूप को विलास है, ताते तीन के आश्रीतन कुं पूर्ण प्रमेय बल ते ही अंगीकार करत है। यह श्रीहरिरायचरण की प्रार्थना में निष्ठा रखवेते दास्यभाव को दान श्रीवल्लभ प्रभु निश्चे करेंगे यामे संदेह नहीं, ऐसे ही श्रीमत्प्रभुचरण श्रीगोकुलेशजी और पद्मनाभदासादि की श्रीवल्लभ स्वरूप संबंधी वाणी में निष्ठा राखनी अथवा प्रार्थना को ओर हुं आशय यह हे के भूतलस्थ स्वकीय जन कुं श्रीमद् दमलाजी वल्लभ को स्वरूप ज्ञान होय ताके लिये प्रार्थना में आपके स्वरूप को माहात्म्य प्रकट करत हे ।

शंका - वल्लभीयजन कौन कुं कहे के जाकुं श्रीवल्लभ के दुर्लभ चरण कमल की प्राप्ति होय हे ।

समाधान - जो वियोगात्मक मार्ग पे चलवे वारे हे और तापात्मक भावन सुं परित्याग पूर्वक अखिल स्वार्थ उज्जित करके विरह को अनुभव करे हे ताकुं वल्लभी जन कहत है, अथवा श्रीवल्लभ की धर्मी विप्रयोगात्मक स्वतंत्र भक्ति रूप लीलामें जाको अंगीकार कियो है ताकुं वल्लभीजन कहत है कारण के श्रीवल्लभ को मूल स्वरूप विरहात्मक है। ताकी प्राप्ति को मारग हुं विरहात्मक है। ताते तापात्मक भावनको नितांत अनुभव करके विरहमार्ग पे जो चले हे ताकुं ही वास्तविक वल्लभीजन कहे जाय हे। आपको मारग तो पुष्टि हे और सेवक दुबले क्यो ऐसो प्रश्न कृष्ण चैतन्य के सेवक रूप सनातन ने आप कुं कियो। ताके प्रत्युत्तर में आप आज्ञा करत हे के, हमने तो बहोत बरजे जो यह मारगमें मति आवो-आये ताको फल भोगत हे। यह परम दुर्बोध निगुढ वाक्य को आशय कृष्ण चैतन्य समजे, और आपके यह वाक्य के श्रवण ते पुनः पुनः मूर्छित होयवे लगे। ताते वल्लभी को जो मार्ग हे वे तो विरहात्मक कष्ट सो भर्यो भयो है, और श्रीमद् दमलाजी विरहात्मक मार्ग के जो अधिष्ठाता हे तिनने हुं श्रीमत प्रभुचरण प्रति कह्यो हे के, ‘यह मार्ग हासी ठठ्ठा को नांही, ताप क्लेशं को मार्ग है।’ यह वाक्य द्वारा ही परकीय भावात्मक चंद्रावलीजी स्वरूप श्रीगुसांईजी को महोदार चरित्रवान अपने मूल स्वरूपको दान करत भये और यह वाक्य की फलितता षट मांस चंद्र सरोवर में विरहानुभव सु भई और वे वियोगानुभव के फल रूप श्रीसर्वोत्तमजी-वल्लभाष्टक-और सप्तश्लोकी को प्रादुर्भाव करते भये, ताते

यह मार्ग वियोगात्मक कृष्ण-श्रीवल्लभ ने जो प्रकट कियो हे। सो तो नीतान्त विरहानुभव रूप हे, तापात्मक कलेश सो भर्यो भयो हे और ब्रह्मसंबंध के गद्य मंत्र में आपने अपने स्वकियेन प्रति आपके तापात्मक स्वरूप को ही दान कियो हे ताते ऐसे तापात्मक मार्ग पे चलवे वारे जन वास्तविक वल्लभी कहे जाय हे। ऐसे भक्त विरह होयवे सु आप श्रीमुखते आज्ञा करते, “**दमला और भक्त बहोत हे मे तेरे वश हुं**” विरह की काष्टापन्न दशा भोगवेवारेन कुं श्रीवल्लभ की ते मूल स्वरूप की प्राप्ति होय हे। यही अर्थ जतायवे वारे श्रीसर्वोत्तमजी में ‘**दुराराध्य-दुर्लभांध्रिसरोरुहः**’ नाम बिराज रहे हे ।

दुर्लभांध्रिसरोरुहः जो हे सो अति सुक्ष्म हे अनंत आत्मा को मुल एक आत्म स्वरूप हे। सो आपको यह मुल स्वरूप तो रसात्मक त्रिगुणात्मक समस्तविलास व्यवहारने पर हे। परम निरोधाग्नि में इनको निवास हे। संबंध सु अलक्ष हे, अति मोहन हे, जाको तत्व निर्वाशेष हे। (यहां मायावादी की निर्वाशेषणता ग्रहण करवे योग्य नहीं) ऐसे दुराराध्य देवाधिदेव कृष्णास्य स्वरूप श्रीवल्लभ हे। ताकी प्राप्ति विरहानुभव ते जो दैन्य भाव प्रकटे हे सो दैन्य भाव ते आप प्रसन्न होय हे। तब आप करुणा करके अपनो स्वयं को जो अदेय स्वरूप, ताको दान करत हे। ताते दैन्य भाव संयुक्त आपके ललित मनोहर युगल चरण कमल को अनन्य आश्रय करी आपके चरण कमल के अतुलित प्रभाववारे चिह्न को चिन्तन करके आप के सुयश को गान करनो अथवा

श्रीसर्वोत्तमजी-वल्लभाष्टक-सप्तश्लोकी तथा महत पुरुषों श्रीहरिराय चरण, पद्मनाभदासादिने आपको सुयश गान पदो-स्तोत्रों-ग्रंथों में जो कियो हे ताको जो जन गान करत हे विनके आधिन श्रीवल्लभ प्रभु होयगे। यह आशय जतायवेवारे श्रीसर्वोत्तमजी में "**स्वयशोगानसंहृष्ट हृदयाम्भोज विष्टरः**" नाम प्रकट कियो हे तापात्मक भावयुक्त आपके यशोगान करवे वारे भक्तन के हृदय में आप बिराजे हे। आपके भूतल प्रागट्य में असाधारण जो प्रयोजन हे सो अधर्मके बन्धु दुःसण कलिकाल के दोषते क्षण क्षण में पतन अवस्थाकु प्राप्त भये ऐसे पतित जीवो को पक्षपात करके अंगीकार करी उद्धार करनो हे आपकी महाकारुणिकता ऐसे पतित जीवो के पक्षपातमें हे यह पतितावस्था-आत्म स्वरूप प्रभुको विस्मरण करायवेवारी होयवे सुं दैवी जीव के लिये एक मृत्युरूप हे सो मृत्यु को दूर करवे वारो आपको यशरूपी पियूष (अमृत) हे ताते आधुनिक सृष्टि को आपके यशोगान में तथा नाम स्मरणमें अति निष्ठावान होनो परम हितकारी है। अब आगे कहत हे के पुष्टि मार्गीय अष्टविध ऐश्वर्य की प्राप्ति में दूसरे कोई साधन की अपेक्षा नहीं रहत हे। केवल अष्टदल चिन्ह को चिन्तवनते और आपके यशोगान ते अष्टविध ऐश्वर्य की प्राप्ति होय जाय है अथवा अष्टविध ऐश्वर्य सह श्री वल्लभ प्रभु वाके वश होय रहेंगे। आपके चरण कमल गत अष्टदल के चिन्ह को आधिदैविक स्वरूप रसात्मक अष्टविध ऐश्वर्य को हे जो श्रीयमुनाजी कुं तिनके पिता श्री वल्लभ श्री वल्लभ भानु ने दान कियो हे सो अष्टविध ऐश्वर्य रसात्मक अष्ट

सिद्धि रूप है, जाको निरुपण श्री यमुनाष्टक में कियो हे सो या विध को हे, (१) साक्षात सेवोपयोगी देह को दान, (२) रसात्मक धामकी दिव्य लीला अवलोकन को दान (३) तद्रसानुभव को दान (४) सर्वात्म भाव को दान (जो दान अदेय हे जामे रसात्मक विलास की परमावधि हे) (४) भगवान् पूर्ण पुरुषोत्तम कुं वश करे तेसे निर्गुण प्रेमको दान (६) प्रभुनकुं प्रिय होनो तथा प्रभुकी प्रतिक्षणे प्रकट होयवेवारी गूढ-रसानुभवकी इच्छा को समज सके तेसी सर्वज्ञता को दान (७) स्वामि के अनन्य लीला परिकर में भक्ति को दान कर शके तेसे सामर्थ्य को दान (८) भगवान् रमण प्रेष्ठकी रमण इच्छा कुं पोषण कर शके तेसे सामर्थ्य को दान (पुष्टि प्रभु अमोध वीर्य है। अमोध कहेवेते रमणमें अतृप्त भाववारे हे ऐसे अतृप्त भाववारे भगवान् को हुं सन्तुष्ट कर शके ऐसो सामर्थ्य) या प्रकार अष्ट ऐश्वर्य को दान श्री वल्लभ चरणागत अष्टदल के चिन्तवन मात्र सुं होय हे। जेसे श्री यमुनाजी को अष्टविध ऐश्वर्य को दान श्री वल्लभ भानु ने कियो हे तेसेही दान आप अपने अंगीकृत स्वकियेन कुं करुणा द्रगपात ते क्षणमात्र में करवे समर्थ हे।

श्री यमुनाजी उग्रप्रतापी भक्ति मार्गाब्ज श्रीवल्लभ भानु की पुत्री हे संयोगात्मिका रासादि लीलाकुं अपने हृदय में धारण करत हे। भगवान् के तुल्य रसात्मक षट धर्मवारे हे। अनंत द्रविभूत रसात्मक गुणोसुं भूषित हे। रासादिलीला रमण श्रमजल कुं अवधारण करवेवारे हे ऐसो भगवद् तुल्य ऐश्वर्य श्री यमुनाजी को दान कियो है तेसो ही दान महोदार चरित्रवान

श्री वल्लभ प्रभु अपने अंगीकृत निजजनो कुं करत हे ताते अष्टदल को या प्रकार को भाव विचारी के आपके उभय चरण कमल को दैन्यभाव आश्रय करनो। आपके युगल चरण कमल केसे हे ? अनंत रस रसाब्धि के सदनरूप हे रसात्मक परम पुरुषार्थ की अवधिरूप हे, ताते हे वल्लभीओ यह दुर्लभ निधि अपने महत भाग्यते भूतल में प्रगट भई हे तीनके चरण कमल में तन मन प्राण की न्योछावरी करीके विना मोल के चेरे होयके रहेनो येही अपनी दैवी जीवन की आदर्शता है। आप सदा वर्तमान पुष्टि मार्ग में बिराजमान है। आपको प्रत्यक्ष अनुभव अनन्यभाव सुं होय हे अनन्य भाव आपकुं बहुत प्रिय हे अनन्य जन के अक्षम अपराधोंकुं आप गीने नहीं हे आपके ऐसे स्वभाव को परिचय महानुभाव पद्मनाभदासजी एक पद में करावत हे के,

नाथ के नाथ, अनाथ के बन्धु, अवगुण चित्त ना धरे।

और सूरदासजी हुं कहत हे के,

दास अपराध जन सिन्धुसम, बिन्दु न एको जान।

ऐसे महोदार करुणासागर स्वरूप श्री वल्लभ प्रभु को स्वकीय जन यश वर्णन करत हे, **(जायू जाय कोन के घरपे श्री वल्लभ से पाय धनी, तीन लोक हुं फिर फिर आयो आनंद अल्प उपाधि घनी)** आगे कहत हे के, ऐसे श्री महाप्रभुजी के चरण कमल पराग को जो जन अपने हृदय और मस्तक पे धारण करत हे। सो प्रलय सम कोटि सूर्याग्निवत विप्रयोगको उग्र जो ताप क्लेश हे ताकुं सहन करवे की अलौकिक सामर्थ्यता कुं प्राप्त होय जाय हे। यह चरण कमल

श्रावीत जीव रसात्मक परम मधुर हे-उत्तर दक्षात्मक हे। जीनके पदकुं गोपीजन, आदि रसिक भक्त ढूंढे हे ऐसे श्रीवल्लभ वर को एक क्षण में अपने हृदय सम्पुट करवेमें समर्थ होय हे। यहां पर शंका होय हे के अमूर्त सुधा स्वरूप के जाको लीलाधाममें हुं प्रकट दर्शन नहीं और महान उग्र हे प्रताप जीनको और अति दुर्लभ हे चरण रेणु जीनकी, 'सत्यजय सर्व विषयान तव पादमूलं प्राप्ता' ऐसे परित्याग करवेवारे व्रजरत्नानकुं भी यह चरणरज प्रार्थनीय हे। ऐसे दुराराध्य देवाधिदेव श्री वल्लभजी कुं अपने हृदय सम्पुट करवे को सामर्थ्य कैसे प्राप्त होयगो ? यह शंकामें कहत हे के जेसे श्रीयमुनाजी कुं संयोगात्मिकता लीला सम्पादक और प्रभुनसुं रसानुभव करायवेवारी अष्टसिद्धि रूप रसात्मक सम्पत्ति दान करवे को सामर्थ्य श्रीवल्लभ प्रभु ने दियो हे और श्रीयमुनाजी के आश्रय सुं आश्रित भक्तन कुं श्रीयमुनाजी अष्टसिद्धि को दान करत हे। तेसे ही उत्तरदलात्मक श्रीवल्लभ विरहानल भोग योग्य घनीभूत सुधा रस सम्पत्ति को दान उत्तर दलात्मक मुख्य श्री स्वामिनीजी स्वरूप श्रीमद् दमलाजी द्वारा होय हे द्रवीभूत संयोगलीलामें श्रीयमुनाजी द्वारा और घनीभूत उत्तरदल विलास में श्रीमद् दमलाजी द्वारा, अथवा श्रीविट्ठलेशप्रभु द्वारा यह सामर्थ्य प्राप्त होय हे। ताते दास्याष्टक में श्री हरिराय चरणने आपके दासत्व की प्रार्थना करी हे। ताते उत्तर दलात्मक वल्लभ विरहानल में जाकी निष्ठा हे ऐसे स्वकीय जनकुं श्रीमद् दमलाजी और श्रीविट्ठलेश प्रभु के पाद कमल की रेणु को आश्रय ही परम फल हे यह रेणु ही सर्वस्व धन

हे और यह रेणु रूप राजधानी में निवास करनो परम सौभाग्य है, जीनके हृदये यह रेणु बिराजमान हे तिनके हृदये दुराराध्य देव श्रीवल्लभ स्वतः सम्पुट होय जाय हे, ताके लिये कोई प्रयास करनो नहीं पड़े हे, अब यह अति दुर्लभ श्रीमद् दमला पाद कमल की रेणु केसे प्राप्त होय ? यह रेणु को स्वरूप कहा ? ताको विचार स्वकीय जनोंकुं अवश्य होयगो। तो ता रेणु की प्राप्ति के विचार में यह रेणु देहात्मवादी भौति **अध्यासवारेन कुं** तो अति दुर्लभ ही हे। भौतिक द्रष्टिवारेनकी इन्द्रियनसु अगोचर हे। भूतल में जेसे पृथ्वी हे पृथ्वी पर जेसे रेणु हे तेसी कल्पना भौतिक अध्यास वारेन की होयगी, और देहात्मवादी की बुद्धि में यह रेणु के महत्व को विचार हुं असम्भव हे, अब यह रेणु केसी हे ? ताकुं कहत हे के, यह रेणु अतिन्द्रिय रसात्मक धाम की रसात्मक भुमि की है। ताते रेणु भी रसरूप हे किमबहुना एक रेणु में हुं रसात्मक कोटि ब्रह्मांड की स्थिति है और महासागर वत माधुर्य प्रेम रस ते भरी भई हे। ताते एक रेणुको महत्व भी अगाध-असीम है। ऐसी रेणु श्रीमद् दमलाजी पाद कमल की जानो कारणके रसात्मक धाम वहां को परिकर लीला सामग्री वहां की भूमि और वे भूमिकी रेणु यह सब आत्मा रूप हे और आत्मतत्व की गहनता विलक्षणता को पाछळ सुदर्शन चिह्न में वर्णन कर दियो हे, आत्मतत्व आकाश तुल्य व्यापक हे यहां भौतिक आकाश की उपमा एक उपलक्षण मात्र है, आधिदैविक आकाश में अनंत आकाशकी व्यापकता को समावेश हे भौतिक आध्यात्मिक और आधिदैविक अनंत आकाशकी व्यापकता परब्रह्म (श्रीलक्ष्मण सुवन श्री वल्लभ) के हृदय रूप अति सुक्ष्म आकाश में छीपी रहत हे ताते भौतिक आकाश की उपमा समजवे मात्र हे। सो आत्म तत्व अनंत आकाश की व्यापकता वारो और रसात्मक प्रेमरस भरे अनंत सागर के महासागर वत हे यह दोय विशेषणो से परम तत्व की विशालता और अगाधता जानी जाय हे। ताते रसात्मक परम आत्म तत्व रूप के एक रेणु को महत्व भी तादृश है।

शुक्रमुनी जेसे कुत्सित योगीओकी कल्पनातीत हे यह दुर्लभ रेणु केसे प्राप्त होय ? ताकी प्राप्ति को साधन कहा? यह प्रश्न के समाधान में कहत हे के, श्रीमद् दमलाजी पाद कमल की रेणु की प्राप्ति को साधन विशुद्ध प्रेम हे विशुद्ध इन कुं कहत हे के, 'भाव जायो जब जानीये सोइ अवर वस्तुकी ठोर न होई।' प्राणप्रिय श्री वल्लभ की सौन्दर्य माधुर्य मूरत के बिना जिनके नेत्रों में हृदय में अन्यको स्थान नहीं हे। ताकु विशुद्ध प्रेम कहत हे। श्रीवल्लभ को स्वरूप उत्तर दलात्मक हे और विरहात्मक मार्ग पे चलवे वारे विरही रसिक कुं ही अनुभव करवे योग्य हे। लोक वेद को परित्याग करके व्यसन जैसी काष्टापन दशा भोग रहे हे ऐसे भक्त हृदये श्रीमद् दमलाजी के पाद कमल की रेणु विराज रही है विरहानुभव में एक प्रियतम प्रभु बिना सबको परित्याग हे समानशिल सखी सहचरी और भूतलस्थ निज स्वामिके संबंध वारे अलौकिक (संसार) परिकर को हुं त्याग हे। कारण के, श्री वल्लभ महान अलौकिक निरवधि आनंदके भोक्ता और निरवधि आनंद हु भोक्ते छते अतृप्त रहेवे वारो महान उग्र

अग्नि को स्वरूप हे ताते ऐसे उग्रप्रतापी स्वरूप के धारण करवे की पात्रता सबको परित्याग करके विरहानुभव में स्थित रहेवे सुं ही होय हे। ताते कह्यो हे के **तीन लोक तृण समय किये, सुख सम्पत्ति सब भोग, श्री वल्लभ पद चरण गही, सा धनतजी उद्योग । और तीन लोक की संपदा इन्द्रभवन को राज। प्रेमीताही तृण सम गीने, एक प्रेम के काज॥** या प्रकार समस्त सुखोको परित्याग करके व्यशन भावकी काष्ठापन्न दशा कुं भोगते भंये विरहात्मक मार्गके पथिक होय के चले हे ऐसे जनकुं यह दुर्लभ रेणु प्राप्त होय हे कारण के व्यशन दशा में सर्वात्मभाव सिद्ध होय हे और सर्वात्मभाव सिद्ध भये विना दुर्लभांघ्रिसरोरुहः की प्राप्ति हुं नहीं होय हे। (याके अनुसंधान में श्री हरिराय चरणोक्त भाव साधक बाधक ग्रंथ देखनो) ताते सबको परित्याग करके प्रिय सौन्दर्यामृत को पान-ध्यान-चिन्तवन-स्मरणादि करके विरहानुभव में जो जन भींज्यो रहे हे ताके हृदये श्रीमद् दमलाजी के चरण रेणु बिराज रहे हे। अथवा विरहानुभव करावनो येही रेणु को धर्म हे, यह रेणु के सामर्थ्य सुं ही श्रीवल्लभ कुं भक्त जन अपने हृदये सम्पुट करवे समर्थ होय हे, विरह को अर्थ विशेष करिके रह एकान्त, एकान्त को सूक्ष्म अर्थ मन सहित दशो इन्द्रियो और चित्त की समग्र वृत्तिओको एक प्रिय स्वरूप में लय होनो ताकु विरह कहे हे। अथवा ऐसे सागर में सरिता मिलवेते अपनो नाम रूप भूल जाय हे और सागर में तद्रुप होय जाय हे तेसे विरही भक्त अपने नाम रूप को भूल के प्रिय स्वरूप में तदात्मक

होय के अखंड स्वरूपानुभव करे ताकुं विरह कहत हे, ताको लक्षण नंददासजी ने कह्यो हे, **मनकी गतिपिय पे एक तारा, समुद्र मीली जेसे गंगाकी धारा॥**

जब मन की स्थिति प्रिय स्वरूप में तदाकार रहे हे तब सर्वात्मभाव सिद्ध होय जाय हे। तब विरही भक्त अपनो विश्व निरालो बनावे हे वेही प्रभु प्रेम को शिखर स्थान हे, के जहां स्थावर जंगम में सर्वत्र प्रियतम के साक्षात् स्वरूप बिना और कछु दिखवे में न आवे, जहां दूसरे को देखते नहीं, दूसरे को श्रवण करते नहीं, और दूसरे को विचार करते नहीं, ताकु सर्वात्मभाव कह्यो जाय हे तासु विरह के अनुभव सुं सर्वात्मभाव की प्राप्ति में श्रीवल्लभ की प्राप्ति होय चुकी जाननो, विरह शब्द को विशेष रहस्य जानवे के लिये श्रीगोकुलेशजी कृत श्री सर्वोत्तमजी की ब्रहद टीका में **'विरहानुभवे कार्थ सर्वत्यागोपदेशकः'** यह नाम में देखनो अब आगे यह रेणु के प्रभाव को कहत हे के भक्तजन यह रेणु को अपने हृदयमें धारण करवे सु श्री वल्लभ के साक्षात् दर्शन की अति आर्ति प्रकट होयगी यह आर्ति ते मानसीन स्वरूप को सदा ध्यान रहेगो यह मानसीन (भावात्मक स्वरूप के नीतान्त ध्यान सुं भावात्मक स्वरूप सुं देह इन्द्रियादि में तदात्मकता होयगी वेही भक्त कोटि सूर्याग्नि सम प्रभाववान विरहाग्नि हु झेलवे समर्थ होय हे यामें कहा आश्चर्य ? जेसे श्री यमुनाजी के जलते तनुनवत्व की प्राप्ति तेसे आपके चरणामृत सुं कली खेड़न रूप साधारण धर्म और अलौकिक सामर्थ्य को दान असाधारण धर्म जैसे सरिताजल तेसे आपके

चरणजल, और जेसे श्रीयमुनाजी कुमारिका काम पूरक हे तेसे श्री विठ्ठलेश प्रभु काम पूरण श्रीमद् दमलाजी द्वारा भयो, ऐसे श्रीविठ्ठलेश प्रभुन के आश्रीतनको कहा दुर्लभ है? (श्रीविठ्ठलेश प्रभु में श्रीवल्लभ विरहाग्नि को द्रवीभूत स्वरूपते विलास हे जाको वर्णन श्री सर्वोत्तमजी-वल्लभाष्टक और सप्त श्लोकी में कियो हे और श्रीमद् दमलाजी में श्रीवल्लभ विरहानल को घनीभूत साकार मूर्तिमान स्वरूपे विलास हे स्वरूप उभय में एकही हे) श्रीमद् वल्लभाधीश के लावण्यामृत पान सुं ही जीन के सर्वांग पुष्ट भये हे ऐसे श्रीमद् दमलाजी जीनके हृदये विराजे हे सो जन वल्लभ विरहाग्नि सुं तद्रुप होय तामें कहा आश्चर्य ?

जाको **दुर्लभांधि सरोरुहः** को दर्शन होय सोतो निश्चे श्रीमद् दमलाजी द्वारा ही होय हे कारणके आप श्रीवल्लभ स्वयं आज्ञा करते हे दमला ओर भक्त बहोत हे में तेरे वश हुं जो जाकुं वश हे वे पराधिन हे। ताते श्रीमद् दमलाजी के चरण रेणु को आश्रय ही कर्त्तव्य हे। यह अष्टदल रास मंडल में हुं हे १६ कमल दल-३२ कमल दल-६४ कमल दल सत सहस्त्र ऐसे अष्टदल में सुं प्रकट होय के रासस्थ भक्त के मनोरथ सिद्ध करत हे, रास में स्वकीया भाव को दान करके एक काल में कोटि स्वरूप धारण करके मनोरथ सिद्ध कियो (प्रेम-आसक्ति-व्यशन अवस्था तांई अवतार लीला परकिया भावात्मक हे, महारास में मुख्य स्वामिनी भाव को दान करके स्वकीया भाव को मनोरथ सिद्ध कियो, अथवा एक कालावच्छिन्न समस्त लीला को अनुभव करे तेसो महाफल स्वकीया भाव में सिद्ध कियो) आगे कहत यह अष्टदल चिन्ह को आधिदैविक भाव विचारी के आपके युगल चरण कमल को आश्रय करनो। चरण चिन्ह के महात्म्य सुं स्वरूप को असाधारण महात्म्य समज्यो जाय हे। तब सुद्रढ स्नेह होय हे। और महात्म्य सुं अनन्यता सिद्ध होय हे। तब श्री वल्लभ प्रभु में अनुराग प्रगटे हे यह अनुरागते सकल मनोरथ सिद्ध होय हे। जीन भक्तो में सहज अनुराग आपके स्वरूप में हे ताकुं महात्म्य की अपेक्षा नहीं रहे हे परन्तु आधुनिक सृष्टि में सहज अनुराग को अभाव हे ताते इनकुं तो महात्म्य की द्रढता सुं ही अनुराग प्रकट होय हे ताते प्रत्येक चिन्ह को महात्म्य भाव हृदय में स्थापन करके उभय चरण कमल को अपने निर्मल हृदय में वसावनो (भक्त जन पदरज प्रतापे सकल सरीया काज यह पुष्टि मारग हे सो वास्तविक प्रमेय रूप हे और प्रमेय (प्रेम) मार्ग में आधिदैविक अवस्था वारे भक्तो की मुख्यता हे।) ताते महानुभाव गोपालदासजी ने वल्लभाख्यान में उपरोक्त प्रकार को वर्णन कियो हे, परन्तु यह केसे भक्त के चरणरज सु काज होयगो ताकुं समजनो आधुनिक काल में अति हितकर होयगो कारण के सत्संग की अपेक्षा दुःसंग की बाहुल्यता हे अब जिनकी चरण रज वांछनीय हे इनके लक्षण कहत हे, के जो भक्त वियोग समुद्र में निमग्न हे-तदात्मिक तन्मनस्का-तद् विचेष्टा-तदालापिका भये हे, तदात्मिका कहेवे सुं प्रभु स्वरूपही जीनकी आत्मा हे अपने आत्माकुं भुलके प्रभु स्वरूप कुं ही आत्मा समजे हे और प्रभु स्वरूपते ही जीनको निर्वाह हे और तन्मनका

कहेवे सुं मनजीनको प्रभु स्वरूप में डुब गयो हे, और जगत प्रपंच तथा देहाध्यासादि प्रपंच को विस्मरण होय गयो हे और तद्विचेष्टा कहेवेसुं भगवान् जेसे पुतनास्तन पानादि लीला करी हे तेसी लीला को अनुकरण विरह के गाढ भाव सुं तद्रूप होय के करवे लगे हे। और तदालापिका कहेवेसुं विरह व्यथा भरे गुणगान करत हे जेसे गोपीजन ने गोपीगीत गायो हे तेसे । ऐसे प्रिय स्वरूप में सर्वांश जो डुबे रहत हे, ऐसे महाभागवत भगवद् भक्तन की चरण रेणु को पुष्टि के महानुभाव वंदना करत हे और ऐसे विरह समुद्र में निमग्न भये विरही रसिक भक्तन की चरण रज दुर्लभ होयवे सुं श्रीहरिरायचरण ने कह्यो हे के रसिक चरण रज व्रज युवतीन की अती दुर्लभ जाय जान व्रज युवती जो प्रभु मथुरा पधारे पश्चात् वियोगानुभव कर रहे हे अथवा रास समये मान और मदसुं प्रभु अन्तरध्यान भये पश्चात् जो गोपीजन विरह समुद्र में निमग्न भये हे ऐसे विरही रसिक भक्त जो व्रज युवती तिनकी चरण रज अति दुर्लभ हे (यह चिन्ह में प्रथम श्रीमद् दमलाजी के चरण कमल की रेणु के महत्व को जो वर्णन कियो हे सो विषय यह प्रकृत विषयते निरालो हे)

एक पुराण में ब्रह्माने अपने पुत्र भृगु कों कह्यो हे के, हे तात व्रज सिमंतीनीजी के चरण रेणु के लिये मेने देवताई ६० हजार वर्ष तपस्या किये तोऊ मोकुं विनके चरण रज के दर्शन हुं नहीं भये तो प्राप्ति कहांते होय ? या प्रकार १४ लोक को बनायवे वारो ब्रह्मा वज्र भक्तोन की चरण रज सुं वंचित रहे और उद्धवजी हुं मर्यादा भक्तो में श्रेष्ठ हे। शास्त्रीय

भक्ति में निपुन हे वे हुं व्रजभक्तन के चरणरेणु की कामना करत हे और वारंवार रेणु को नमन करत हे और यह रेणु को महत्व समज के दैन्यता के भरते कहत हे में यह चरण रेणु को साक्षात् स्पर्श करवे योग्य नहीं हुं व्रज भक्तोन के पधारवे के मार्ग पे में कोई छोटी रुखड़ी होऊ और मेरे मस्तक पे वे चरणरज आय बिराजे तो कृतारथ होऊ। ताते विरही भक्तो की चरणरज अति दुर्लभ कही हे और ऐसे भक्त तो लोकातीत हे भूतलसु अस्पर्श हे। आत्म भूमि में विचारवे वारे हे, विकलता अस्वस्थता जिनकी अवस्था हे भौतिक सृष्टि से और दृष्टि से अदर्शित हे। ताते देहात्मवादीन कुं यह चरण रज अति दुर्लभ कही, या कथन ते भूतल में जो भक्त को संग कियो जाय जो समज पूर्वक करे प्रभुन कुं साक्षात् मिलवेकी जीनकी चाहना हे ऐसे प्रेमीजन के लिये यह जगत लुटेराकोहे, यहां पर ऐसी शंका होय के जगत को प्रभुन को क्रीडा भान्ड हे सद्रुपे भगवद् रूपे हे, तो लुटेरा को जगत केसे कह्यो जाय ? तहां कहत हे के, जो भक्त के देहाध्यासादि प्रपंच निवृत्त होय गये हे और साक्षात् प्रभुन के मिलवे के लिये विरहानुभव कर रहे हे ऐसे भक्तन को जगत यह भौतिक जग से पृथक हे ताते पुष्टि प्रवाह मर्यादा ग्रंथ में आपने आज्ञा करी हे, 'पुष्टि जीवोभिन्ना' ताते ऐसे पुष्टि भक्त को विश्व पृथक हे। इनको मार्ग हुं पृथक हे याकुं समजवे के लिये पद्मनाभदासजी को पद,

सुनो व्रजजन मारग की बाते ।
उलट बाट लुटत पंथी सब कहीयत हुं ताते ॥

यह पद में पुष्टि भक्तोन को मार्ग केसो हे सो दिखायो हे और लुटेरा को समजवे के लिये श्रीहरिरायचरण ने दुःसंग विज्ञान ग्रंथ प्रकट कियो हे। तामें लुटेरा कोन हे सो समजनो और व्रज भक्तनको मार्ग के जामें साक्षात् प्रभु को संगम और आपकी अलौकिक लीला को जामें अनुभव हे, वे मार्ग केसो हे ? सो पद्मनाभदासजी के पदते जाननो श्रीहरिरायचरण ने २० में शिक्षापत्र में कह्यो हे के, शरणागति पाछे सावधान होय के रहेनो बड़े बड़े गिरे हे। कोन गिरे हे ? ताको उदाहरण जड भरत को दियो हे। उदाहरण तो ओरहु हते परन्तु जड भरत को उदाहरण देयवे को कारण जड भरत पहेले जन्म में सार्वभौम राजा हतो और राजपदवी में हुं भगवद् भजन करत हतो। ऐसी राज सम्पत्ति को त्याग करके भगवद् प्राप्ति के लिये अरण्य वास कियो और वहां भगवान् की माया **'मममाया दुरत्या'** ऐसी दैवि गुणमय माया के मोह सुं जड भरत हरणिन के बच्चामें ममतासु बंध गये भजन छुट गयो, तीन जन्म को अंतराय भयो। ताते देहाध्यास प्रपंच छुटने के पश्चात् अथवा देह धर्मन की जीनने उपेक्षा कर दीनी हे ऐसे जन कुं दुःसंग दोषते सावधान रहेनो, अति कष्ट ते भगवद्भाव रूपी निधि प्राप्त होय हे। ताको नाश दुःसंग एक क्षण में कर देय हे। ताते बहोत सावधानता तत्परता सहित सत्य (प्रेम) पथ में चलवे को प्रयत्न करनो। अंधश्रृद्धा-भावलापना सुं प्राप्त भगवद् भाव रूप निधि को गमाय देयगो और सत्य पथ कुं भुल जायगो। प्रभु प्राप्ति में जन्मांतर को विलंब होयगो। जासु जाको संग कियो जाय ताके लक्षण कुं देख लेनो हितकर हे।

सम्प्रदाय सिद्धान्तिक ग्रंथों भूतल में बिराजमान हे महत पुरुषों करुणावान होय के साहित्य प्रकट करीके भूतल की सृष्टि के पोषण के लिये घर गये हे ताको अवलोकन करनो ओर ता पोषण ते प्रेम पथ पे चलवे को प्रयत्न करनो, साक्षात प्रभु मिलन की अभिलाषा वारे जन विप्रयोग मार्ग पे चलवे वारे हे, ताको हित विचारी के श्रीवल्लभ प्रभु ने कृष्णाश्रय ग्रंथ में आज्ञा करी हे,

सर्व मार्गेषु नस्टेषु कलौच खल धर्माणी ।
अखंड प्रचुरे लोके कृष्ण एव गतिर्मम: ॥

कलिको खल धर्म बहुधा जनो में व्याप्त होय गयो हे, कारण अब भूतल में लीला मध्यपाति सृष्टि क्वचित हे। ताते श्री हरिरायजी ने शिक्षापत्र में कह्यो हे के, अब प्रभुने अपनो बल समेट लियो हे जब आपने अपने बल को समेट लियो हे तब कालाधिन सृष्टि होय जाय हे तब खल धर्म सुं व्याप्त होय हे। खल धर्म वारेन में प्रभु प्राप्ति को वास्तविक दुःख नहीं होय हे। तासु ऐसे वैष्णव वेशधारी वंचको से सावधान रहेवे के लिये श्री हरिराय चरणने दुःसंग विज्ञान ग्रंथ प्रकट कियो हे सत पुरुष की बुद्धि कुं शीघ्र हरण करे तेसो कलि को प्रभाव हे। ताते आप आज्ञा करत हे, **लाभ पुजार्थ यत्नेषु कृष्ण एव गतिर्मम:** सत्पुरुषों हुं अहंकार में विमूढ होय के स्वार्थ सिद्धि लिए पुजायवे की ईच्छा करे हे और अपनी प्रतिष्ठा मुग्धो पर बसाय के भौतिक स्वार्थ सिद्ध करत हे ताते कृष्णाश्रयमे केवल प्रभुन के शरण को उपदेश करत हे। पुष्टि मार्गमें जाको उत्तमोत्तम अधिकार हे इनकुं प्रभु

स्वरूप अतिरिक्त सब कछु पाप रूप हे। ऐसे न्याशादेश में श्रीप्रभुचरण ने आज्ञा करी हे। सत पुरुष भगवद् शास्त्रोको अवलोकन करत हे। परन्तु याते प्रभु प्राप्ति को दुःख नहीं होय तब विद्याबलके अहंकारते विमूढ होय जगत में पुजायवे की इच्छा करे तब भगवान् को विस्मरण होय भगवान् को विस्मरण और अन्य में रुचि येही पुष्टि मार्ग में पाप को स्वरूप हे। याते ऐसो समज्यो जाय हे के सर्व प्रकारते प्रभुन के वियोगानुभव को जो दुःख हे सोइ सर्व प्रकार के अनिष्टते बचायवे वारो हे, (भा. ११,२८,२७) में उद्धवजी प्रति भगवद् वाक्य हे के जहां तांई मेरे स्वरूप में द्रढ आशक्ति न होय वहां तांई माया जन्म कार्यो को संग सर्वथा छोड देनो चाहिये, प्रतिष्ठा भी अविद्या रूप पुतना के ९ अंगमें को एक अंग हे। ताते प्रतिष्ठा में जब विद्वान सत पुरुषकी रुचि भई तब प्रभु को तिरोधान पनो होय हे। ताते स्वरूपासक्ति जहां तांई दृढ नहीं भई हे वहां तांई प्रभु स्वरूपकुं भुलायवे वारी प्रतिष्ठाते हुं सावधान रहेनो।

श्रीमद् भागवत में कह्यो 'हे के, हे मुनि करोड़ो मुक्त पुरुषों में हुं नारायण परायण प्रसान्त स्वभावी भक्त मिलनो दुर्लभ हे । और संप्रदाय साहित्य में हुं महानुभावोंने कह्यो हे के, **रसिक युथ बहुना मिले,सिंह टोल नहीं होय। विरह वेल जहां तहां नहीं, घट घट प्रेम न जोय॥** विशुद्ध प्रभु प्रेमीओके टोल भूतल में नहीं हे, ओर जो हे इनको मार्ग पृथक हे ऐसे भक्त बहोत विरल हे, ताते भाग्यवसात जीनको वरण श्रीवल्लभ प्रभुने करुणा करिके अपने मूल स्वरूप में

कियो हे और ऐसे जनपतिभावते भजन करके साक्षात् मिलवे की कामना करे हे तलफे हे। ताकु बहोत सावधानता के साथ अपने निजधामकी ओर गतिमान होनो, एक प्रियतम प्रभु को ही संग राखनो, यह संग कोन प्रकार ते राखनो ? भावात्मक प्रभु के स्वरूप को ध्यान करनो, ताको ही गुणगान करनो, वाको ही सेवन स्मरण करनो, प्रभुको स्वरूप नामात्मक और रूपात्मक दोय प्रकार को हे, नाम स्मरण द्वारा हुं प्रभु को संबंध रही आवे हे, ओर महत पुरुषों की वाणी ग्रंथों में बिराज रही हे ताको अवलोकन करनो। जिनकी वाणी को अवलोकन होयगो येही महत पुरुषको संग वाणी द्वारा प्राप्त होयगो ऐसे निश्चये जाननो और दैन्यता-आदरभाव सुं अवलोकन करवे सुं जिनकी वाणी हे वेही स्वरूप हृदय में पधार के अनेक विध भावकी वृद्धि करवेवारी प्रेरणा करे हे, तासु अपने स्वामी वल्लभाग्नि में अनन्य हे विनकी वाणी को आश्रय करनो, श्री गोपेश्वरजी (शी.४१.११) में कहत हे के, धन्य हरजीवनदास तिहारे हृदय में श्रीहरिरायजी आय मेरो दुःख दूर कियो ओर यह शिक्षापत्र की टीका करी हे, सो मेरी कृति मति जानीयो, मेरे हृदय में प्रविष्ट होय श्रीहरिरायजीने किये हे ताते श्रीहरिरायजी के हृदय में श्रीआचार्यजी तथा श्रीगुसांईजी की निरंतर स्थिति हे ताते यह भाव प्रकट भयो हे, या प्रकार जिनकी वाणी को अवलोकन होयगो वेही स्वरूप हृदय में पधारके संग देवे हे और श्रीहरिराय चरणने बहिर्मुख निवृत्ति ग्रंथ में आज्ञा करी हे के मुख्य सिद्धांत तो आपने आत्म स्वरूप श्रीवल्लभाधीश को ही आश्रय

कर्तव्य हे, कालबले जब आपमें विश्वास न रहे तब आपके अनन्य तदीय जन को संग करनो, परन्तु तदीय जो हे सो वर्तमान काल में मिलने दुर्लभ हे, और साधन दशा वारेन कुं काल बाधा करत हे ताकुं संग की जरूरत हे तो श्रीमहाप्रभुजी में जिनकी अनन्य निष्ठा हे तीनकी वाणी को संग राखनो ता वाणी ते स्वामी के चरित्र को गुणगान करनो और आप श्रीवल्लभ के भावात्मक स्वरूप को मानसी ध्यान करनो और आपके नाम को स्मरण चातक वत अनन्य टेकते अति दैन्य भाव से करते रहेनो ऐही परम हितकारी हे, तदीयजन भूतल में दुर्लभ हे ताको कारण लीलाधाम ते जो दैवीजीव बिछुरे हते सो तो बहुधा लीला धाम में प्रवेश किये, अब भूतल में लीलाते बिछुरे दैवीजीव क्वचित हे सो दुःसंग ते बच के विप्रयोगानुभव में सबके परित्याग पूर्वक रहेंगे तब ताको प्रवेश लीला धाम में होयगो, महानुभावोंने वर्तमान स्थिति को अनुभव करके ठीक ही कह्यो हे के,

देख-देख सखि चालिये गिरि में पंथ अनेक
दुष्ट जीव कलिकाल के जो प्रभु राखे टेक ॥

ताते श्रीवल्लभ के विरहीजन सब ओरते अपनो मन निकासी के यह दृश्य जगत के मुसाफिर होय के अपने प्यारे देश नित्य लीलाधाम में जायवे के लिये सदैव प्रयत्न करे ।

अष्टदल चिन्ह को धोल

अष्ट दलनु चिन्ह धर्यु छे, प्रभुजीए अति सारु रे ॥
ऐउनां पद अम्बुज पर, तन मन धन जाऊ वारी रे॥

अष्ट दलनो भाव तो, अति अलौकिक जानो रे॥
तेनाभिन्न भिन्न सहुं, भाव रसात्मक मानो रे॥

आचार उप दिशा, चार दिशा जानो रे॥
ए बेऊ मलीने अष्ट कोण, एम मनमां मानो रे॥

पूर्व पशिचम दक्षिण, उत्तर वाणी कहेता रे॥
आ चार चार खुंट, चरण मांहे रहेता रे॥

आ चार दिशाना उपनाम, एना छे न्यारा रे॥
वायु अग्नि नैरुत्य, इशान ऐम धार्या रे॥

पृथ्वी पावन कीधा, चरण कमल सुं वारी रे॥
भक्ति ज्यारे सिथिल थई, एवु मन विचारी रे॥

आ कीधां प्रकाश अष्टोदश, भक्ति जन प्यासा रे॥
आ सहु रसात्मक भाव, चिन्हना छे न्यारा रे॥

चरण सरोज ना भाव, जे जननित गाता रे॥
अंधकार भ्रम निशा, ऐमना सर्वे जाता रे॥

आधिदैविक जे सुर, वेद सहु गाता रे॥
आ तेथी सहु अंधकार, प्रमाणो कना सौ जतारे॥

तेम जेना हृदये ऐ चरण, कृपा करि बिराजता रे॥
अंधकार अज्ञान सहुं, नीसरे छे ते जन नारे॥

वणी भाव अष्टकोण नो, अष्टसेवा रूप कहीरे।।
विप्रयोग अने संयोग, उभय मनमां लहीये रे।।

चार प्रहर संयोग बहार सेवा रे,
विप्रयोग मांहे ते स्मरण में वारे।।

आठ ऐना छे लीला रसात्मक भाव रे,
जे ध्यान करे ने मुख सुं गाय रे।।

तेना उरमां अष्ट सिद्धि बिराजे रे,
जेना शिश पर रेणु का गाजे रे।।

...यहां अष्टदल चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

कमल

वाम चरण में षष्ठम चिन्ह कमल को हे ताको भाव कहत हे,

सो यह कमल चिन्ह श्री स्वामिनी भावात्मक हे। यह कमल सर्व के आधार रूप हे। स्वामिनी भावात्मक स्वरूप सुं सबके आधार (आलंबन) रूपसुं लीला परिकर समस्त में व्यापक हे। तेसे चरण में कमल चिन्ह धारणकरी श्री महाप्रभुजी जताय रहे हे,

व्यापी रह्यो सब जननमें ज्यों लो दमला अंश।
त्यों लो श्री महाप्रभुनको दान देत निजवंश।।

यह कमल चिन्ह मूल स्वामिनी भावात्मक है और प्रभु जेसे सबनकी आत्मा हे। तासु सर्वात्मा कहे जाय हे। तेसे मूल स्वामिनीजी हुं सर्वकी आत्मारूप सुं सर्वात्मक सब लीला परिकर के भीतर बिराजे हे, जाकी श्रीवल्लभ चरण कमल में रति हे ताकु कृष्णाधरा, मृतास्वाद प्राप्त होय हे, जाके अन्यकुं सो श्री ठाकोरजी स्वयं ही यह पद्म धारण को हेतु जतावत हे के 'मेरी गति हुं एक कृष्णाधरा मृतास्वाद में ही हे । ताते कह्यो के राधा अधर सुधा विना, पियुने बीजुते कई नव भावेजी ।।' ओर श्री ठाकोरजी फेर हस्तकमल, २ चरण कमल, २ नेत्र कमल, १ मुख कमल, १ हृदय कमल, १ नाभी कमल, या प्रकार ९ कमल को आश्रय करे तोऊ श्री

महाप्रभुजी के चरण कमल के आश्रय विना आप श्री ठाकोरजी स्वयं स्वरूपानंद को दान करे नहीं। श्री वल्लभ प्रभु के स्वामिनी भावांश तेही भगवद् प्राप्ति होय हे। और यह कमल शीतल हे, अर्थात् श्रीजीके विरहताप हर्ता हे। प्रिया प्रियतम को जो स्फुरत प्रेमामृत रूपी रस हे सो सगरो सीमीट के यह कमल चिन्ह में रह्यो हे। सो स्फुरत प्रेमामृत रूपी जल के सरोवर में यह कमल प्रकट भयो हे। तासुं यह कमल सुधा संवलीत प्रेम सुं पूर्ण हे। (श्रीमहाप्रभुजी के स्वरूप को स्फुरत कृष्ण प्रेमामृत ग्रंथ में जो वर्णन कियो हे सो गुणस्वरूपं हे, रसात्मक भगवान् वैश्वानर विभु वदन को गुण सुधा हे, जे लीला परिकर समस्त में व्यापक बिराजके मधुर भावनाओकी स्फुरणा करत हे यह सुधा-अग्निरूप हे। तासुं निरवधि रसानुभव करते छते अतृप्त रहत हे, अगणितानंद को यह सहज स्वभाव के हे अनंत रसाब्धि को भोग करते छते अतृप्त रहेनो, भगवान् के संबंध को जो अमृत हे सो अतृप्त स्वभाव वारो हे, ऐसे (सु. ३.५.११में) श्रीआचार्य चरण ने आज्ञा करी हे 'रासस्त्री भाव पूरित विग्रह स्फुरत कृष्णप्रेमामृत की सुभग मूर्ति,' और स्त्रीगूढ भावो पुष्टि मार्गे तत्वम यह तीन्योनकी एक संगती है) ताते जो कोई श्रीमहाप्रभुजी के चरण कमल को चिन्तवन करे ताकुं स्फुरत कृष्णप्रेमामृत रस की प्राप्ति होय यह रस श्रीवल्लभ कृपाते ही सुलभ हे। (स्फुरत कृष्ण प्रेमामृत स्वरूप कृष्णास्य हे, यह स्वरूप में जिनकी निष्ठा हे वे भक्त कृष्णास्य में जब तदात्मक होय हे तब कीट भ्रमर न्याये भक्त स्वयं कृष्णास्य रूप होय हे। या स्वरूप को दान

अति दुर्लभ हे करुणा वरणीय हे, जाको निरूपण वेणुगीत की श्री सुबोधिनीजी में बर्हापीडं श्लोकमें कियो हे । अवतार लीलामें क्वचित भक्तनकुं यह स्वरूप दान हे)

श्रीठाकोरजी कुं यह चरण के क्षण मात्र के सेवनते कमल को चिन्ह श्रीस्वामिनीजी के सर्वांग को अनुभव करावत हे, (ताको कारण सर्वशक्तिधृक स्वरूप श्रीवल्लभ में सु संयोगात्मक मुख्य स्वामिनीजी को प्राकट्य हे। ऐसे अनंत स्वामिनीजी सर्वशक्तिधृक श्रीवल्लभ ने अपने स्वरूप में धारण किये हे। ताते आपके चरण चिन्ह पद्म के सेवन ते श्री ठाकुरजीको श्रीस्वामिनीजी के सर्वांग को अनुभव होय तामें कहाँ आश्चर्य ?) याही भाव ते श्रीगोवर्धनधर अहर्निष कमल को श्रीहस्तमें धारण करी राखत हे । या धारण के मीषते श्रीमहाप्रभुजी के चरण परस को सुखानुभव करत हे तासुं श्रीजी हुं कमल अति प्रिय हे, सो पद्मनाभदासजी पदमें जतावत हे के, 'श्रीमद् वल्लभ के स्वरूप तो नखशिष प्रति आनंद सार भूता । मधुर अधर सुधा की खांण हे । आप जब अपनी मधुर रसनाते अपनेही मधुर स्वरूप को वर्णन करत हे ता समे निकट वर्ती जन मधुर स्वरूपमें निमग्न होय जाय हे जाकी सौन्दर्य लावण्यता कुं देखके श्रीजी हुं विमोहित होय जाय हे ऐसो आपको अति मोहन स्वरूप हे । तब निजजन आपके माधुर्य स्वरूप और माधुर्य रसनाते श्रावीत पियूष पान करके अपनी सुधी भूल जाय तामें कहा आश्चर्य ?' गोपीजन कहत हे प्यारे आपको चरण कमल हमारे मस्तक पे धरो हृदयमें तो बिराजत हे । सो तो बाहिर नाहि आवत ताते

विनंती करत हे सो रमण विहार के करुणा रूप चरण कमल हे ताते चरण कमल धारण की विनंती करत हे, यहां चिन्ह और चरण को परस्पर संबंध हे ताते चिह्न के संग चरण को हुं विलास कहत हे जेसे मीन जलते बाहिर आते ही प्राण तजे हे तेसे भक्तोन के मन अखंड चरण कमल के रस में डुबे हे क्षण हुं बिछुरे नहीं हे। तेसे आपके भूतल प्राकट्य में हुं भूतलस्थ भक्त को यह जतावत हे के जेसे मूलधाममें सकल भक्तन को मन चरण कमल के रस में पगे हे। ताते विनके मनरूपी मीन चरण सरोवर में अखंड विहार करत हे तेसे तुम कुं हुं यह चरण कमल के रस में विहार करावुंगो ताते सूरदासजी गावत हे,

'चकइरी चल चरण सरोवर जहां नहीं प्रेम वियोग ।
और, अब न सुहाय विषय रस छिल्लर वह समुद्र की आश ।।'

यहां के संसार सुखो कुं छिल्लर बताये ताते संसार को सुख अनित्य हे, गंदले पानी के गेडले तुल्य हे। तामें ते भक्तन की रुचि दूर कराय। अलौकिक अगाध जामें प्रेम जल भर्यो हे ताको सेवन करवे परम भक्त सूरदासजी कहत हे, चकइरी चल चरणसरोवर । **शंका** - महानुभाव सूरदासजी श्री महाप्रभुजी के शरण आये ता समे आपने श्रीमद् भागवत के दशम स्कंध की अनुक्रमणिका सुनाये, यह सुनते ही सूरदासजी के भितर नित्य लीलाधाम की समग्र लीला स्थापित होय गई और लीला के साक्षात् दर्शन होयवे लगे, 'तब **ब्रज भयो महर के पुत, जब यह बात सुनी**' यह प्रभु प्राकट्य के लीला को गुणगान करवे लगे ऐसे महानुभाव सूर

के जीन को साक्षात् दर्शन होय रहे हे। 'सो अब न सुहाय विषय रस छिल्लर वह समुद्र की आश।' ऐसो क्यों कहत हे ?

समाधान : महानुभाव सूर तो लीला रस में मग्न हे इनके लिये विषय रस छिल्लर को संबंध नहीं घटे हे, परन्तु सागर समान दयालुता जीन में हे ऐसे सूरदासजी भूतल दैवी सृष्टि को हित विचारी के निरवधि आनंद स्वरूप साक्षात् धर्मी पुष्टि प्रभु और गंदले गडेले जेसे विषय रस को भेद बतावत हे, पुष्टि लीला मध्यपाति दैवीजीव भूतल में आयके अपनो दिव्य आनंद भूल गये हे, प्रवाही और मर्यादा सृष्टि के भावो में रंग गयो साक्षात् भजनानंद स्वरूपानुभव करवेवारी पुष्टि सृष्टि के लिये तो विषयानंद और ब्रह्मानंद हुं तुच्छ हे। तासु श्रीमद् भागवत में कह्यो हे के, **नारायण परायण (धर्मी स्वरूप में निष्ठा वारे) भक्त तो स्वर्ग-नर्क और मोक्ष की भी समतुलना करे हे।** स्वरूपासक्ति धर्मी परायण भक्त कुं तो ब्रह्मानंद हुं अलौकिक संसारवत हे। जेसो लौकिक संसार तेसो अलौकिक संसार हे यह अलौकिक भूतलस्थ पुष्टि प्रभुन के पुष्टि मार्ग में शरण आये परिकर में आनंद को अनुभव करनो सोइ अलौकिक संसार, या संसार में प्रभुन को संबंध मान के प्रभु संबंध के आनंद में उरझ जाय हे। ताकु साक्षात् स्वरूप को अनुभव नहीं होय हे। कारण के भूतल की पुष्टि मार्ग में शरण आई सृष्टि में प्राकृत धर्म रहे भये हे। ताते अल्प आनंद वारे हे। पुष्टि प्रभुन को साक्षात् अनुभव, जगत प्रपंच तथा देहादिक अध्यास प्राकृत प्रपंच की विस्मृति न होय वहां तांई नहीं होय हे।

जब प्रपंच की विस्मृति होय तब वेणुनाद द्वारा सुधा को प्रवेश होय यह सुधा के प्रवेशते भक्तन को आधिदैविक स्वरूप सिद्ध होय तब सुधा के संबंध सु पुष्टि दैविजीव विषयानंद और ब्रह्मानंद को तुच्छ गीने हे, प्रभु प्रेमकी एक बिन्दु पर समग्र भौतिक ब्रह्मांड की सृष्टि मिल रही है, यह बिन्दु प्रेममें जीवन निर्वाह करे हे। तो ऐसे प्रेम सागर प्रभुन को नाद द्वारा अनुभव करवेवारे विषयानंद और ब्रह्मानंद को तुच्छ कर देय तामें कहा आश्चर्य ? ताते भजनानंद स्वरूपानंद को अनुभव करवे वारे के लिये तो भूतलस्थ पुष्टि मार्ग में शरण आई सृष्टि के जामे प्राकृत अध्यासकी भी मिश्रीतता रहत हे तामें ब्रह्मभाव सुं प्रभुन को संबंध मान के आनंद को अनुभव करनो सोइ ब्रह्मानंदरूप अलौकिक संसार हे ताते धर्मी साक्षात् स्वरूप में जिनकी निष्ठा हे ऐसे प्रेम पथिक यह अलौकिक संसार में नहीं अटके हे, शास्त्रार्थ निबंध में श्रीआचार्य चरण ने आज्ञा करी हे ब्रह्मभाव की अपेक्षा भक्तनको गृह उत्तम हे ताको कारण सेव्य स्वरूप की सेवामें धर्मी स्वरूप को अनुभव होय हे सो अनुभव ब्रह्मभाव राखके प्रभुनके संबंधवारी सृष्टि में नहीं होय शके हे ताते भक्तनको गृह उत्तम कह्यो और श्रीहरिराय चरण ने (शी. १८ में) कह्यो हे के श्रीवल्लभ की कृपातें जिनकुं नित्य लीला स्वरूप को ज्ञान होय गयो हे और श्री वल्लभ ने विप्रयोग को दान कियो हे और देहादिक प्राकृत प्रपंच की जीनने उपेक्षा कर दीये हे ऐसे विरहीजन कुं लीलाधाम स्थित अलौकिक परिकर बिना भूतल की प्राकृत अध्यासवारी दैवि सृष्टि में आनंद को

अभाव होय जाय हे प्रभुन की कृपासुं ऐसे विरही जन भूतल के अलौकिक संसार ते उपराम होय के प्रभुन के साक्षात् स्वरूप को अनुभव करवे के लिये सर्वको परित्याग करने विरह को अनुभव करे हे, और येही शिक्षापत्र में आगे कह्यो हे के ऐसे विरही भक्तनकुं चार तत्व (१) श्री ठाकोरजी (२) श्रीमहाप्रभुजी (३) श्रीगुसांईजी (४) और श्री स्वामिनीजी अथवा लीलास्थित परिकर इनके समान भूतल में काहु को नहीं जाननो ताते साक्षात् प्रभु प्राप्ति की इच्छा वारे भाग्यवान जन कुं तो भूतल को प्राकृत अध्यासवारो दैवि परिकर हुं अलौकिक संसार वत हे। तामें ब्रह्मभाव सुं भगवान् के संबंध को आनंद अनुभव करनो और साक्षात् प्रभु प्राप्ति को प्रयत्न नहीं करनो यह एक दैवि गुणमय प्रभुनकी माया को गहन अंधकार हे ताते गीताजी में भगवान्ने श्री मुखते कह्यो हे के, ‘हे पार्थ मेरी दैवि गुणमय माया जो बहुरूपीणी हे ताको पार होनो बहुत कठिन हे सबको परित्याग करके एक मेरे ही शरण में अनन्य होय के रहत हे सोई यह माया कु तर जाय हे माया अहंता ममतात्मक संसार रूप हे वे दैवि गुणमय माया भूतल की प्रभु संबंधी प्राकृत अध्यासवारी सृष्टि में प्रभु संबंधी ममता में उरझावे हे या प्रकार को ब्रह्मभाव भौतिक और आध्यात्मिक ब्रह्मभाव रूपी अलौकिक संसार आधिदैविक साक्षात् स्वरूप को अनुभव करवे वारे जन के लिये गहन अंधकार रूप हे, जब रास में पधारे श्री गोपीजन के मान मद सुं प्रभु अंतरध्यान भये तब ता बीरीया व्रज भक्तोने प्रभुनकी खोज करी ओर ढूंढते ढूंढते अरण्य में आगे

चले वहां अंधकार देख्यो तब अंधकार में सुं गोपीजन पाछे फिर आये वहां फल प्रकरण की श्री सुबोधिनीजी में करुणा सागर श्रीवल्लभ अपने अंगीकृत स्वकीय जन को प्रबोध करवे आज्ञा करत हे, 'भगवदीय अंधकार में प्रवेश नहीं करे हे, धर्मी परक यह दुर्बोध गुह्यतम वाक्य के रहस्यको श्रीगोकुलेश प्रभुने श्री सर्वोत्तमजी की ब्रहद टीका अन्तरगत 'सर्वलक्षण सम्पन्ना' नाम में जतायो हे के', श्रीगोपीजन समग्र विषय को परित्याग करके और ब्रह्मानंद को हुं उलंघन करके साक्षात् स्वरूपानुभव के लिये नाद सुं रासस्थली में पधारे हते और रमण प्रभुन के मन रूपी चन्द्रमा श्रीगोपीजनों के हृदय रूपी परम व्योम में उदय होय के स्वरूपात्मक रश्मिते प्रकाश कर रह्यो हतो ऐसे गोपीजन साक्षात् स्वरूपानुभव किये बीना ब्रह्मानंद रूपी अंधकार में केसे प्रवेश करे ? श्रीगोपीजन को महारास में नित्यलीला स्वरूप के अनुभव किये पाछे नित्य लीलाधाम में ही प्रवेश भयो हे और जो व्रज में पाछे आये हे सो तो प्रतिकृति रूप गोपीजन हे ताते भजनानंद के अधिकारी जन ब्रह्मानंद में प्रवेश नहीं करे हे सन्यासनिर्णय में श्री आचार्य चरण ने आज्ञा करी हे के, **'ज्ञानिनामपि वाक्येन न भक्तं मोहयिष्यति। आत्मप्रदः प्रियश्चापि किमर्थं मोहयिष्यति॥'** विष्णु की माया ज्ञानीन को मोह करे हे साक्षात् धर्मी स्वरूप में निष्ठा वारे भक्तन को मोह नहीं कर शके हे, उद्धवजी जब प्रिय संदेश लेय के व्रज में आये तब गोपीजनों को व्यापक भगवान् के स्वरूप की ज्ञान करायवे लगे धर्मी साक्षात् स्वरूप में जिनकी दृढ़ निष्ठा

हे ऐसे वज्ररत्नाओं ने उद्धवजी के यह व्यापक भगवान् के ज्ञान को ठुकराय दिये या हेतुते श्रीआचार्य चरणआज्ञा करे हे के ज्ञानीन के वाक्य ते भक्तोनकुं मोह नहीं होय। धर्मी में निष्ठा वारे जन को आपको यह वाक्य पालन कर रह्यो हे। ब्रह्म भाव त्रिविधा हे भौतिक आध्यात्मिक-आधिदैविक-तामें भौतिक ब्रह्मभाव-भौतिक समस्त ब्रह्मांड भगवान् को आधिभौतिक स्वरूप हे तामें पदार्थ मात्र भगवान् के सद अंश सुं भगवद्रूप दिखे हे और यामें जड-जीव-अंतर्यामी रुपते भौतिक स्वरूपे भगवान् की क्रीडा हे। और आध्यात्मिक ब्रह्मभाव में सबन की आत्मारूप ते सबन में भगवान् व्यापक बिराज रहे हे। ऐसी भावना रहे सो आध्यात्मिक ब्रह्मभाव हे। या प्रकार के ब्रह्मभाव ते ज्ञानीन को मोक्ष होय हे तामें भगवान् को आध्यात्मिक 'चिद्' स्वरूप क्रीडा करे हे।

तिसरो आधिदैविक ब्रह्मभाव रसात्मक स्वरूपात्मक हे। यह ब्रह्मभाव को दूसरो (पर्याय) नाम सर्वात्मभाव हे। लीला धाम समस्त परिकर लीला सामग्री आदि में हस्त पादादि युक्त साकार कृष्णदर्शन देवे हे यह आधिदैविक ब्रह्मभाव हे। यह आधिदैविक ब्रह्मभाव (सर्वात्मभाव) सिद्ध भयो । भुतल में रहेते भये हुं वे भक्त को विश्व पलट जाय हे यह आधिदैविक ब्रह्मभाव अग्निकुमारिकान को वस्त्र दान में भयो तब अग्नि कुमारिका रसात्मक भाव के सागर तुल्य आधिदैविक स्वरूप कूं प्राप्त भये, अथवा अग्निकुमारिका के समग्र संघात में कृष्णारूपता भई । वहां को श्री सुबोधिनीजी में कह्यो के अब यह अग्नि कुमारिकान को अन्यके लिये अदर्शन हे यह

रसात्मक आधिदैविक ब्रह्मभाव हे। सो प्राप्त भये ते पुष्टि प्रभु जो अगणितानंद रूप हे ताके साथ रमणविहार की योग्यता होय हे, तेसे श्रुतिरूपान को वेणुनाद द्वारा रसात्मक ब्रह्मभाव प्राप्त भयो जिनको निरूपण 'बर्हापीडं' श्लोक में कियो हे। यह आधिदैविक ब्रह्मभाव में रमण प्रेष्ठ प्रभुनको साक्षात् अनुभव हे और भगवान् मूल आधिदैविक स्वरूप ते यह ब्रह्मभाव में क्रीड़ा करे हे, या प्रकार ब्रह्मभाव हूं त्रिविधा हे भौतिक ब्रह्मभाव को आनंद आय हे। आध्यात्मिक को आनंद गिनतीको हे, और आधिदैविक ब्रह्मभाव को आनंद अगणित हे ताते भजनानंद निरवधि आनंद वारे प्रभुन के साक्षात् स्वरूप को अनुभव करवेकी इच्छावारे परम भाग्यवान विरहीजन ब्रह्मानंद रूपी अलौकिक संसार ते उपराम होय जाय हे।

अलौकिक संसार में उरझायवे वारी भगवान् की माया हे। यह माया को बंधन दृढ़ स्वरूपाशक्ति बिना नहीं टरे हे और प्रभुन के स्वरूप में दृढाशक्ति देहाध्यासादि प्राकृत प्रपंच को सर्वथा लय न होय वहां तांई नहीं होय शके हे, और भौतिक आध्यात्मिक ब्रह्मभाव को उलंघन हुं वेही कर शके हे। प्राकृत अध्यास जिनके छूट गये हें। प्राकृत अध्यासवारी दैवी सृष्टि कुं तो उभय (भौतिक-आध्यात्मिक) ब्रह्मभाव में स्थित रहेनो ही हितकर हे कारण के ब्रह्मभाव में भगवान् के दोय धर्म मुख्य पणो रहे हे। एकतो निर्दोषता और दूसरो समभाव यह दोय धर्मनसुं समस्त प्राकृत अध्यास की निवृति होय हे तब जीवात्मा निरावरण होय हे पश्चाद् भगवान् अपनो स्वरूपानंद दान करे की इच्छा करे तब वे जीवको साक्षात्

स्वरूपानुभव होय हे, यह स्वरूपानुभव की पात्रता ब्रह्मभाव पश्चाद होय हे ब्रह्मभाव पश्चाद् स्वरूपानुभव की प्रणाली भगवद् शास्त्रोक्त नियमानुसारीणी हे यह प्रणाली अतिरिक्त भी स्वरूपानन्द करवे में आप समर्थ है । सर्व निर्णय निबंधकार में प्रमेय दिग्विजय प्रमाण अनुरोधि स्वतंत्रंमूच इति ।

यह कारिका में द्विधा प्रमेय को वर्णन कियो हे तो जहां भगवद् शास्त्रोक्त प्रणाली से स्वरूप दान करवे की इच्छा हे वहां ब्रह्मभाव सिद्ध भये पश्चाद् स्वरूपानंद दान होय हे और दूसरे स्वतंत्र प्रमेय में यह प्रणाली की अपेक्षा नहीं कर्तु, अकर्तु, अन्यथा कर्तुम ऐश्वर्य विरुद्ध धर्माश्रय प्रभुनकी इच्छा ही मुख्य कारण हे। अति अनुगृहितामें स्वतंत्र प्रमेय को कार्य हे।

तामस प्रमेय प्रकरण के १७ में अध्याय में शरद को वर्णन हे यह शरद आध्यात्मिक ब्रह्मभाव रूप हे। आध्यात्मिक पंचपर्वा अविद्या की निवृति पश्चात यह ब्रह्मभाव सिद्ध होय हे। यह ब्रह्मभाव व्रजस्थ भक्तो कुं प्राप्त भये काल माया कृत जन्म मरण और त्रिविध तापकी निवृत्ति भई और प्राकृत अध्यास पंच पर्वा अविद्या रूप हे तामें ते मुक्त भये, परन्तु साक्षात् रमण प्रेष्ठ रसात्मक प्रभुके अनुभव करवे को जाको अधिकार हे ऐसे गोपीजनो के तापकी निवृत्ति नहीं भई। आध्यात्मिक ब्रह्मभाव तो यह गोपीजनों कु भी सिद्ध होय गयो हतो। तोऊ साक्षात् स्वरूपानुभव के अधिकारिणी यह व्रजरत्ना होयवे सुं ब्रह्मभाव की स्थिति प्राप्त करत छते तापकी निवृति नहीं भई, तेसे आधुनिक में भी कोईक भाग्यवान को

स्वरूपदान करवे को प्रभुने विचार्यो हे तो वे जन आध्यात्मिक ब्रह्मभाव प्राप्त करके हुं ब्रह्मानंद रूप अलौकिक संसार में उरझे नहीं हे अथवा ब्रह्मानंद कु तुच्छ गीने हे ऐसे जन में भगवान् पुष्टि प्रभु की पूर्ण कृपाशक्तिने प्रवेश कियो हे। यह कृपाशक्ति नित्य लीला स्वरूप के निरवधि विलास को ज्ञान करायवेवारी हे और निरवधि विलास के धारण करवे योग्य आधिदैविक विग्रह सिद्ध करवेवारी हे। जा भक्त में यह कृपाशक्ति को प्रवेश हे इनकुं निरवधि भगवद् स्वरूपको ज्ञान होयवे सुं ब्रह्मानंद को तुच्छ गिने हे। ताकु साक्षात् स्वरूपानुभव बिना ताप की निवृत्ति नहीं होय हे। कृपाशक्ति को कार्य भी द्विधा हे। एक कार्य संयोग लीला को अधिकरण भक्त में सिद्ध करे हे, दूसरो कार्य ते धर्मी विप्रयोग लीला के अधिकरण सिद्ध करत हे। श्री यमुनाष्टक में अष्ट सिद्धि को वर्णन श्री मत्प्रभुचरण और श्रीहरिराय चरणने कियो हे। तामें चार सिद्ध संयोग लीला परक हे और दूसरी चार सिद्धि धर्मी विप्रयोग लीला को सिद्ध करत हे । यहां पर धर्मी स्वरूप के लिये जो विषय चर्चायो हे और अलौकिक संसार में भी नहीं उरझवे को सूचन कियो हे, वे साक्षात् स्वरूपानुभव करवे की इच्छा वारे और परित्याग पूर्वक ताप भाव की स्थिति वारे कोई एक विरल महाभाग्यवान जनके लिये ही हे, जिनको ऐसो अधिकार नहीं अथवा ऐसे अधिकार को दान प्रभुने नहीं कियो हे, ताकु भौतिक और आध्यात्मिक ब्रह्मभाव की मर्यादा को पालन सर्वथा हितकर हे ।

अधिकार बिनाकी चेष्टा अतोभृष्ट, ततोभृष्ट कर देय हे।

ताते अपने अधिकारानुसार चलनो योग्य हे, अब धर्मी स्वरूप में निष्ठा की द्रढ़ता के लिये ओर हु कहत हे महानुभव पद्मनाभदासजी एक पद में कह्यो हे के,

जायु जाय कोन के घरपे श्रीवल्लभ से पाय घनी।
तीन लोक हुं फीर फीर आयो आनंद अल्प उपाधि घनी।।

यहा तीन लोक को कथन कियो हे सो तीन लोक स्वर्ग-मृत्यु-पाताल को तो महानुभव के लिये स्मरण हु नहीं होय हे, तो यह तीन लोक कोन से ? यह शंका पुष्टिमें अंगीकृत जनकुं अवश्य होयगी, ताके समाधान में कह्यो जाय हे के यह तीन लोक भूतलस्थ पुष्टि मार्ग संबंधी सृष्टि प्राकृत अध्यास वारे राजस-तामस-सात्विक गुण जीन में मायाजन्य है और यह गुण के क्षोभ सु पीडीत हे और अलौकिक अल्प आनंद को अनुभव करवेवारे हे यह तीन लोक जाननो, जहां तहां प्राकृत गुणो को क्षोभ वहां ताई पुष्टि प्रभुन को स्थायी अनुभव नहीं होय शके ऐसे प्राकृत गुणो के क्षोभवारे दैवी जीव में प्रभु संबंधी आनंद अल्प है। और प्राकृत प्रकृति जन्य गुणों के क्षोभ की उपाधि विशेष हे। ऐसे जीव में भगवद् संबंधी आनंद को आर्विभाव-तिरोभाव रहत हे, महानुभव पद्मनाभदासजी को यह कथन जो हे सो आधुनिक सृष्टि के लिये हे ता समय चोरासी दोसो बावन के लिये यह कथन नहीं घटे हे और चोरासी दोसोबावन में हु भौतिक चरित्र दिखवे में आवे हे । परन्तु वे भौतिक चरित्र तो आधुनिक सृष्टि के शिक्षार्थ प्रभुन ने वे भक्तो के हृदय में बिराज के कियो हे । वास्तविक चोरासी दोसोबावन परम

वंदनीय निर्दोष अलौकिक हे। श्रीवल्लभ श्रीविट्ठलेशजी ईश्वर कोटी के स्वरूप हे तीन को साक्षात्कार गुणातीत अवस्था प्राप्त किये विना नहीं होय शके, ताते चोरासी दोसो बावन काल माया के गुण रहित निर्दोष हे । मूल पुरुष में श्रीद्वारकेशजी ने कह्यो हे के, 'अलौकिक सब भक्त जन जे शरण लिने आय हे ताते तीन गुणकी उपाधि वारी सृष्टि आधुनिक हे और इनके लिये ही 'आनंद अल्प उपाधि घनी' यह कथन घटे हे और श्रीवल्लभ तो परम गुणातीत हे श्रीवल्लभ स्वरूप में तो मान खंडीता कोभी उपाधि नहीं हे। मधुर प्रेमरस के महासागर हे निरवधि सुखदाता हे निरुपाधि हे अविरत आनंद दाता हे । इनकुं छोडके कोनके पास जायुं ? यह शिक्षा महानुभव कोई एक धर्मी स्वरूप निष्ठा वारे महाभाग्यवान जनकी आत्मा को प्रबोध करवे कर रहे हे, ओर हुं कहत हे,

बनजा हरीदासा हरिदासा । रे मन छोड सबन की आशा ॥
सुधा सिन्धु के निकट बसत हे । मूढ़ मरत क्यों प्यासा ॥
श्रीवल्लभ के पद कमल में । महारस की हे रासा ॥
पद कमल को आश्रय कर ले । कट जाय भव की फांसा॥
रसिक जन तुं ध्यान करले । प्रेम सुधा को प्यासा ॥

करुणात्मा भगवदीयोके यह कथन ते श्रीवल्लभ चरण सरोवर में ही निरवधि निरूपधि आनंद रह्यो हे (ताको हे मन तुं आश्रय कर) अब आगे कहत हे के आपके चरणकमल को द्रढ़ाश्रय करवे सुं श्रीवल्लभ प्रभु महारस दान करेंगे, ताते चरणगत कमल चिन्ह को भाव विचारी के चिन्तन करनो,

वज्र चोराशी कोशमें प्रभुको जीतनो लीला विहार हे ताके रस समुहात्मक यह कमल चिन्ह हे, अब आपके उभय चरण कमल केसे हे ताको स्वरूप ज्ञान करावत हे के साक्षात् प्रभु के मुखारविंद फल वियोगाग्नि रूप निरवधि रूप वारे तथा आनंद वारे अग्निबीज हे। सो परमानंद स्वरूपाग्नि हे ('परमानंद स्वरूप कहेवेते स्थायि निरवधि जामें रसानुभव हे, और अग्नि कहेवेते निरवदि रसानुभव करते छतें जाके अनुभव में अतृप्तता रहत हे') तेसेई इन बीजो के समवाय संबंधी भूमि वज्र भक्तनको हृदय जो सर्वात्मभाव रूप हे ताके संबंध कुं प्राप्त करके संयोग-विप्रयोग शृंगार रस रूप अनेक रासादिलीला रूप फलन सूं मिल्यो भयो यह अग्नि बीज हे। सो शृंगार रसात्मक कल्पद्रुम प्रभुन को स्वरूप प्रकट करत हे। तेसे और शृंगार कल्पद्रुम के दिखायवे वारे अमृत बीज अग्नि बीज कुं हुं तेसे शृंगार कल्प वृक्ष रूप मानवे योग्य हे। (जेसे बीज में सुं वृक्ष प्रकट होय हे और वृक्षनकी अंकुरित अवस्था पहेले वृक्ष बीज में अव्यक्त रूपते रह्यो हे तेसे अमृत बीज अग्नि बीज के भितर शृंगार कल्प वृक्ष की स्थिति हे, याको आश्रय ऐसो हे के, श्रीमहाप्रभुजी के युगल चरण कमल अनंत अमृत बीज अग्नि बीज के सद्नरूप हे। सो अमृत बीज में ते संयोगात्मक शृंगार कल्प वृक्ष प्रकट होय हे ओर तेसे अग्नि बीज में सुं विप्रयोगात्मक शृंगार कल्प वृक्ष अनंत प्रकट होय हे, अथवा अनंत संयोगात्मक-विप्रयोगात्मक कल्पवृक्ष के आधार रूप उभय बीज रूप आपके उभय चरण कमल हे, दक्षिण चरण कमल में संयोगात्मक अनंत अमृत

बीजोका स्थान हे सो अमृत बीज में सुं रसात्मक ब्रह्मांडरूप अनंत लीला परिकर सह अनंत शृंगार कल्पवृक्ष प्रकट होय हे, जेसे वृक्ष में अनेक शाखा-पत्र-पुष्प-फल ते विस्तार होय हे तेसे शृंगार कल्पवृक्ष प्रकट होय हे, जेसे वृक्ष में अनेक शाखा पत्र-पुष्प-फल ते विस्तार होय हे तेसे शृंगार कल्प वृक्ष अनेक कुंज निकुंज श्रीयमुनाजी, श्रीगिरिराजजी लीला सहायक पशु-पक्षी तथा अनंत भक्तो ओर फलरूप प्रभुन के स्वरूप के विस्तार वारी कल्पद्रुम अमृत बीज में सुंप्रकट होय हे, ऐसे अनंत शृंगार कल्पवृक्ष की स्थिति श्रीमहाप्रभुजी के दक्षिण चरण कमल के अमृत बीज में हे । सो दक्षिण चरण में अमृत बीज हुं अनंत हे याही प्रकार विप्रयोगात्मक अनंत शृंगार कल्पवृक्ष की स्थिति आपके वाम चरण के अग्नि बीज में हे । सो अग्नि बीज हुं अनंत हे, जेसे कमल पुष्प के भीतर अनेक पराग रहत हे, तेसे पराग स्थानीय अनंत अमृत बीज अग्नि बीज की स्थिति आपके उभय चरण कमल के उभय कमल चिन्ह में जाननो । यह आशय जतायवे के लिये उभय चरण में उभय कमल चिन्ह धारण किये हे ।

उपरोक्त कथन में काहुको अतिशयोक्ति पने की शंका न हो। ताते श्रुति वाक्य को प्रमाण अत्र दियो जाय हे के, श्रुतिओने परब्रह्म को स्वरूप लक्षण 'सत्य-ज्ञान-अनंत' कह्यो हे यह अनंत पद कुं आगे रखके परब्रह्म स्वरूप-श्रीलक्ष्मण सुवन-श्रीमहाप्रभुजी के स्वरूप को महत्व विचारनो वा बीज में अनंत रस हे। तासुं बीज हुं रसरूप हे स्वरूपात्मक हे और अनंत हे। वीनके रस स्वरूप हुं अनंत हे तीन करके अनंत आनंद रसरूप

श्रीमहाप्रभुजी के युगल चरण कमल हे ताकरी आपके सर्व अंगन में स्थित जो अनंत आनंद रस हे। तीन सुं प्रवाहित भयो थको अमृत बीज अग्नि बीज भाव कुं प्रकट करत फेरी आपके 'दुर्लभांघ्रिसरोरुहः' चरण कमल में ही प्राप्त होय हे। (उपरोक्त श्रीवल्लभ प्रभु के युगल चरण कमल को निगूढ आशय अमृत बीज अग्नि बीज के रूप में जो प्रकट कियो हे सो श्री गोकुलेशप्रभु ने श्री सर्वोत्तमजी की ब्रहद्‌टीका में 'दुर्लभांघ्रिसरोरुह' नाममें निरुपण कियो हे सोइ आशय यहां पर दियो गयो हे, परन्तु जेसो आपको 'दुर्लभांघ्रिसरोरुह' नाम हे तेसोही आपके चरणकमल को स्वरूप समजवे में दुर्लभ हे। यह युगल चरण कमल को अमृत बीज अग्नि बीज रूपते वर्णन श्रीगोकुलेशजी ने कियो हे। ताको एक-एक शब्द निगूढ तम गंभीर रहस्य ते भर्यो भयो हे यामे उग्र प्रतापी वल्लभ विरहाग्नि को आत्मानुभव रूप कथन हे, अर्थात् सर्वाज्ञात लीला विहारी को यामें वर्णन हे, ताते देहाध्यासादि प्रपंच की उपेक्षा जीनने कर दिये हे और विरहात्मक संघात कुं जो प्राप्त भये हे और सुधादान सुं भावात्मक अमूर्त सुधा स्वरूप में जो जन निष्ठावान हे वेही यह आशय की गांभीर्य ताकु समज सकेंगे । ताते कह्यो निगूढ़ हृदयो अनन्य भक्तेषु ज्ञापीताशय आपके मूल सुधा स्वरूप के हृदय को निगूढ़ आशय आप पतिवृत भावी जनमें ही प्रकाशित करे हे)

उपरोक्त निरवधि रसनसुं यह चरणकमल परिपूर्ण हे सो जतायवे के लिये चरण में कमल चिन्ह धारण कियो हे, वृन्दावन के संपूर्ण लीला रस समूहात्मक यह कमल चिन्ह

हे, वृन्दावन कहवेते वृन्दा जो संयोगात्मक विप्रयोगात्मक अनंत स्वामिनीजी के वृन्द (समूह) और वन कहवेते यौवन-तारुण्यता-प्रतिक्षणे अलौकिक तारुण्यता सौन्दर्यता जीनमें ते प्रकट होय हे ऐसे अनंत स्वामिनीजी ओसुं तीनके भावात्मक कोटि कंदर्प लावण्यनिधान रमण प्रभुको जो रमण विहार होय हे। यह सब रमण विहार के रस समूहात्मक (आलयरूप) यह कमल चिन्ह धारण कियो हे। याही कमलते लीला परिकर समस्त कुं दान हे। फेर भक्त द्वारा अनुभव कर संपूर्ण रस सुं यह कमल परिपूर्ण भयो हे ताते मर्मज्ञ शिरोमणि श्री हरिरायजीने दैन्याष्टक में प्रार्थना करी हे,

'वृन्दावने रजो युक्तं यमुनाजल पंकिलम।
कदा पदतल मूर्ध्नि श्रीमद्वल्लभ धास्यसि।।

वृन्दा जो श्रीस्वामिनीजी के समूह तिनके निरवधि रसानंदसुं परिपूर्ण आपके ललित युगल चरण कमल हे नाथ! 'मेरे मस्तक पे कब धारण करोंगे ? ऐसी प्रार्थना करत हे, यह चरण कमल की प्राप्ति बहोत दुर्लभ हे और सेवन हुं दुर्लभ हे, आप करुणा करके अपनो तापात्मक स्वरूपदान करे तब विरहानुभव की योग्यता होय तब सर्व परित्याग पूर्वक विरह रूपी महत् कष्ट सो यह चरण कमल को सेवन सुलभ होय। अन्यथा कोटि साधन ते दुर्लभ ही जाननो, यह चरण को उग्र प्रताप अतुलित अगाध महिमा अनुभव करी श्रीमत्प्रभुचरण ने 'दुराराध्य दुर्लभांधिसरोरुह' नाम प्रकट किये हे। ता करी यह चरण कमल गत महामधुर मकरंदताकी दुर्लभता जताई हे, यह कमल चिन्ह निरवधि रसन सुं परिपूर्ण हे। अथवा यह

चिन्ह स्वामिनी भावात्मक-स्वरूपात्मक हे। तासुं भगवान् जेसे मानव देह में प्रादेश मात्र स्वरूपे बिराजे हे और ऐसे होते छते व्यापक हुं हे तेसे कमल चिन्ह भावात्मक स्वामिनीजी स्वरूप को भी जाननो कारण के परब्रह्म विरुद्ध धर्माश्रय ऐश्वर्यवारे हे, यह अणुभाष्य प्रथम अध्याय के वैश्वानर अधिकरण में सिद्ध कियो हे। भगवान् वैश्वानर विभु अति सुक्ष्म हे अति सुक्ष्म होयवे सुं व्यापक अनंत ब्रह्मांडो कुं अपने में धारण करत हे ताते कह्यो।

कोटि कोटि ब्रह्मांड तन रोम ही रोम प्रति।
जगत आधार धरधीर धामी।।
और एक ब्रह्मांडे जेना यश न माया।
तेना हुआ कोटि अनंत।।

अनंत ब्रह्मांड की व्यापकता वारे होते छते साकार सौन्दर्य स्वरूपात्मक हे, आत्म तत्व ऐसो ही गहन विलक्षण हे, और आत्म वाचीक-शब्द वेदो में परब्रह्म के लिये ही कह्यो हे, सोई परब्रह्म स्वरूप श्री लक्ष्मण भट भूप कुमार श्रीवल्लभ प्रभु हे यह परब्रह्म आत्म तत्व ऐसे अति सुक्ष्म गहन और उग्र प्रतापी होयवे सु पुष्टि की मर्यादाते हुं दुर्गेय हे, अर्थात् पुष्टि की मर्यादा में बंधो भयो यह स्वरूप नहीं हे स्वतंत्र हे। और रसात्मक त्रिगुणात्मक विलास तेहुं पर हे। जब रसात्मक त्रिगुणात्मक विलास ते हुं जो पर हे। तब प्राकृत अध्यासवारे दैवि सृष्टि कुं यह स्वरूप केसे समजयो जायगो ? यह सौभाग्य तो आपकी निकुंज ते विछुरे निज अंतरंग जन को ही हे तीन के लिये ही भुवि में आपको प्राकट्य हे जिनके लिये आपको

प्राकट्य हे तीन कुं यह चरण कमल सेवनीय हे और तीन कुं ही यह चरण कमल को अतुलित महिमां स्फुटित होय हे। अब आगे कहत हे के कमल चिह्न साकार व्यापक स्वामिनी भावात्मक-स्वरूपात्मक होयवे सुं प्रसव धर्म वारो हे तासुं रसात्मक जगत लीला परिकर लीला सामग्री प्रकट करे हे जेसे भगवान् आदि नारायण की नाभी में सुं कमल प्रकट भयो ता कमल में सु ब्रह्मा प्रकट भयो और ब्रह्माने अपने में सुं १४ लोक को विश्व सर्जन कियो फेरी यह १४ लोक ब्रह्मामें ही समाविष्ट होय गये और यह ब्रह्मा १४ लोक को विराट स्वरूप होय गयो। तेसेही यह कमल चिन्ह स्वामिनी भावात्मक हु होयवे सुं रसात्मक सृष्टि सर्जक प्रसव धर्म वारे हे। फेरी वेही रसात्मक सृष्टि कमल चिन्ह भीतर समाविष्ट हे। तासुं कमल चिह्न कुं साकार रसात्मक व्यापक ब्रह्मांड रूप समजनो योग्य हे यामें श्रुति को प्रमाण वाक्य यथा भुवनात्मक कमलम् हे । भूमा भगवान् वैश्वानर की प्रत्येक रोम साकार व्यापक हे । भक्ति मार्गाब्ज मार्तंड की किरण किरण प्रति परमाणु सद्रश अनंत ब्रह्मांड विचरण करे हे, अथवा अनंत रासादि लीला की रसात्मक सम्पत्ति किरण किरण प्रति हे ताते श्रीसर्वोत्तमजी में आपको नाम उग्र प्रतापी बिराज रहे हें। जो कमल हे तामें मुख्य कमला श्री स्वामिनीजी को निवास हे और कमल में भ्रमर आपते ही प्रेम (मकरंद की सौरभ) में बंध जाय हे ताते कह्यो,

कमल बुलावन कब गये कब कीनो सन्मान।
नेह निमंत्रण के सगे अलि अधिर उलटान।।

श्रीवल्लभ प्रभु जो जन कुं स्वामिनी भाव को दान करे हे। तामें निर्गुण तत्सुखी प्रेमभावकी मकरंदता हे। यह मकरंद पान में भोंरा रूप श्रीठाकोरजी परवश होय जाय हे, और आप श्रीवल्लभ प्रभु तो अपने आनंद सुही पुष्ट हे ताते स्वानंद तुन्दिल आपको नाम हे। आपके यह स्वरूप के दुर्लभ चरण कमल की मकरंद भोग करवे वारे भ्रमर में राजा दोय श्रीमद् दामोदरदासजी और प्रभुदासजी हे। जो अधरामृत स्वाद में ही निमग्न हे। आपके चरण कमल में घनीभूत सुधा (मकरंद) की मादकता भरी हे। तहां प्रवेश करते भये ताको अनुभव करत हे। तेसेई जो कोई यह चरण कमल को आश्रय करे वे रस लोभी भ्रमर होय के ता रसकी चासक सुं परवश होय के ता चरण कमल में ही पर्यो रहेगो श्रीनाथजी के मुख कमल भक्तिरूप हे। जब श्रीवल्लभ चले हे तब आपके चरणनख के प्रकाश श्रीजी के श्रीमुख रूपी नीलमणि में पडवे ते श्रीठाकोरजी के मुखरूप भक्ति रसरूप भई, श्रीठाकोरजी ने श्रीप्यारीजी के वियोग में कमल पे श्रीप्यारीजी को स्वरूप लिख्यो हे ता रूप यह कमल हे (याको आशय विरहात्मक रस सूं पूर्ण यह कमल चिन्ह हे) सब अलिन में राजा दोय श्रीमद् दामोदरदासजी और प्रभुदासजी सो पद्मनाभदासजी ने पद में कह्यो हे, **'तहां प्रवेश द्वे भ्रमर को दामोदर प्रभुदास'** तामें मुख्य अधिकारी श्रीमद् दमलाजी हे। ताते कह्यो मुख्य अधिकारी अंतरंग दामोदर वरदास आपके अंग कृत दासो में हु वर नाम श्रेष्ठ श्रीमद् दमलाजी हे जेसे प्रभु करुणा करके मातृ चरण श्रीयशोदाजी के वात्सल्य प्रेम रूप दाम में बंधाये

व्रज भक्तन के कांत भाव के प्रेम में बंधाये तेसे अचिन्त्य अनंत शक्ति युक्त महिमां वारे उग्रप्रतापी श्रीवल्लभ प्रभु, श्रीमद् दमलाजी के निर्गुण महामधुर प्रेम में वशीभूत होय के दामोदर भये, ताते आपने श्रीमुखते कह्यो हे के, दमला और भक्त बहोत हे में तेरे वस हुं तासुं आप सदा ही श्रीमद् दमलाजी के तत्सुखी मधुर प्रेम में बंधे भये हे, श्रीमद् दमलाजी के हृदय रूप अलक्ष कुटीर में अलक्ष होय के श्री वल्लभाग्नि विहार करे हे ताते आपको नाम **सर्वाज्ञात लीलाति मोहन हे**। सो आपके दुर्लभ चरण कमल की प्राप्ति श्रीमद् दमलाजी के करुणा कटाक्ष के पक्षपात विना नहीं होय हे। जा जन में आपको पक्षपात हे वे दुर्लभ चरण कमल सुलभता सुं प्राप्त कर शके हे और श्रीमद् दमलाजी के करुणा कटाक्षके पक्षपाति-विरह की काष्टापन्न दशा (व्यथा) सुं दीन भये विरही रसिक जन हे। यह दुर्लभ चरण कमल ऐसो दिन जन कुंही प्राप्त होंयवे योग्य हे, ताते कह्यो हे के,

सहज स्नेह साधन नहीं, करुणा के नहीं जात ।
महोदार प्राणेश जुं, दीन देखी ढ़री जात ।।

विरह की दारुण व्यथा सुं दीन भये जन पे आपकी सहज ढरन होय हे। आपको करुणा धर्म ऐसे दीन जनो मे ही प्रकट करे हे, दीन जन में आप स्वतः दामोदर होयके बंध जाय हे। श्रीवल्लभ मधुराधिपति हे और मधुर रसके ही भोक्ता हे लीला परिकर तथा लीला सामग्री में जितनी माधुर्यता हे ताके दाता भोक्ता आप श्रीवल्लभ हे लीला धाम समस्त व्यापक माधुर्य प्रेम रस ते पूर्ण हे। यह मधुर लीलाधाम के

अधिपति आप हे। ताते आपको मधुराधिपति कहत है, मधुराष्टक ग्रन्थ में आपने जो वर्णन कियो है सो परोक्ष वाद सुं आपको स्वयं को बहिःरंग लीला विलास स्वरूप हे । आपके अंतरंग लीला विलास की माधुर्यता को अनुभव स्वयं स्वानन्द तुन्दिल स्वरूप सुं करत हे, सो श्रीहरिरायचरण श्रीवल्लभ पंचाक्षर स्तोत्र में कहत है -

मधुरा स्याति मधुर द्रगन्त मधुराधर ।
स्वरूप मधुराकार श्रीवल्लभ तवास्म्यहम् ।।

नखशिख प्रति मधुर प्रेमरस के साकार स्वरूप हे । आप मधुर प्रेमरस के ही भोक्ता होयवे सुं अंगीकृत जन को विरह भाव को दान करत हे यह तापात्मक भावनते दैन्यता सिद्ध होय हे और दैन्य भाव सुं माधुर्यता प्रकट होय हे अर्थात् दैन्यता माधुर्य प्रेम को मूल है जैसे मूल के आधार पर वृक्ष खड़ो रहे है । तैसे दैन्यता के मूल पे माधुर्य प्रेम के कल्पवृक्ष की स्थिति है । अर्थात् जैसे आम्रफल में सूर्य को उग्रताप अम्लता दूर करके मधुरता उत्पन्न कर देय हे-तैसे विरहताप भौतिक आध्यात्मिक और आधिदैविक त्रिविध तापोके समस्त दोषों कुं दूर करके दैन्यभाव प्रकट करहे । यह दैन्य मेरी माधुर्यता रही भई है । सो दैन्य भावी जनमेही मार्धुय प्रेमकी पात्रता सिद्ध होय है ताते कह्यो हे के,

विरह अनल याते कहत सब गुण पूरण एह ।
पकव दशा कर देत हे भर दे निरवधि नेह ।।

विरह सब गुणते पूर्ण हे और निरवधि प्रेम की पात्रता सिद्ध करवे वारो हे जब विरह की अग्नि सुं हृदय घट

दैन्यको पात्र बने हे । तब अचिन्त्य अनन्त शक्ति युक्त अनन्त रसात्मक ब्रह्मांड की जामे स्थिति हे। ऐसे उग्र प्रतापी श्रीवल्लभ विरहाग्नि के दुर्लभ चरण कमल स्थायि रूपते विराजे हे तब यह भक्त हुं मधुर प्रेम के सागर तुल्य होय जाय है, दैन्य में सर्वात्मभाव की स्थिति हे और सर्वात्मभाव वान भक्त भगवानसुं तद्रुप हे, याते भगवद् स्वरूप के संपूर्ण सामर्थ्यकुं प्राप्त होय जाय है। ताते (शा.नि.५४ में) कह्यो है के,

आनन्दां शाभि व्यक्तौ तु तत्र ब्रह्मांड कोट्यः ।
प्रती येरन् परिच्छेदो व्यापकत्वम् च तस्य तत् ॥

या प्रकार सर्वात्मभावी भक्त में कोटिशः ब्रह्मांड की स्थिति है । कारण के ब्रह्मत्वकुं प्राप्त होय गये है, अर्थात् फलात्मक दैन्य में अतृप्त भाव रह्यो हे, यह अतृप्त भावसुंज अगणीतानन्द को रसानुभाव होय है और श्रीवल्लभ निरवधि रसके भोक्ता हे और दैन्यभावीजन यह निरवधि रसके पात्र हे। ताते दैन्य भावते आपकी ढ़रन होय हे पुष्टि प्रभुन को निरवधि रसानुभव करवे को जो स्वार्थ है सो ऐसे दैन्यभावी भक्त में सिद्ध होय हे दैन्यभावकी या प्रकार निगूढ़ता होयवेसुं तामस फल प्रकरण में आप श्रीवल्लभ ने अपनी दुर्बोध निगूढ़तम वाणी ते आज्ञाकरी हे के **भक्तानाम् दैन्यम एवेकम् हरितोषण साधनम्** श्रीवल्लभ विरहाग्नि की यह दुर्बोध वाणीको निगूढ़ आशय श्रीमत्प्रभुचरण श्रीगोकुलेशजी तथा श्रीहरिराय चरणने भलि भांति सो जान्यो हे ताते विज्ञप्ति में श्रीप्रभुचरण ने दैन्य दानकी प्रार्थना करी है के,

यद् दैन्यं त्वत्कृपाहेतुर्न तदस्ति ममा एवपि ।
तां कृपां कुरु राधेश यया तद् दैन्य माप्नुयाम् ॥

हे राधेश ? आपकी प्रसन्नता को हेतु जो दैन्य हे सो मोपे अणुमात्रभी नहीं है। सो दैन्य आपकी कृपाते ही सिद्ध होयगो यह कृपा सर्व भवन् समर्था और निरोधरूप गहन वन में रहेवेवारी दुर्लभ कृष्णाधरामृता स्वाद के सिद्धि प्राप्त करायवेवारी है। महत् पुरुषों के प्रार्थना के विषय में निगूढ़तम् रहस्य को महत्व रह्यो है। और श्रीहरिराय चरण तो दैन्यता के सागर रूपे प्रसिद्ध ही हे[१] । अर्थात् ''हरितोषणं साधनम्'' को निगूढ आशय ऐसो हे के पुष्टि प्रभु अमोध वीर्य है रमणमें अतृप्त भाव वारे है ऐसे अतृप्त स्वभावी भगवान कुं भी संतुष्ट करे तैसी पात्रता दैन्य भावी जनकी है ताते हरि के संतोष में दैन्यताही साधन रूप कही, और जो फलात्मक दैन्यतामें तापात्मक भाव रह्यो है सौ तापात्मक भाव प्रभुनकुं निरवधि रसानुभाव करायवेमें कारण रूप है, दैन्यभावी जनमें कोटि गुनो रस है और प्रभुनकुं कोटि गुने रस सुं विलसावे हे। तोऊ ताकुं ऐसे ही होय हे के, मोपे कछु रस नहीं ऐसो ताप रह्यो आवत हे, रमण में ऐसे अतृप्त भाववारे दैन्यभावी भक्त हे। ताते प्रभुन के समान अतृप्त भाववारे होयवे सुं श्री हरि कुं संतुष्ट कर शके हे। ताते कह्यो हरितोषण में दीनता ही साधन हे। यहां पर एक शंका होय हे श्री आचार्यचरण ने यहां हरि पद धर्यो हे तो हरि पद को अर्थ तो हरण करनो होय हे। सो भक्त में जो निरविध रस हे ताको हरण (भोग) जब हरि

---

[१] श्रीहरिराय चरण ने दैन्यकुं ''स्वमार्ग सर्वस्वम्'' कह्यो है ।

कर लेय हे तबतो वे भक्त में रस रहत नहीं होयगो ? यह शंका दूर करणार्थ कहत हे, के जेसे महासागर के एक तट पे ठाडो मनुष्य दूसरो तट देख नहीं शके हे, ऐसे विशाल दोनो तटके बिच में महासागर के जलको प्रवाह रात्रि दीन चल्योही करे हे तोऊ महासागर के जलकी एक बिन्दु भी घटत नाही और नयो नयो प्रवाह नये नये तरंग उठत ही रहत हे तेसे सर्वात्मभावी भक्त भगवद् रस के महासागर तुल्य हे याते निरवधि रस को भोग हरि करते छते तामें ते रस घटत नहीं, परन्तु जेसे जेसे यह रस को भोग तागवान करत जाय हे तेसे तेसे सागर के प्रवाही की नांई नूतन रस को प्रवाह प्रकट हो तो जाय हे। आत्मतत्व ऐसोही गहन हे इनकुं समजवे में श्रुतिवाक्य ही प्रमाण हे ऐसे आत्म तत्व को अनुभव करके श्रुतिओने जो विषय प्रतिपादन कियो हे यासे ही अलौकिक तत्व जान्यो जाय। यामें भौतिक युक्ति अप्रयोजीका हे सर्वात्मभावी भक्त में जो अतृप्त भाव हे यह अतृप्त भाव को सूचक एक पद निम्न प्रकार को हे,

श्रीवल्लभ वर को मारग बांको ॥
तामें चले रसिक विरही जन बिचमें कठिन प्रेम को नाको॥१॥
क्षण-क्षण प्राणाकोर देत हे तोऊ नही संतोष ही याको ॥
रसिकदास श्रीवल्लभवर हे फल रूप विरह जन जाको ॥२॥

या प्रकार श्रीवल्लभ विरहाग्नि के अंगीकृत जन में तापात्मक स्वरूप को दान भयो हे, और श्री हरिरायचरणने श्रीवल्लभ पंचाक्षर स्तोत्र में कह्यो हे के, दीनता मात्र संतुष्ट-दीनता मार्ग बोधक, दीनता पूर्ण हृदय। श्रीवल्लभ उपरोक्त

तापात्मभरी दैन्यताते प्रसन्न होय हे। ऐसी ही दैन्यताको उपदेश करवे वारे हे, और स्वयं ऐसी अतृप्त भाववारी मधुर दैन्यताते पूर्ण हृदय वारे हे। जब आपको हृदय भी ऐसे दैन्यभाव से पूर्ण हे। तब भक्त जन कुं तो यह दैन्य परम आवस्यक होय तामें कहा कहेनो ? ताते दैन्यभाव कु ही सिद्ध करनो-और प्राप्त दैन्यभाव को रक्षण करनो या प्रकार दैन्यभाव पुष्टिमार्ग में महान् सिद्धि रूप हे और निस्साधन को धन हे जा दैन्यभाव की सिद्धि में निरवधि रसानुभव होय हे और भगवान् आधिन होय के रहत हे ऐसो ताको महिमा हे। ताते श्रीहरिराय चरणने दैन्य कुं 'स्वमार्ग सर्वस्वम' कह्यो हे। प्रभुन की प्रतिकूल इच्छा कुं फीरायवेवारो साधन दैन्य हे सो श्रीहरिराय चरण करुणा करिके ३३ में शिक्षापत्र में आधुनिक सृष्टि को दिखायो हे। यह दैन्य सर्वात्मभाव रूप हे और सर्वात्मभाव में भगवान तुल्य अलौकिक सामर्थ्य प्राप्त होय हे, अर्थात् कर्तु-अकर्तुम-अन्यथाकर्तुम सर्वभवन समर्थ ऐसी सिद्धि हुं प्राप्त होय जाय हे ऐसो फलात्मक दैन्यभाव को महत्व हे। यह दैन्यता को फलात्मक आधिदैविक स्वरूप हे, दैन्यता भी त्रिविधा हे, भौतिक-आध्यात्मिक-आधिदैविक तामें भौतिक दैन्यता-दैविजीव की प्राकृतावस्था में काल माया के धर्म को प्रतिबंध भगवद् प्राप्ति में होय हे। ताते दैविजीव में अपनो दोष स्फुरे सो हीनता युक्त भौतिक दीनता को स्वरूप हे जाको निरुपण श्रीहरिराय चरणने (शी.२८.१०.११में) कियो हे, और आध्यात्मिक दीनता ब्रह्मभाव रूप हे। तामे सर्वत्र निर्दोष दृष्टि रहे, सर्वत्र प्रभुन की लीला भावना रहे सो आध्यात्मिक

दीनता को स्वरूप हे। जाको निरूपण श्री आचार्यचरणने (शा-नि-१०१में) कियो हे, और आधिदैविक दैन्यता द्विधा हे। एक साधन रूप जामे भगवद् वियोग जनीत दुःख हे। दूसरे फलरूप दैन्य को वर्णन पिछे कियो हे तेसो जाननो, या प्रकार दैन्यता भी त्रिविधा हे यामें प्रभुन कुं प्रसन्न करवे वारी जो दीनता हे सो तो साधन दशा में सर्व परित्याग पूर्वक तापात्मक भावन सुं विरहानुभव सुं ही प्राप्त होय हे। यहां पर दीनता को पुनःपुनः कथन कियो हे सो दैन्यता के महान् सूत्र के दृढ़ी करणार्थ हे ऐसे हेतु को विद्वद्वर्ग स्वीकृत करेगो।

कमल चिन्ह को धोल

वामचरण मां हे कंज चिन्ह शोभीता रे लोल,
ऐनी छबी जोई भगत मन लोभीता रे लोल।।
ब्रह्मा प्रभु नाभि कमल मांथी अवतर्या रे लोल,
सृष्टि उत्पन्न थई सहु लोक विस्तर्या रे लोल।।
तेम श्री महाप्रभुजी चरणमां कमल धर्या रे लोल,
तेथी पुष्टि सृष्टि करी सहु भय हर्या रे लोल।।
वाम चरणमां हे चिन्ह जो बिराजता रे लोल,
सहु परमानंद मय रूपे राज तारे लोल।।
रसो वैसः आनंद परमानंद स्वरूप छे रे लोल,
महाप्रभु स्वयं तेना बेऊ स्वरूप छे रे लोल।।
दक्षिण चरणमां आनंद लीला जानीये रे लोल,
वाम चरणमां हे परमानंद मानीये रे लोल।।
वाम चरणमा हे जेजे चिन्हधर्या रे लोल,
तेसौ परमानन्द रूप रस थी भर्या रे लोल ।।
एवा कमलना स्वरूप वर्णन कर्या रे लोल,
ज्ञान ध्यान करी जीवना ते अघ हर्या रे लोल।।
आनंद रूपे श्याम सुन्दर शोभता रे लोल,
प्यारी परमानन्द रूप थकी लोभीता रे लोल ।।
तेथी बेऊरूप थकी आप राजता रे लोल,
वल्लभ कृपानिधि रसमय बिराजता रे लोल।।
संयोग रस तेथी दक्षिण अंगमां रे लोल,
वाम अंग विप्रयोग धर्या संगमा रे लोल।।

श्रृंगार रसना ए बेउ दल कह्या रे लोल,
बेऊ मली शृंगार रस पूरण थया रे लोल॥
श्रृंगार रस तु तो रूप रंग श्याम छे रे लोल,
हरि अंग जेम श्रीमहाप्रभुजी अभिराम छे रे लोल ॥
जेम अर्धनिशा प्रकट्या वाला श्रीहीर रे लोल,
तेम पुष्टि सृष्टि करी वाले ऐ सही रे लोल॥
ग्यारस पवित्रा मधरात दरस दीधा रे लोल,
सहु भक्त जन दैविना कारज सर्या रे लोल॥
चरण मुकी गिरिराजने शीतल कर्या रे लोल,
तेम पुष्टि भक्तना भय सर्वे हर्या रे लोल॥
जीव ए चरण कमल सुमरन करे रे लोल,
ताप त्रिविध हरे ने मनोरथ पूरण करे रे लोल॥

... यहां कमल चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

कुंभ

वाम चरण में सप्तम चिन्ह कुंभ को हे ताको भाव कहत हे,

यह पियुष कुंभ हे, यहाँ सरसता की सिद्धि हे, नीरस कुं यह कुंभगत पियूष पान दुर्लभ हे, इनके ध्यान कर्ता कुं अमंगल की संभावना नहीं, यह आपके चरण कमल को और चिह्नगत भावको आप स्वयं कृपा करे दान करे तब कुंभगत पियुष प्राप्त होय, नके मनोरथ वार्ता सुं ? तासुं जिनके अर्थ आप भूतल में प्रगट भये हे। ऐसे विरही रसिक दैवी जीव के विना अन्य के लिये कुंभगत पियुष दुर्लभ जाननो। कारणके स्वतः सिद्ध भयो पियुष यह कुंभ में हे। ताते लीलामध्यपाति और लीलान्तःपाति जन विना अन्य जीवन को आपके चरण कमल की निकटताको भी सम्भव नहीं। तो पियुष पान केसे होय ?

निजजन कुं तो वचनामृत ते पूरित करत हे। ताकरी सुधादान करत हे (वाकपति की वाणी वेणुमें रही भई सुधा को स्वरूप हे) आप वचनामृत करत बीरीया। जो सूचना करत हे सो निजजन गोपन करत हे जाकुं अधरामृत को पान कराव नोहे ताकु ही आपकी निगुढ तम वाणी को अर्थ स्फुरे अन्य सुने तोऊ अर्थ की प्राप्ति न कर शके । (ब्रह्मा-शंकर-इन्द्र कुंभी वेणुनाद सुनके मुर्छीत अवस्था भई और वेणुनाद के तत्व कुं जान नहीं शके तो और जीव की कहा चले?)

सो जाकुं आपकी वाणी को अधरामृत आपकी कृपाते प्राप्त भयो हे। सोई यह पियुष कुंभ आगे आयवे समर्थ होय हे, अथवा आपकी कृपाते ही आपके चरण कमल को आश्रय स्फुरे ऐसे आश्रीत जन कुं ही यह कुंभगत स्वतः सिद्ध पियुष प्राप्त होय । और कुं यह रस सक्य नही (याते श्रुति कहत हे, ‘‘नायात्मा प्रवर्चेन लभ्य’’) सो आपने श्री भागवत को मंथन कियो तामें ते जो पियुष नीकस्यो हे सो पियुष को स्वतः सिद्ध स्वरूप यह कुंभगत पियुष हे। (जेसें आपने रासस्त्री भाव पूरित विग्रह वारे स्वतः सिद्ध स्वरूप सुं रासस्त्री ओनकुं महारास भावते पूर्ण किये तेसे यह कुंभगत पियुष स्वतः सिद्ध हे) श्रीभागवत कहेवे सुं श्रीस्वामिनीजी और भागवत ठाकोरजी यह युगल प्रिया-प्रियतम रूपी रसात्मक रससमुद्र को मंथन कर पियुष नीकास्यो हे। ताको परिचय करायेवारो स्वतः सिद्ध पियूष यह कुंभ में हे। वहां मोहिनीने देवतान कुं पीवायो ऐसे यहां वारंवार आपके दासोन कुं आपने मधुर वचनामृत द्वारा पिवायो वहां मोहिनीने असुरन को मोह किये तेसे यहां प्राकृतानुकृति व्याज से असुरन को मोहित किये वस्तुतः आपको भूतल प्राकट्य लीला अन्तःपाति निजअंतरंग स्वकीय जन के लिये हे और जो दैवी सृष्टि के शरण में आवत हे, ताकुं यथा अधिकार आनंद को दान करे वहां ही स्थित करत हे। जेसे पद्मारावजी द्वारका लीला के अधिकारी होयवे सुं द्वारका लीला में ही स्थित किये तेसे सर्वत्र जाननो, ताते आपके निज अंतरंग स्वकीय आपके स्वरूपानुभव करके यशोगान करत हे ।

श्रीवल्लभाधीश के रूप रस सिन्धु में,
बहोत से सिन्धु पे स्वाद न्यारे न्यारे।।
जात नहि वहां लो बिन पूरण कृपा,
बिच में भर लिये पात्र सारे।।१।।
स्वाद हे जीन हे याद सोइ पहोंचे वहालो,
बिचके समुद्र नहीं लगत प्यारे।।
रामदास पान कर आन सुद्ध रहत नाही,
सहज उतर गये भव सिन्धु खारे।।२।।

आपकी पूर्ण कृपा जा पर हे ऐसे लीला अन्तःपाति विरही रसिक जन ही आपके चरण मूल में पहोंच शके हे। सर्वाज्ञात श्रीवल्लभ को मूल स्वरूप वैश्वानर पुरुषाकार सुधा स्वरूप हे। यह स्वरूप सुं आप धर्मी विप्रयोगात्मक मूल विलास को स्वानंद तुन्दिल अवस्था में निरवधि रूपते अनुभव करे हे यह स्वरूप की बहार विहार की इच्छा भई तब पूर्व दलरूप संयोगात्मक लीला गौलोक धामकी रचना करते भये। यह गौलोक धामकी संयोगात्मक लीला में अनंत स्वामिनीजी प्रकट भये सो प्रत्येक स्वामिनीजी लीलारस के सागर रूप हे और प्रत्येक की कुंज न्यारी न्यारी हे और प्रत्येक स्वामिनीजी में न्यारी न्यारी रसात्मक लीला है, परन्तु जात नहीं वही लो बिना पूरण कृपा श्रीवल्लभ विरहानल के चरण कमल के मूल तक तो वे ही पहोंच सकत हे के जो जन वल्लभ विरहाग्नि की कुंज में सु वीछुर्यो हे और आपके स्वरूप माधुरी के स्वाद को जीन कुं पूर्व में अनुभव हे वेही जन वहां लो आपके मूल सुधा स्वरूप के चरण मूल में पहोंच जाय

हे। तीन कुं करुणासागर श्रीवल्लभ संयोग दली लीला सागरो में अटकवे नहीं देय हे। जब महावन की क्षत्राणीजी कुं आपने शरणे लिये पाछे आपने आज्ञाकरी श्री ठाकोरजी पधरायके सेवा करो तब महावन की क्षत्राणीजी ने विनंती करी के राज में तो आपकी हुं मोकुं प्रमाण में काहे कुं डारो हो ? (यहां पर क्षत्राणीजी ने जो विनंती करी के राज मोकुं प्रमाण में काहे को डारो हो ? याको आशय ऐसो दिखे हे के परम तत्व स्वरूप श्री वल्लभ विरहाग्नि के मूल सुधा स्वरूप की प्राप्ति, पुष्टि मर्यादा ते हुं दुर्गेय हे। यहां पर **पृथक शरणमार्गोप देष्टा** नाम को अनुसंधान करनो ? या प्रकार जो जन श्रीवल्लभ विरहाग्नि की निकुंज ते विछुर्यो हे वेही जन आपके दुर्लभ चरण कमल सेवन करवे भाग्यवान होय हे। इनकुं अन्य लीला में वरण के स्वभाव सुं ही रुचि नहीं रहे हे। इनकुं संयोग लीलारस के बिच के समुद्र प्यारे नहि लगत हे। श्रीवल्लभ सहज सुन्दर त्रैलोक्य की अनंत स्वामिनीओकी और तीन के भावात्मक कृष्ण की सौन्दर्यताकुं धारण करवे वारे हे, ऐसे सहज सुन्दर के स्वरूप माधुरी को पान भव मात्र करवे ते इन कुं अन्य लीला रस सागर की सुद्धि हुं नाहीं रहत हे। सहज उतर गये भव सिन्धु खारे पूर्वदली संयोग लीला में संयोगानुभव पश्चाद् वियोग को अनुभव होय हे यह वियोग में आधिदैविक दुःख हे। जब वल्लभ विरहानल अपने अंगीकृत जनको निरवधि निरुपधि आनंद को दान करके संयोग दल के वियोग रूप आधिदैविक दुःखते हुं निवृत कर देय हे और अपने स्वयं के स्वरूपानंद दान ते अखंड रसानुभव करावत हे) ऐसे आप स्वकीय जन में पक्षपाती हे अब कहत हे के पुष्टि सृष्टि के चार प्रकार के वरण हे। पुष्टि प्रवाह-पुष्टि मर्यादा-पुष्टि पुष्टि-और शुद्ध पुष्टि तामें शुद्ध पुष्टि जन ही श्रीवल्लभ के अंतरंग स्वकीय हे तिनकुंही आपके दुर्लभ चरण कमल की प्राप्ति हे, ओर कुं यथा अधिकार आनंद दान करके वहां ही स्थित करत हे।

वर्तमान पुष्टि सृष्टि में तो पुष्टि प्रवाह की बाहुल्यता हे। पुष्टि मर्यादा और पुष्टि पुष्टि क्वचित हे और सुद्ध पुष्टि के लिये तो स्वयं श्रीवल्लभ आज्ञा करे हे के, 'सुद्धा प्रेमणाति दुर्लभा।' ताते सुद्ध पुष्टि जन भूतल में अति दुर्लभ जानना, पुष्टि प्रवाह में हुं केवल प्रवाही आसुरी सृष्टि तथा मोक्ष के अधिकारी मर्यादा सृष्टि वर्तमाने मिली भई हे। पुष्टिमार्ग की उदारतामें अपनो भौतिक स्वार्थ सिद्ध करवे के लिए केवल प्रवाही आसुरी सृष्टि पुष्टिमार्ग में मिल गये हे। ताते श्रीहरिराय चरण ने दुःसंग विज्ञान ग्रंथ में वंचकोसे सावधान रहेवे को उपदेश कियोहे, और पुष्टि प्रवाह में भी आसुर भाव के आवेशवारी सृष्टि हे। सेवा स्मरणादिक भगवद्धर्मन को आचरण करत छते आसुर भावोंको आवेश रही आवे हे, ताकुं यथा अधिकार फल की प्राप्ति होय हे मुख्य फल तो अलौकिक सामर्थ्य रूप हे के जामें भक्तानंद स्वरूप कोटि कंदर्प लावण्य निधान को अनुभव हे सो तारे सुद्ध पुष्टि जन कुं ही प्राप्त होय हे और सुद्ध पुष्टि जन विरहानुभव की अवस्थावारे हे ताते आपके दुर्लभ चरण कमल सुद्ध पुष्टि जन ही प्राप्त कर शके हे। पूर्वमें कह्यो हे के कुंभगत पियुष पान

आपने पने अंतरंग स्वकीय जन कुं ही करायो और असुरन को प्राकृतानु कृति थी मोह करते भये सो कहा ? श्रीवल्लभ गुणातीत हे और परम चतुर सुख सागर हे। आपसे मानादिक भाव को रंचक हुं संभव नहि श्रीवल्लभ निकुंज में खंडिता मान आदि संयोग दल के भाव की गंध मात्र हुं नहीं हे। महामृदुल आपको स्वरूप हे, मान के रंच दुःख में आप मुरझा जाय हे, तासु भूतल में गुणातीत भाव जो भक्तनको सिद्ध भयो हे वेही जन मूलधाम श्रीवल्लभ निकुंज में प्रवेश करवे योग्य हे। ताते भूतल में निज अंगीकृत जन को आप विरह को दान करी गुणातीत दैन्य भाव सिद्ध करे हे। जा गुणातीत दैन्य भाव में माधुर्यता और प्रियतम के सुख की ही भावना प्रधान रुपते रहे हे। ऐसे गुणातीत भाववारे जन ही श्रीवल्लभ वर के वरने योग्य हे, आप तत्सुख के सागर है, स्वामिनी स्वरूपे केवल प्रियतम कोही सुख विचारे हे। तासु मानादिक असुर भाव वारेनकुं आप मोह करे हे। मान भाववारे भक्तनकुं आपके मूल स्वरूप के चरण कमल को सेवन दुर्लभ हे। ताते व्यसन अवस्था में स्थित वज्र सीमंतिनीजीओने मथुरा पधारे प्रभुन में मान भाव सुं दोषारोपण कियो हे। वहां श्रीवल्लभ अपने तत्सुखी स्वरूपते तत्सुखी स्वरूप को ज्ञान करायवे के लिये वज्र भक्तनके मान भाव कुं दोष रूप कहे हे। जोके वज्र भक्तोमें यह मान भाव रस को एक धर्म हे ओर मान भाव सुंभी प्रभुन के स्वरूप में तदात्म कहे तोऊ सर्वोत्कर्ष अधिकार मान भाव रहित केवल प्रियतम को सुख विचारवे में हे ऐसे तत्सुखी प्रेमीओ के उत्कर्ष अधिकार को

ज्ञान करायवे के लिये मान भाव कुं आपने दोषरूप कह्यो हे, विरहानुभव में दैन्यता प्रकट होय हे यह दैन्यता सुं माधुर्यता प्रकट होय हे और प्रियतम प्रभु की प्रसन्नता ऐसी माधुर्यता भरी दैन्यता ते होय हे।

ओर हुं कहत हे के, जब गोवर्धन यागसु उन्मत भये सुरपति इन्द्र ने को नाश करे तेसी वर्षा करी तासु विफल भये व्रजस्थ भक्तोने प्रभुन कुं अपने रक्षण की प्रार्थना करी, वहां श्रीवल्लभ भक्तो के प्रति टोंक करत हे के, भक्तो स्नेह को मारग त्याग करते भये। **भक्ति मार्गम त्यक्तवन्तः अन्यथा भगवद् रक्षार्थम एव यत्नं कुर्युः नतु स्वरक्षार्थम् भगवन्तम प्रार्थयेयुः** (सु.१०.२२.११) कारण के प्रिय तो सात वरस को बालक हे ताके रक्षण को प्रयत्न व्रजभक्तोन कुं करनो हतो सो प्रिय स्वरूप को रक्षण त्याग कर अपने रक्षण की प्रार्थना करी हे ताते स्नेह मार्ग को त्याग भयो, यद्यपि यह रक्षण की प्रार्थना करी सो आगे प्रभुन की सेवा के अर्थ हे कारण के देह की स्थिति विना सर्वात्मभाव सिद्ध नहीं होंय और सर्वात्मभाव बिना साक्षात् रमण प्रभु की सेवा के योग्य अधिष्ठान नहीं होय। ता हेतु ते रक्षण की प्रार्थना करी हे तदपि श्रीवल्लभ जो टोंक करे हे सोतो तत्सुखी प्रेम को ज्ञान करायवे के लिये हे और टोंक को आशय एक और हुं हे के, वर्तमान संकट समये हुं प्रियतम सुं काहु प्रकार की प्रार्थना नहीं करनी, प्रार्थना में महात्म्य भाव को अंश हे ओर जहां जितनो महात्म्य को अंश हे तीतने अंश में सुद्ध स्नेह में न्यूनता है। महात्म्य में स्वार्थ को अंश मील्यो हे

और सुद्ध स्नेह में केवल तत्सुखता हे। या आशयते आप श्रीवल्लभ ने अपने निर्गुण स्वकीय जन कुं प्रार्थना नहीं करवे को विवेक धैर्याश्रय में बोध कियो हे। गुणातीत तत्सुखी प्रेमी जनकी अपने प्रियतम के लिये केसी न्योछावरी हे सो एक पद में महानुभावो ने कह्यो हे,

तारे क्यों न तजे नेन नेन क्यों न तजे शिश,
शिश क्यों न ढरी जाओ अब या तनते।।
तन क्यों न जरी जाओ जरी क्यों न छार व्हे हे,
छार क्यों न उडी जाओ विरह पवनते।।१।।
सेनी यह मीलनी नंदलाल गोपालजुकी,
गोधनके लिये लिये आवत बने बनते।।
कहेनी होय सो कहो रस रीत पे रहोंरी अलि,
माधो जुकी प्रिति जीन जारो मेरे मनते।।२।।

या पदानुसार तत्सुखी प्रेमी भक्त अपने प्रियतम के लिये सर्वस्व न्योछावरी कर देय हे। भूतल में श्री वल्लभ ने सेवा मार्ग प्रकट कियो हे। तामें सेव्य स्वरूप में बालभाव की प्राधान्यता राखी हे। ताको कारण बालक से कोई याचना नहीं करी जाय हे बालभाव सुं सेव्य स्वरूप को ही सुख विचार्यो जाय हे तासु उत्कर्ष अधिकार सर्वात्मभाव अथवा गुणातीत भाव सिद्ध होय हे। प्रेष्ठ भाव संयुक्त बालभाव में प्रियतम प्रभु को ही सुख विचार्यो जाय हे श्रीवल्लभ की अदेय दान की जो चातुर्यता हे। ताको एक कारण बालभाव संयुक्त प्रेष्ठ भाव को अनुभव करावनो हे। भगवान् भजन करवे वारेन कुं चतुर्विध मुक्ति दे देय हे। परन्तु अपनो प्रेम

दान नहीं करे हे। कारण के प्रेम को दान करवे ते प्रेमी जन में भगवान् कुं वसीभूत होने परे हे। दिव्य प्रेम को यह सहज स्वभाव हे के जीनके प्रति यह प्रेम प्रकट भयो इनके प्रति अपनी आत्मा को समर्पित कर देय हे। याते गोपीजन कहत हे के “मेरो मन अरु वा ढोटा को एक मेक कर छान्यो,” अरस परस (उभय) प्रेमी पात्रों की आत्म समर्पण होय जाय हे। ताते भगवान् भजन करवे वारेन कुं भक्ति नहीं देत हे। ऐसो भगवत्संबंधी दिव्य प्रेम दुर्लभ हे, सो महाकारुणिक स्वामिने सुलभ कर दियो हे जेसो गृहस्थी के घर में बालक को जनम होय हे यह बालक में माता पिता को प्रेम सहज प्रकट होय हे सो प्रेम करीवो सीखनो नहीं पड़े हे, नैसर्गिक (सहज) प्रेम बालक प्रत्ये माता-पिता को प्रकट होय हे, सो लोक में अनुभव सिद्ध हे। तेसे सेव्य स्वरूप में बालभाव संयुक्त सेवन करवे सुं सहज अनुराग प्रकट होय हे और प्रभुन की बाल लीला चरित्र श्रवण सुं श्री प्रभु में प्रेम प्रकट होय हे। श्रीगुसांईजी किशोर स्वरूप श्रीगोवर्धनधर को बालभाव सहित सेवन करते महाकारुणिक श्रीवल्लभ को निगूढ आशय तो आप श्रीगुसांईजी ने ही जान्यो हे ताते विष्णुदास छीपा ने श्रीगोकुलेशजी प्रति कह्यो हे के सेवातो पिता पुत्र ही कर जाने हे, ओर बालभाव सहित सेवन करवे में निर्गुण तत्सुखी प्रेम भाव सिद्ध होय हे। यह गुणातीत भावकी प्राप्ति अति दुर्लभ हे। सो अदेय दान में चतुर श्रीवल्लभ ने पुष्टि सृष्टि के लिये बालभाव के सेवन में सुलभ कर दिये हे। ऐसी निजजन के हित की अदेय दान सिद्ध करायवेवारी कोटिसा

प्रकार की चातुर्यता महोदार चरित्र वान में रही भई हे। जहां तांई हृदय सुद्ध नहीं भयो हे वहां तांई महाकारुणिक श्रीवल्लभ प्रकटित अद्भुत सेवामार्ग को ज्ञान नहीं होय शके हे, अर्थात् अद्भुत सेवामार्ग को ज्ञान श्रीसुबोधनीजी आदि आपकी वाणी (वचनामृत) के पान सुं होय हे गुणातीत भाव के लक्षण को एक पद नीचे लिख्यो जाय हे,

कृपा एक लालन ही की चाहिये,
अपनो दोष विचार ही सजनी इनसो कछुन कहीये॥१॥
वे जो करे सोई सब आछी अपने शिखर पर सहीये,
सूर श्याम सो कछु न कहीये ज्यों राखे त्यों रहीये॥२॥

यह पद में बालभाव की मुख्यता हे और प्रेष्ठ भाव बालभाव के अन्तरगत हे, और गुणांतीत भाव वारे गोपीजन को यह पद हे। सो अपने यूथ की सखीन को गुणातीत भाव सीखावत हे। तामें अपनो ही दोष विचारवे को कहत हे। प्रियतम को काहु प्रकार को उरहानो नहि देत हे, जेसे यह गुणातीत गोपीजन अपने यूथ की सखीन कुं गुणातीत भाव सीखाय के उत्कर्ष अधिकार सिद्ध करायवे को प्रयत्न कर रहे हे। तेसे आधुनिक पुष्टि भक्ति कौं श्रीवल्लभ के आडीसे गुणातीत भाववारे भक्तन को संग महद्भाग्य ते प्राप्त होय जान तो तिन को उत्कर्ष अधिकार सिद्ध कराय देय हे। उत्कर्ष अधिकार गुणातीत भावकी प्राप्ति में ही जाननो, गुणातीत भक्त की येही रीती हे के, जीवन प्रियतम हे और प्रियतम के वियोग की दुःख दाई एक एक पल जब युग समान जाय हे तोऊ प्रियतम कोही सुख विचारे हे अन्य

नायिका में प्रियतम की आसक्ति हे तो वे नायिकाको दुतीत्य करे हे और अनन्य नायिका सु प्रियतम कुं सुख हे तामें आप अपनो सुख माने हे। कारण के गुणातीत भक्त सर्वात्मभाव के अधिकारी हे ताते सर्वात्मभाव में जो प्रियतम को सुख हे ऐही सुख गुणातीत भक्त अपनो माने हे कारण के सर्वात्म भावी भक्त की आत्माज प्रभु हे। ताते प्रभु को जो सुख सोइ सुख यह भक्त को हे प्रिय के सुख में सुखी ओर दुःख में दुःखी यह गुणातीत भक्त को लक्षण हे और श्री वल्लभवरके घरकी रीत हुं गुणातीत हे जेसे सात घरकी रीत पृथक पृथक हे तेसे सर्वाज्ञात वल्लभ घरकी रीत यह साते घरसु भिन्न हे जबतो यह पलंगड़ी वारेन कुं भोग पोढे पोढे (शैयामें ही) धर्यो जाय हे और गुणातीत भावों को श्रृंगार जीन भक्तोने धारण कियो हे सोई श्रीवल्लभवर कुं रीझाय शके हे और सोइ जन वल्लभवर कुं वरवे योग्य हे। यह गुणातीत धर्म सुनवे सुं और सुन के दूसरे को उपदेश करवे सुं नहीं प्राप्त होय हे, परन्तु सबको परित्याग करके विरह की तापाग्नि सुं हृदय जब द्रवीभूत होय हे तब गुणातीत भाव हृदय में सुं प्रकट होय हे। ताते गुणातीत भाव समज के ताकी प्राप्ति के लिये विरहानुभव में स्थित होनो आवश्यक हे हृदय में सु प्रकट भयो सोई स्थायी रहे हे और गुणातीत भाव आत्मारूपी समुद्रमें रहत हे और विरह के अनुभव सुं अपने देह प्राण इन्द्रिय अन्तःकरणादि संघात सहित आत्मारूपी समुद्रमें जो गोता (डुबकी) लगावत हे वेही जन कुं यह गुणातीत भाव स्थायी रूप सुं प्राप्त होय हे, अथवा श्रीवल्लभ को जो

स्वरूप हे सोई आत्मा गुणातीत मधुर प्रेम को सागर हे ताते स्वरूप में जो तन्मय होनो सोई आत्मा-रूपी समुद्रमें गोता लगावनो कह्यो जाय हे और वियोग की काष्टापन्न दशामें स्थित गुणातीत भक्त अपने प्रियतम प्रभु के ज्ञान सक्ति को प्रार्थना करत हेके, हे सुभगे तुं मेरो दुःख प्रियतम के आगे मति कहीयो, प्रियतम हृदय अत्यंत मृदुल हे मेरो दुःख सुनके आप दुःखी होयगे। ताको दुःख मोकुं असहय हे यह गुणातीत भक्त को लक्षण हे।

तामस फल प्रकरण में गोपीगीत के ४थे श्लोक में गुणातीत भाव वारे गोपीजन प्रभुन से प्रार्थना करत हे के हे प्रिय आप अखिल देही के आत्मा और सखा हो हमारे हृदय में आप बिराजे हो तासु हमारी सब गति कुं आप जानत हो। ताते मोकुं तो आपते कछु उरहानो देनो नहीं हे। मेरे में आपके मीलवे की तापाग्नि होयगी। तो आप स्वतः प्रकट होउंगे यह गोपीजन गुणातीत होयवे सुं अपनो जो कर्तव्य हे सौइ विचारत हे प्रभुन सुं अपने सुख की कोई प्रार्थना नहीं करत हे यह गोपीजन भगवद् स्वरूप के पूर्ण ज्ञान वारी हे और भगवद् स्वरूप के ज्ञान सहित भगवान् की भक्ति करवे वारे भक्त कुं शास्त्रार्थ निबंध में श्री आचार्य चरणने उत्तम कोटि के अधिकारी कहे हे। यहां पर भगवद् स्वरूप को ज्ञान वेद प्रसिद्ध पुरुषोत्तम को अपेक्षित नहीं। परन्तु रसोवैसः श्रुति कथनानुसार वेदातीत पूर्ण पुरुषोत्तम को ज्ञान अभिष्ट हे, ज्ञानी भक्त कुं उत्तम क्यों कहे ? सो भागवत(११.१९.२,३) में भगवान् उद्धवजी प्रति कहत हे के ज्ञानी पुरुष कुं अभिष्ट

पदार्थ में ही हुं मेरे अतिरिक्त ओर काहु पदार्थ में प्रेम नहि करत हे। ज्ञान विज्ञान सुं सम्पन्न पुरुष मेरे वास्तविक स्वरूप कुं जानते हे। याते ज्ञानी पुरुष मोकु सबसे प्रिय हे और ज्ञानी पुरुष अपने ज्ञान द्वारा निरंतर मेरे स्वरूप को परम पद सहित धारण करत हे, ओर ज्ञानी भक्त की उत्तमता याते हे के, श्रीभगवद् स्वरूप को ज्ञान होयवे सुं वे भक्त को उद्धार करवेमें प्रभुन को श्रम नहीं करनो पड़े हे और दूसरो हेतु ‘‘परम ज्ञात्वा पाने महारसः’’ पुष्टि प्रभु निरवधि आनंद स्वरूप हे यह ज्ञान सहित भगवद् स्वरूप को जो भक्त अपने में धारण करत हे। ऐसे भक्त में भगवान् को निरवधि विलास करवे को (रसानुभव करवे को) स्वार्थ सिद्ध होय हे। ताते अंतर सुं भगवान् को जामें स्वार्थ सिद्ध होय सोई भक्त उत्तमोत्तम कोटि के हे, ऐसे भक्त दुर्लभ हें। ताते येही गोपीजन के लिये (सु.१०.२९.८ में) काश्चिद पदते विरलता कही हे। ताते भगवद् स्वरूप के ज्ञान सहित भक्ति करवेवारेनकी उत्कर्षता हे। ऐसे भक्त गुणातीत हे इनकी येही रीति हे के महत दुःख में भी प्रियतम को ही सुख विचार्यो जाय। जब प्रभुन कोही सुख विचार्यो जाय हे तब यह भक्त को हृदय तत्सुखी (मधुर) भावों के खजाना रूप होय जाय हे कारण के भगवान् ने गीताजी में कह्यो हे के,

यथामाम प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यहम।
मम वर्त्मानु वर्तन्ते मनुष्यापार्थ सर्वशः।।

जा भाव सु भक्त भगवान् को भजन करत हे। ता भाव सुं भक्त को भजन भगवान् करत हे यह रहस्य कुं जो बुद्धिमान

जानलेत हे वे उत्कर्ष अधिकार क्यों नहीं चाहेंगे ? भगवान् को भजन ये ही हे के भक्त को जेसो भाव हे ता भाव की वृद्धि करनी ताको पोषण रक्षण करनो। ताते तत्सुखी भक्तन के हृदय में बिराज के तत्सुखी भाव की वृद्धि करत हे, गीताजी में प्रतिज्ञा करवेवारे भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम हे ओर मर्यादा भक्तन के भावानुसार मर्यादा पुरुषोत्तम को जो भजन हे सोतो प्रवाहीक भजन हे पुष्टि पुरुषोत्तम अपने निजजन को प्रवाहिक भजन नहीं करे हे, मर्यादा भजन को जेसो मनोरथ हे, सो मनोरथ मर्यादा पुरुषोत्तम सिद्ध कर देय हे याते विशेष कछु नहीं देवे हे और साक्षीरूप होयके मर्यादा पुरुषोत्तम अपने भक्तनको भजन इनके भावानुसार करत हे। तेसे पुष्टि भक्त के लिये नहीं हे, पुष्टि दैवीजीव लीलाधामते जब ते विछुरे हे तबते अपने आधिदैविक स्वरूप को ज्ञान, अपने स्वामी पुष्टि प्रभुन के स्वरूप को ज्ञान तथा लीला धाम को ज्ञान भुल गयो हे। पुष्टि प्रभुको निरवधि अनिर्वचनीय आनंद हे ताको भुतल में आयके विस्मरण होय गयो हे। तासु पुष्टि भक्त आपको भजन करके अपनी बुद्धि के अनुसार मनोरथ करत हे सो पुष्टि प्रभु सिद्ध न करे हे। अथवा पुष्टि भक्त की अल्प सुख की जो कामना (मनोरथ) हे और यह कामना ते जा भावसु भजन करत हे ऐसे भावानुसार पुष्टि प्रभु अपने जन को भजन नहीं करत हे। दैवी जीवकुं अपने आत्म स्वरूप को विस्मरण हे ऐसे जन अपने मनमें जो मनोरथ करत हे सोतो चेंटी की क्षुधा की तृप्ति जेसो हे। यह अल्प सुख को मनोरथ करुणात्मा प्रभु सिद्ध नहीं करे हे ओर

लीलाधामते विछुरे दैवी जीव को चतुर्विध मुक्ति नहीं देत हे महारास में पधारे गोपीजनों कुं लघुरास पश्चाद् मान मद भयो तब प्रभु अंतर्हित भये। पश्चाद अन्वेषण किये तोऊ प्रभु प्रकट नहीं भये पश्चाद तापात्मक स्वरूपात्मक गुणगान गोपीगीत गाये। यह तापात्मक विरहभावानसुं गोपीजनोंकी जीवसत्ता और शास्त्रोक्त साधनों को हुं निरास भयो, अर्थात् जीवसत्ता और शास्त्रोक्त साधन को बल नहीं रह्यो। तब गोपीजनों में सदानंद की आत्म सत्ता ने प्रवेश कियो यह आत्मसत्ता वान संघान सुं ही अपरिछन्न सत्तावारे सदानंद को अनुभव होय शके कहवेको तात्पर्य यह हे के, पुष्टि दैवीजीव अपनी बुद्धि के बलपे शास्त्रोक्त साधनो से स्वरूपानंद जो निरवधि हे ताको अनुभव नहीं कर शके हे, ताते दैवीजीव के बुद्धि के अनुसार मनोरथ सिद्ध नहीं करे परन्तु मनोरथान्त फलदान करे हे ऐसे श्रीवल्लभ स्वकियेन प्रति महाकारुणिक हे ।[१]

शास्त्रोक्त साधनो निरवधि रसानंद भरे महासागर के तट पर पहोंचायवे वारे हे। परन्तु महासागर स्वरूप सदानंद को अनुभव सदानंद की आत्मासंघात वारे सत्तासुं ही होय शके। अंतरंग सृष्टि में आप निरवधि रसानंद के दान करवे की इच्छावारे होयवे सु दैवीजीव अपनी बुद्धि के बल से जो सुधानुभव के मनोरथ करत हे सो चेटी की क्षुधातृप्ति जेसे होयवेते पुष्टि प्रभु अपने अंतरंग जन को इनकी इच्छानुसार भजन नहीं करत हे। ताते श्रीवल्लभ प्रभु की जापर पूर्ण कृपा हे इनकुं ही आपके दुर्लभ चरणकमल सेवन के लिये गुणातीत

---

१. आ विषय को प्रमाण (सु. १०.२९.२) टिप्पणीजी में देखनो।

भाव विरहानुभवसुं सिद्ध करावत हे।

श्रीयमुनाजी रसात्मक दैन्य युक्त गुणातीत स्वरूप हे ओर पटराणी हे। तोऊ आपको मृदुल मधुर स्वभाव होयवे सुं लीला धामस्थ श्री स्वामिनीजीओ को दासत्व करे हे। श्रीयमुनाजी सर्वात्मभाववान होयवेसुं सदासंयोगी हे धर्मी संयोग को अखंड आपकुं अनुभव हे। ताते सदा प्रियतम प्रभुसुं वेष्टित हे। कृष्ण आपको नाम हे सब लीला परिकरन कुं सुखद ओर प्रिय हे स्पर्धा रहित होयवेसुं स्वामिनीजीओ को प्रभुनसुं मिलाप कराय सुख उपजावत हे प्रभुन सो अपनो सुख नहीं चाहे हे। ऐसो गुणातीत माधुर्य भाव श्री यमुनाजी में होयवेसुं प्रभु श्रीयमुनाजीकुं वसीभुत होय के रहे हे। श्रीयमुनाजी सर्वात्मभाववान होयवे सुं संयोग लीला परिकर समस्त में द्रवीभुत सुधा स्वरूपे व्याप्त-व्यापक हे। व्यापक होयवे के कारण भगवान् जेसो ऐश्वर्य आपकुं प्राप्त हे। तासुं सब लीला परिकर में व्याप्त होय के द्रवीभूत प्रेम सब लीला परिकर में प्रकट करीके प्रभुनसुं संयोगानुभव करावत हे यह समस्त लीला परिकर के सुख को अनुभव श्रीयमुनाजी सब में व्यापक रूप सुं करे हे सब में आत्मा और आत्मा में सब हे यह सर्वात्मभावको स्वरूप हे।

ताते कह्यो रास रससागर श्रीयमुनेजु जानी ।
बहत धारा तन प्रति छीन नौतन। राखत अपने उर्माजुं ठानी।।

सर्वात्मभाववान को सबलीला परिकर को भोग प्राप्त होय जाय हे। सर्वात्मभाव को स्वरूप ऐसो ही विलक्षण हे, जेसे श्रीयमुनाजी कुं समस्त लीला परिकर को सुख प्राप्त हे।

तेसेइ गुणातीत सर्वात्मभाव की स्थायी अवस्था वारे श्रीवल्लभ जन को हुं यह सुख प्राप्त होय जाय हे एक कालावच्छिन्न समस्त लीला को अनुभव सर्वात्मभावी भक्त कुं सिद्ध हे ताते गुणातीत भावको ऐसो महिमा विचारी के ताकी प्राप्ति के लिये दैन्यभाव संयुक्त श्रीवल्लभ चरणकमल को अनन्य आश्रय करनो, कोटि में विरल महानुभव पद्मनाभदासजी ने गुणातीत भाव को परम पुरुषारथ रूप कह्यो हे, और श्रीवल्लभ गुणातीत हे इनको अनन्य होय के जे जन भजन स्मरणादि करे हे। तामें गुणातीत भाव प्रकट होय हे। कारण के उपास्य के गुण उपासक में प्रवेश करे हे अर्थात् स्वामी के गुणी सेवक में प्रवेश करे हे। अब आगे कहत हे के, सर्वात्मभाव जीन में नहीं हे। ऐसे जन यह कुंभ गत (स्वतः सिद्ध) पियुष पान के अधिकारी हे। याते यह पियुष पान की प्रार्थना हुं नहीं कर शके हे। ताको कारण गुणातीत तत्सुखी प्रेमभाव इनमें नहीं हे। जेसो अधिकार तेसोई स्फुरण प्रभु हृदय में बिराज के करत हे, “एकोहं बहुस्याम” ने बहुविध क्रीड़ा करनी हे। तासुं सबको एक सो अधिकार नहीं राख्यो हे तदृपि महाकारुणिक निजजन के पक्ष पाति होयवेसुं आप अपने स्वतंत्र प्रमेय बल ते महानपुरुषार्थ रूप गुणातीत भाव सिद्ध करावत हे। आपकी महाकारुणिकता महोदार चरित्रता को विस्तार-स्वयं को जो गुणातीत अदेय स्वरूप हे, ताको दान करने में कहत हे। सो यह पियुष पान आपने अपने अंतरंग स्वकीय पद्मनाभदासादिकन कुं ही वारंवार करायो हे और यही कुंभ पियुष के समुद्र रूप हे रासस्त्री भाव के रससु

भरीत हे ताते श्रीहरिराय चरण कहत हे श्रीवल्लभ महासिन्धु समान 'श्रीभागवत पियुष समूद्र मंथन क्षमः' या नाम में श्री कहवेसुं स्वामिनीजी और भागवत कहवे सुं ठाकोरजी। सो प्रिया-प्रियतम के विहार मंथन को जो सारभाव पियुष नीकस्यो हे सोई पियुष यह कुंभ में हे। ऐसे युगल को एक वचन हे, परन्तु ऐसोनही हे के एक ही युगल के विहार मंथन सारभाव सुं पूरित विग्रह आपको होयगो अर्थात् पियुष कुंभ हु एक ही युगल के विहार रस सुं पूर्ण होयगो। कारण के भगवद् शास्त्र में भगवद् स्वरूप तथा भगवान् की लीला को जो वर्णन कियो हे। सो तो एकही स्वरूप को वर्णन हे। सो एक स्वरूप को वर्णन करके अनंत रूप ते प्रभु अनंत लीला करे हे ताकु जतायवेके लिये ताको ज्ञान करायवेके लिये एक स्वरूप को वर्णन हे परन्तु प्रभु अनंत रूप हे और अनंत रूप ते लीला करवेवारे हे। ताते तामस प्रमेय प्रकरण के अन्तिम श्लोक में श्री आचार्य चरण ने आज्ञा करी हे के, यह तो एक ही लीला को वर्णन कियो हे ऐसी तो कोटिशः लीला हे। कारण के भग धर्म वारे भगवान् अनंत रूप हे और अनंत प्रकार की लीला करवे वारे हे। महारास समये जीतने गोपीजन हते तीतने स्वरूप धारण करके विहार करते भये और श्रुति ओने हुं परब्रह्म को स्वरूप लक्षण कह्यो के परब्रह्म सत्य-ज्ञान-अनंत हे यह अनंत पद के विचार सुं अनंत युगल के रमण विहार मथन के सारभुत सुधा सुं श्रीवल्लभ विग्रह पूरित हे। तेसे कुंभगत पियुष को जाननो अथवा रास कहवे सुं अनंत स्वामिनीजी सुं तीन के भावात्मक अनंत कृष्ण सुं

रमण विहार होय हे। सो विहार मंथन में सुं नीकसी भई सारभूत-घनीभूत सुधा ताके अनंत समुद्र सुं (स्वतः सिद्ध) पूरित विग्रह श्री वल्लभ प्रभु हे। ताको परिचय श्री मत्प्रभु चरण रासस्त्री भाव पूरित विग्रहः नाम सुं करावत हे तेसो ही अनुभव आपके अंतरंग स्वकीय जन को हे। सो आपको यशोगान करत हे के,

श्रीवल्लभ रोम रोम रस झलके ।
भरे समुद्र अनेकन रस के कृपा लहेर उर हल के ॥१॥
जो जो अधिकारी या रस के भरत संभार न छलके।
रामदास श्रीवल्लभ मुख माधुरी चाखन को जीय ललके॥२॥

या पदानुसार अनंत सुधा सागरोसे पूरित विग्रह आपको हे श्रुतिओंने परब्रह्म को जो अनंत पनो निर्द्देश कियो हे ताके अनुसार ही पुष्टि प्रभुन को अनंत पनो और अगणितानंद पनो विचारणिय हे, पुष्टि प्रभुन के समस्त लीला चरित्र में याही प्रकार अनंत पनो हे या कथनते आप श्रीवल्लभ के चरण कमल गत पियुष कुंभ हुं अनंत हे कमल चिन्ह हुं अनंत हे। ऐसे परब्रह्म संबंधी समस्त पदार्थ को अनंत पनो विचारनो ऐसे अनंत सुधा सागरो को अनुभव श्रीवल्लभ प्रभु अपनी स्वानंद तुन्दिलः अवस्था में अखंड करत हे जो पुष्टि के शिखर स्थानरूप परम निरोधरूप रसात्मक विहारोकी अवधिरूप सर्वोत्कर्ष परात्पर फलानुभवरूप हे धर्मी विप्रयोग में केवल स्वरूप को अनुभव हे सर्वाज्ञात लीलातिमोहन केवल स्वरूप को ज्ञापक नाम हे। आपके मूल स्वरूप की लीला सर्वाज्ञात हे। सर्वाज्ञात कहेवे सुं आधिदैविक जगत में हुं सर्व

सु अज्ञात आप जो स्वानंद तुन्दिल अवस्था में स्वयं के भीतर अनंत सुधा सागर को जो अनुभव करत हे, ताकुं परोक्ष पाद सुं (सु.३.८.१० में) आप जतावत हे के (१) केवल स्वरूप को आनंद ही पूर्ण आनंद हे, (२) ओर अखंड सुख को अनुभव हुं एक सुही होय हे। **'विरहानुभवेकार्थ सर्वत्यागो पदेशकः'** तथा रहःप्रिय नामो की संगती करनी, और **'एकोहं बहु श्याम'** यह श्रुति को कथन तो 'सर्वाज्ञात स्वरूप' की बाहर विहार करवे की इच्छा भई। तब द्विधा श्रृंगार रसात्मक विलासरूप गौलोक धाम प्रकट कियो तामें अनंत स्वामिनीजीओसुं बहिःलीला को अनुभव करे हे तद्पि आप को सर्वाज्ञात लीला विहार मूल स्वरूप सुं आप अखंड करत हे यद्यपि ऐसे नहीं होय तो आपके मूल स्वरूप के विहार में अनित्यता सिद्ध होय और श्रीमत्प्रभुचरणने सर्वाज्ञात नाम प्रकट कियो हे। सो नित्य लीला केही नाम हे ताते सर्वाज्ञात नामवारी हुं लीला नित्य हे। तामें भी विरोध होय तासुं सर्वाज्ञात की लीला स्वानंद तुन्दिल अवस्था में जो अनंत सुधा सागरो के आवर्तन रूप होय रही हे। ताको अनुभव आप केवल स्वरूप सुं अखंड कर रहे हे। आपकी यह लीला अति मोह उपजावेवारी हे। अति दुर्गेय हे सर्वाज्ञात की लीला में जाको अंगीकार हे। ऐसे लीला अन्तः पाति स्वकीय विना सर्वाज्ञात की लीला गम्य नहीं, अर्थात सर्वाज्ञात स्वरूप ही सत्ता जो भक्त में व्याप्त हे। इनकुही सर्वाज्ञात स्वरूप को ज्ञान हे और ऐसे भक्त दुर्लभ हे और द्विधा श्रृंगारात्मक बहिःलीला तो सर्वाज्ञात स्वरूप के एक रोम की

सम्पत्ति हे ऐसो परिचय करायवे वारी हे।

लीला अन्तःपति निज अंतरंग जनकुं येही दान करवे भूतल प्रादुर्भूत भये। भूतल प्राकट्य को असाधारण प्रयोजन हुं येही दिखे हे। आपके अंतरंग जन पतिवृत भावी हे तासुं जो अनुभव स्वामी को हे सो संपूर्ण सुखानुभव पतिवृता कुं प्राप्त हे। पति जेसो हे वृत जीन को सो पतिवृता। जेसे उग्रप्रतापी श्री वल्लभ अचिन्त्य शक्ति युक्त ऐश्वर्य वारे हे तेसे ही ऐश्वर्य कुं आपके पतिवृत भावी जन अपने में धारण कर लेत हे पतिवृत भाव ऐसो महान हे जाको निरूपण श्री गोकुलेश प्रभुन ने पतिवृतापति नाम में कियो हे। दुर्लभ कु सुलभ करवे को सामर्थ्य पतिव्रत भाव में किम बहुना अचिन्त्य अनंत शक्ति युक्त महिमा वारे ऐसे प्रभु को ऐश्वर्य रहित करके अपने आधिन कर लेत हे। ताते श्री मुखते आज्ञा करत हे के दमला और भक्त बहोत हे में तेरे वस हुं जो जाकु वस हे वे पराधिन हे ऐश्वर्य रहित हे अतिमोहन आपको स्वरूप हे सर्वाज्ञात आपकी लीला हे रते पतिवृता भावी जनकुं सुलभ पतिवृतभावी प्राप्ति भूतल में बहोत दुर्लभ हे। काष्टापन्न हे ताते कह्यो-सुद्धा प्रेमणाति दुर्लभा। यह कुंभ गत पियूष को दान आप सानिध्य मात्र ते करत हे। अथवा

स्वामिन श्रीवल्लभाग्रे क्षणमपि भवतः सन्निधाने कृपातः।
प्राण प्रेश्ठ वज्राधीश्वर वदन दिद्रक्षार्ति तापो जनेषुः॥

या प्रकार तापार्ति को दान करके कुंभगत पियूष दान करत हे अथवा सानिध्यता में रहेवे सुं अधर सुधा अनुभव को विप्रयोग कबहुन ही होय ऐसो सानिध्य वाक्य को अर्थ

है सदा सानिध्य रहे ताकुं ही यह पियूष को दान होय, यह पियूष केवल दैन्यभावी भक्तन कुं ही सुलभ हे। याको आशय यह भयो के अर्हनिश विरहानुभव में ताप भावन पूर्व जो जन भींज्यो रहे ताकु निरवधि रस को धारण करवे वारी फलात्मक दैन्यता सिद्ध होय ताकुं ही यह कुंभगत पियूष सुलभ हे ओर ऐसे परित्याग पूर्वक विरहानुभव स्थित स्वकीय जन के आप अनेक अपराध सहन करत हे दास अपराध जान सिन्धु रस बुंद न ए को जान, तथा **कोटि कोटि अपराध क्षमाकर सदा नेह निभवे। भूल जीन करो कोऊ मन शंका करुणा सिन्धु कहे**।। ऐसे आप महाकारुणिक अपराध सहन करवे में हे और महोदार चरित्रवान अदेय दान में हे। (जे श्रृंगार रस को स्थायी भाव रति हे तेसे सर्वात्मभाव की विरह को स्थायी भाव हे। सर्व परित्याग पूर्वक विरहानुभव में ही सर्वात्मभाव सिद्ध होय हे। विरही रसिक भक्तन की साधन दशा में एक प्रियतम प्रभु अतिरिक्त अन्य समस्त तत्वों के उल्लंघन रूप अनेक अपराध होय हे ता अपराध कुं आप सहन करे हे और सर्वात्मभाव सिद्ध कराय के अदेय जो अपनो स्वयं को स्वरूप ताकुं श्री वल्लभ प्रभु दान करते हे परन्तु यह अदेय स्वरूपानुभव सर्व परित्याग पूर्वक सतत सानिध्यता सुं ही होय हे, और जो सानिध्यता में आप श्रीकृष्ण प्रेम को दान करत हे सो सानिध्यता द्विधा हे। एक साधन रूप, दूसरी फलरूप ।

प्राकृत अध्यास जीन के निवृत नहीं भये ताकुं सो साधनरूप अथवा फलरूप दोऊन में एक हु सानिध्यता को अनुभव नहीं हे, कारण के साधन रूपे सानिध्यता कोहुं अनुभव

जगत प्रपंच तथा देहादिक प्राकृत प्रपंच की विस्मृति सुं होय हे। श्रीवल्लभ तो 'प्राकृत धर्माना श्रयम् अप्राकृत निखिल धर्म रूपे' हे, आप प्राकृत धर्म रहित होयवे सुं आपकी साधन रूप सानिध्यता हुं प्राकृत धर्म की निवृत्ति सुं होय हे, अब साधनरूप सानिध्यता ओर फलरूप सानिध्यता को स्वरूप कहत हे के, साधनरूप सानिध्यता में जगत प्रपंच तथा देहादिक अध्यास प्रपंच निवृति होय जाय हे तब प्रभुन के भावात्मक स्वरूप को लीला सह हृदय में प्रादुर्भाव होय हे। जेसे वेणुनाद सुं श्री गोपीजनों में भावात्मक सुधा स्वरूप को प्रवेश भयो, यह भावात्मक स्वरूप को अनुभव साक्षात् सदृश नहीं हे, (यहां पर साक्षात् को अर्थ बहार प्रकट स्वरूप समान यह भावात्मक स्वरूप को अनुभव नहीं हे ऐसे समजनो) परन्तु अनेक विध रसात्मक लीलात्मक भावो प्रकट होय हे और भावात्मक मानसीन स्वरूप को अनुभव होय हे, ता लीला और स्वरूप को भावात्मक अनुभव हे यह अनुभव सर्वात्मभाव की प्रारंभिक अवस्था रूप हे सर्व में आत्मभाव तद्पि वर्तमान साक्षात् स्वरूप को वियोग ऐसो साधनात्मक सर्वात्मभाव यह अवस्था में होय हे। आगे भाव की प्राचुर्यताते यह भक्त को व्यसन अवस्था में प्रवेश होय हे। तब सर्वात्मभाव सिद्ध होय जाय हे । तब फलरूप सानिध्यता के जामें नित्य लीलास्थ कोटि कंदर्प लावण्य निधान माधुर्य स्वरूप को साक्षात् अनुभव हे, सोई फलात्मक सानिध्यता हे जेसे गोपीजन नाद को श्रवण कर महारास में पधारे वहां साक्षात् स्वरूप को अनुभव कियो, यह फलानुभव क्रम प्राप्त

को निरूपण भयो और क्रम की अपेक्षा रहित (अर्थात् रस शास्त्र की प्रणाली रहित) एक कालावच्छिन्न अंकुरते फल पर्यंत निरवधि रसानुभव नित्यलीला मध्यपाति भाव सुं करायवे को सामर्थ्य श्रीवल्लभ विरहाग्नि में अनुरक्त सिद्ध हे। जाको निरूपण श्री गोकुलेश प्रभुने श्री सर्वोत्तमजी की बृहद टीका में महोदार चरित्रवान नाम में कियो हे। यह अतुल्यातिशयित दान हे, श्रीमत्प्रभुचरण ने सानीध्यमात्र दतः श्रीकृष्ण प्रेमा यह नाम कह्यो पश्चाद् **विमुक्तिदः** नाम कह्यो ताते सर्वात्मभाव की सिद्ध अवस्था में श्री कहेते मुख्य स्वामिनीजी भावको दान और कृष्णभाव को दान यह उभय स्वरूप संबंधी प्रेम को पूर्णपणेदान करवे सुं फलात्मक सानिध्यता वारे भक्तन को लीलाधाम में प्रवेश होय हे ताही आशय जतायवे वारो नाम विमुक्तिदः हे।

आगे अदेय स्वरूप को नित्यलीला धाम में अखंड अनुभव करे हे और यह फलात्मक सानिध्यता को नित्य लीला धाम में स्वरूपानुभव भी द्विधा हे एक धर्मी संयोगात्मक, दूसरो धर्मी विप्रयोगात्मक धर्मी संयोग में एक कालावच्छिन्न समस्त लीला सुख को अनुभव हे और धर्मी विप्रयोग में लीला अतिरिक्त केवल स्वरूप को अनुभव हे। श्रीगोकुलेश प्रभुने महोदार चरित्र नाम में जो अतुल्यातिशयित दान को वर्णन कियो हे सो धर्मी विप्रयोगात्मक स्वरूप के अनुभव करवे वारे भक्तन के लिये कियो हे, या कथन को निगूढ़ आशय वेणुगीत के बर्हापीडं पंचम श्लोक में प्राप्त होयगो) या प्रकार कुंभ चिन्ह को भाव विचारी के आप

युगल चरण कमल को चिन्तवन करनो यह कुंभ चिन्ह केवल (स्वतः सिद्ध) पियूष (प्रेम) सुही भर्यो पूर्ण हे। ताते याको कार्य आधिदैविक मात्र है (श्रीवल्लभ प्रभु की राजधानी यह प्रेम की ही राजधानी हे। वहाँ प्रभु प्रेम के सदावृत सदैव बटते रहत हे, परन्तु आपके चरण कमल के मूल तक जो जन पहोंचते हे ताकुही प्राप्त होय हे। ताते कह्यो श्रीवल्लभ शरण थकी सौ पडे सहेलु और पुष्टि के जहाज रूप महानुभाव सूरदासजी ने कह्यो हे के,

भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो।
श्रीवल्लभ नखचन्द्र छटा बीन सब जग माँझ अंधेरो॥

सारस्वत कल्प की अवतार लीला के जहां साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम को प्राकट्य भयो हतो तहां हुं श्रीवल्लभ नखचन्द्र छटा की उजयारी में ही व्रजरत्नान कुं भागवद् प्राप्ति भई, ताते श्रीवल्लभ के अनन्य उपासक मर्मज्ञ शिरोमणि श्री हरिरायचरणने अनेक साहित्य के स्थान पर श्रीवल्लभ चरण कमल के आश्रय को अति आग्रह कियो हे। ताते आधुनिक भक्तोन कुं आपके युगल चरण कमल को आश्रय ही भगवद् प्राप्ति में एक मात्र साधन हे, ताते हे मन सब गोबर के गोगला में सुं निकस जा ओर हां अनिर्वचनीय पद्म पराग हे ऐसे श्रीवल्लभ चरण कमल को मधुर मकरंद पान भोंरा बनके रहे ।

कुंभ चिन्ह को धोल

वाले कुंभना ते चिन्ह चरणे धर्यारे लोल,
सहु भक्तना ते मनोरथ पूरण कर्यारे लोल।।
कुंभ मांहे सहु पुष्टिरस स्थापीया रे लोल,
जेवा पात्र जोया तेवा रस आपिया रे लोल।।
नवरस व्रज भक्तनी क्रीड़ा मांहे शोभता रे लोल,
ऐमना अधरामृत सहुं कुंभ माहे धर्यारे लोल।।
नाम श्रीभागवत पियूष विट्ठले धर्युरे लोल,
वळी कह्या छे महोदार चरित्रवान छे रे लोल।।
पुष्टि भक्ति रस आपीया वाले जीव ने रे लोल,
दैवीजीव जे पोते शरणे लीधा रे लोल।।
शरण गही जे चरण कमल सेवीया रे लोल,
दान नवधा भक्तितणा वाले तेने दिधारे लोल।।
निज भक्त जे श्रीवल्लभ प्रभुना कह्या रे लोल,
भक्ति प्रेम लक्षणाने प्राप्त तेतो थया रे लोल।।
तेथी कुंभ माहे महारस रोपीयारे लोल,
निज भक्त पोताना जाणी सोंपीयारे लोल।।
जेने द्रढ करी कुंभ आश्रय कर्यो रे लोल,
तेना पुष्ट रस मय सर्वे अंग थया रे लोल।।
ऐतन मार्गी जे भक्त सहु कह्या रे लोल,
ते भक्त ऊपर कृपा श्रीवल्लभे करी रे लोल।।

... यहां कुंभ चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

यव

वाम चरण में अष्टम चिन्ह यव को हे ताको भाव कहत हे,

यह चिन्ह को स्वरूप व्रज भक्तन के मार्ग सद्रश हे, कारण के पुष्टि मार्ग सर्व मार्ग को आधिदैविक स्वरूप हे। (आधिदैविक कहेवे सुं सबकी आत्मरूप, पुष्टिमार्ग केवल प्रेम मार्ग हे, ताते कह्यो रति पथ प्रकट करण को प्रकटे करुणानिधि श्रीवल्लभ भूतल और प्रेम ही आत्मा को स्वरूप हे ताते आत्मा विना कोऊ प्राण धारण नहीं कर शके हे तासु पुष्टि मार्ग कुं सब मार्ग को आधिदैविक स्वरूप कह्यो, और पुष्टि मार्गके अधिश्वर ही विधविध क्रिड़ा करवे के लिये सबकी आत्मा रूपते अनंत रूपे क्रिड़ा करे हे, एकोहं बहु श्याम, आप पहेले एक हते सो बहुरूपे क्रिड़ा करवे की इच्छा भई तब त्रिविध प्रकार के जगत रचते भये। तामें यह विचार विवेक कर्त्तव्य हे के पुष्टि सृष्टि तो आधिदैविक जगत रूप हे, दूसरी मर्यादा सृष्टि आध्यात्मिक जगत रूप हे, और तीसरी प्रवाही सृष्टि आधिभौतिक जगत रूप हे, तीन्यो सृष्टि में पूर्ण ब्रह्म त्रिविध स्वरूप सुं क्रिड़ा करे हे, पुष्टि सृष्टि में मूल आधिदैविक स्वरूप ते क्रिड़ा करे हे। यह सृष्टि में जड जीव अन्तरयामी को भेद नहीं सब भगवद् रूप हे

आत्मा रूप हे मर्यादा सृष्टि में आध्यात्मिक चिद स्वरूप ते क्रिड़ा हे, ओर प्रवाही सृष्टि में सद् आधिभौतिक स्वरूप सुं क्रिड़ा हे तीन्यो सृष्टि को फल भिन्न-भिन्न हे। पुष्टि सृष्टि को निरवधि आनंद पुष्टि प्रभुन के साक्षात् स्वरूप सु मिले हे यह सृष्टि को साक्षात् स्वरूपानुभव ही फल हे। मर्यादा सृष्टि चतुर्विध मुक्ति के अधिकारी हे और ताको आनंद गिनती को हे, और प्रवाही सृष्टि अल्प आनंद वारी हे और जन्म मरण धर्म वारी हे। तीनकु निस्काम कर्म सुं स्वर्ग को फल मिले, परन्तु स्वर्ग में हु विषयानंदको अल्प सुख हे और पुन्य को नाश भये पाछे मृत्यु लोक में पटकनो पडे हे। ताते स्वर्ग को सुख हु भौतिक (नाशवंत) हे और ब्रह्मालोक पर्यंत के देवताओन को सुख भौतिक ही होयवेसुं सब नाशवंत हे, और मृत्यु लोक में जो चक्रवर्ती राजा को सुख हे सो नरक के सुखकी तुलना में हे, नरक को अर्थ, नर-जो मनुष्य, क-नाम सुख मनुष्य को सुख ताकुं नरक को सुख कह्यो हे ताते भौतिक जगत में मृत्यु धर्म वारे चक्रवर्ती राजा सार्वभोम को सुख हुं नरक के सुख में गिन्यो हे, यह प्रसंग श्रीमद् भागवत में ध्रुवजी ने कह्यो हे ध्रुवजी को तपस्या करत प्रभुने दर्शन दिये और अचल पद को वरदान देके राज्य करवे की आज्ञा करी आपकी माता के वचन बाणते व्यथीत भये ध्रुवने भगवद् आज्ञाते सार्वभौम पृथ्वी को राज सुख भोगे परन्तु प्रभु दर्शन पश्चाद् ध्रुवजी को पश्चाताप भयो हे, के मेने प्रभु के साक्षात् दर्शन पाये ता समे आपकी सेवा नहीं मांगी और नर्क जेसो राज को सुख तथा अचल पदवी मांगी सो मेरी बुद्धि दैवी

माया ते हरी गई हे या प्रसंगते चक्रवर्ती राजा को जो मनुष्य आनंद हे, सोऊ नरकके सुख की तुलना में हे तीन्यो सृष्टि में स्वरूप भेदते परब्रह्म को ही क्रीडन हे। परन्तु पुष्टि सृष्टि कुं जो आनंद प्राप्त होय हे सो मर्यादा प्रवाही सृष्टि कुं नहीं हे। ताते पुष्टि मार्ग सर्वमार्ग को आधिदैविक सर्वोत्कर्ष कह्यो) और पुष्टिमार्ग को परिवसान श्रीमहाप्रभुजी के चरण कमल में पहोंचनो हे। ताते पुष्टिमार्ग पृथक हे।

त्रितियात्मक स्वरूप श्रीवल्लभने अपनो अतिशयित कीर्तिमानपनो प्रसिद्ध करवे तांई यवको चिन्ह चरण कमल में धारण कियो हे (**शंका** - अन्य संप्रदायते पुष्टि मार्ग को अर्थात् अन्य सम्प्रदाय के आचार्यो ते श्रीवल्लभाचार्य को अतिशचित कीर्तिमान पनो कहा हे, युगल स्वरूप की सेवा और तीनकी अलौकिक लीलाओ को तो अन्य आचार्य ने हुं वर्णन कियो हे। तो श्रीवल्लभाचार्यजी प्रकटीत पुष्टिमार्ग की और स्वयं श्रीवल्लभाचार्यजी की कहा विशेषता हे ?)

समाधान- निबंध में श्रीवल्लभने आज्ञा करी हे भक्ति मार्गीय साधको कुं ब्रह्म समान स्थिति प्राप्त करनी येही परम कोटि को पुरुषार्थ हे, यहां ब्रह्म समान स्थिति को अर्थ सारुप्य मुक्ति अपेक्षित नहीं, परन्तु भगवान् जेसे अपने ऐश्वर्यादि धर्म सुं कोटि ब्रह्मांड प्रकट करे हे ओर ताके साथ क्रीडा करे हे तेसे अलौकिक सामर्थ्य कुं प्राप्त करनो ताकु ब्रह्म स्थिति जाननो, अन्य सम्प्रदाय के आचार्यों ते श्रीवल्लभाचार्यजी की येही विशेषता हे के अदेय दान में चतुर महोदार हे चरित्र जीनको ऐसे आचार्य शिरोमणि श्रीवल्लभ की महाकारुणिक

तासुं शरणस्थ जीव सर्वात्मभाव प्राप्त कर के ब्रह्म समान सामर्थ्य कुं प्राप्त होय जाय हे। जो सर्वात्मभाव के महिमाते अन्य आचार्यों अज्ञात हे, ताको विचार हुं नहीं कर शके हे ज्ञानावतार भगवान् वेद व्यासजी के तत्व सूत्र पर भाष्य तो अन्य आचार्यों ने हुं कियो हे परन्तु सर्वात्मभाव को यथार्थ स्वरूप वे आचार्यों की प्रज्ञा में स्फुटित नहीं भयो हे ताते अन्य सम्प्रदाय और अन्य सम्प्रदाय के आचार्यों ते आपकी विलक्षणता हे आप श्रीवल्लभ तो स्वयं वाक्पति है और अन्य समप्रदाय के आचार्यों में जो विद्या शक्ति हे सो हुं आपकी दीनी भई हे, ताते श्रीवल्लभाचार्यजी की साद्रशता अन्य आचार्यों में नहीं। **शंका** - वाक्पति बिरद तो अन्य में हुं सुनवे में आवत हे तो श्रीवल्लभाचार्यजी के वाक्पतित्व में कहा विशेषता हे ? **समाधान** - जेसे सार्वभौम चक्रवर्तीराजा हे ताको हुं राजा कह्यो जाय ओर खंड पति को हुं राजा कह्यो जाय हे, अथवा सागर में जो जल हे ताको हुं जल कह्यो जाय हे, ओर सरिता सरोवर कुप घरक की मथनी अरु लोटी में जो जल हे ताको हुं जल कह्यो जाय हे। तेसे श्रीवल्लभाचार्यजी को वाक्पतित्व चक्रवर्ती राजा जेसो तथा सागर जेसो हे, और अन्य को वाक्पतित्व खंडपति जेसो तथा सरिता-सरोवर-कुप-मथनी और लोटी में रहे भये जल जेसो हे, खंडपति चक्रवर्ती राजा के आधिन हे और जल के अन्य पात्र सागर के अपेक्षित हे, जल के अन्य पात्रों में जो जल हे सोतो सागर को दियो भयो हे तेसे अन्य में जो वाक्पतित्व को बिरद सुनवे में आवत हे सो तो कथन मात्र हे। और अन्य सम्प्रदाय के आचार्यों ते श्रीवल्लभाचार्यजी की विशेषता इतनी ही होयगी ऐसो हुं नहीं जाननो, परन्तु श्रीवल्लभाचार्यजी के कृपा कटाक्ष के पक्षपाति जन कुं पुष्टि प्रभु के जो अचिन्त्य अनंत शक्ति युक्त महिमा वारे हे वेहुं रुणी होय के सदैव वशीभूत रहत हे। वशीभूत कहेवे ते भगवान् अपनो अचिन्त्य ऐश्वर्य भक्तन में स्थापन करके आप ऐश्वर्य रहित होय के आधिन होय जाय हे। भगवान् को सम्पूर्ण ऐश्वर्य भक्त पने में धारण कर लेत हे और भगवान् ऐश्वर्य रहित होय के बालक जेसे माता के आश्रीत ओर माता सो पालनीय हे। तेसे ही भगवान् पुष्टि भक्तनकुं आधिन हे। येही महोदार चरित्रवान श्री वल्लभाचार्यजी की अन्य आचार्यो ते विशेषता हे, और अदेय दान की अवधि कोहुं येही स्वरूप हे। ताते श्रीवल्लभाचार्यजी समान ओर कोई भयो नहीं हे। नतो कोई आगे होयगो। ताते सप्त श्लोकी में श्रीमत्प्रभुचरण ने कह्यो हे के,

श्रीमद् वल्लभ नाम ध्येय सद्रशो भावी न भूतोऽस्त्यपि।।

तासुं आपको अतिशचित कीर्तिमानपनो तो विश्व व्यापी हे कृष्ण देवराजा की सभा में मायावाद को विजय कियो ता बीरीया सब वैश्नवाचार्यो ने आपको विजय तिलक कियो, ओर जगत गुरु आपको नाम धरायो, ताते आपकी कीर्ति को अतिशचित पनो तो अन्य आचार्यों से प्रसिद्ध भयो हे, और स्वमार्गीय सेवकजन आपकी कीर्ति को गान करे सोतो उचित ही हे। परन्तु अन्य संप्रदाय के आचार्यो जब आपकी कीर्ति ते मुग्ध मोहित होय के आपको यशोगान करे तब आपकी

उत्कर्षता में बाकी कहा रह्यो ? ताते श्रीवल्लभवर समान ओर कोई नहीं भयो हे। न आगे होयगो ऐसे आपके स्वरूप को निरूपण करवे वारे हुं श्रीमत्प्रभुचरण (पुष्टि पुरुषोत्तम) को स्वरूप हे, औरन को कहा सामर्थ्य हे जौ अचिन्त्य उग्रप्रतापी ऐश्वर्यवारे श्रीवल्लभाधीश के स्वरूप को जान शके? ताते अन्य आचार्यों ते आपकी उत्कर्षता में कोई संदेह नहीं हे। किंच श्रीवल्लभ केवल आचार्य ही नहीं परन्तु मन वाणी ते अगोचर हे। तत्व को ऐसे परब्रह्म स्वरूप हे और परब्रह्म को स्वरूप परब्रह्मी जाने हे। अन्य सुं जान्यो नहीं जाय ताते गीताजी में पृथापुत्र अर्जुन ने कह्यो हे के, हे भगवान् आपके स्वरूप को आप ही जानो हो। देव दानव मनुष्य नहीं जान शके हे। अब आगे कहत हे यह आपकी कीर्ति को प्रकाश करवे यव चिह्न धारण कियो हे। सो यव चिन्ह सर्व धान्यो को राजा हे यह चिह्न युगल स्वरुप के चरण कमल में ही हे ताते उभय भावात्मक हे। नवरात्रि में नव प्रकार के साधन भक्त नव दीन तांई दैवी पूजन मीष करी अपने भाव की सामग्री शृंगार अंगीकार कराय दशहेरा को दिन १० ज्वारा श्रीठाकोरजी के मस्तक पे धराय यह जतावत हे, जो श्रीस्वामिनीजी तथा श्रीमहाप्रभुजी के चरण में यव चिन्ह हे ताते भाव सुं धरावत हे। तामें यह भाव प्रकट भयो जो दशप्रकार की भक्ति चरणते प्रकट भई हे। श्रीमहाप्रभुजी के चरण में दश अंगुली हे ता भावते श्रीठाकोरजी के मस्तक पे धरके दशो प्रकार की भक्ति निकुंज संबंधी पुष्टि रसरूप दीनी तासुं प्रभु प्रसन्न होय के जवारा घरत हे। ताते यव सब अन्न को

आधिदैविक स्वरूप हे, जेसे भौतिक अन्न सुं भौतिक देह को निर्वाह होय हे तेसे लीलाधाम में आधिदैविक सृष्टि के आधिदैविक देह को निर्वाह प्रेम सुही होय हे। यह प्रेम भक्ति रूपी अलौकिक धान्य को राजा यव हे, यह यव चिन्ह में सुं प्रेम प्रकट होय हे ता करी सबन को लीलाधाम में निर्वाह होय हे।

सर्वात्मभाव वारे भक्तन कुं प्राण-स्मर-आशा आदि सब आत्मा रूप प्रभुनते प्राप्त होय हे, ताते प्रेम रूपी अमृत ते अजर अमर अलौकिक देह लीला धामस्थ परिकर को बन्यो हे। ऐसे जाननो ताते श्रीवल्लभ प्रभु की कीर्ति तो लीलाधाम में हुं प्रकाश कर रही हे सब लीला परिकर सुधा (प्रेम) स्वरूप श्रीवल्लभ को ही यशोगान करत हे। यज्ञमें यव को ही होम करत हे, ता करी सत्वगुण को उदय होत हे मन शुद्ध होय जाय हे और स्वतंत्र भक्ति प्रेम लक्षणा-निर्गुण हे। सो जतायवे के लिये आप स्वेत धोती उपरणा धरत हे। रसात्मक त्रिगुणातीत भक्ति कुं निर्गुण प्रेम लक्षणा भक्ति कहे हे। आप श्रीवल्लभ को मूल स्वरूप पूर्वदल संयोगात्मक त्रिगुणात्मक लीला सुं पर निर्गुण हे। निर्गुण होयवे से सब रसमें प्रधान रस-मधुर रस को ही आप भोग करे हे। *यह आशय जतायवे कुं आप स्वेत धोती उपरणा धरत हे सो आप में नव प्रकार रस को (मेलन) मिश्रण नहीं लीला गुण बिना नहीं होय शके और आपको मूल स्वरूप तो लीला अन्तःपाति हे। अन्तःपाति कहेवे सुं संयोगात्मक लीला में युगल के रमण विहार सुं प्रकट भई सारभूत सुधातो सुधा के ही आप भोक्ता हे और ता सुधा को ही आपको घनीभूत

स्वरूप हे। जेसे मिश्री में केवल मधुरता हे और मिश्री रस को घनीभूत स्वरूप हे, तेसे ही आप को मूल स्वरूप केवल मधुर प्रेम (सुधा) रस को हे। ताते भूतल प्राकट्य चरित्र में आपने जो स्वेत धोती उपरणा धारण किये हे सो आपको मूल स्वरूप जतायवे के लिये हे और जेसे यव में सब अन्न को समावेश हे तेसे मधुर रस में श्रृंगार रस के सब रस को समावेश हे, अथवा शृंगार रस के समस्त रस को सारतत्व मधुर रस हे। श्रीवल्लभ मधुराधिपति हे। ओर आपके अखिल श्री अंग के रोम रोम में मधुर रस के सागर भरे हे, ओर सर्व प्रेमभावो को समन्वय मधुर प्रेम भाव में होय हे प्रेमभाव की परिपक्व दशा में मधुर भाव प्रकट होय हे। यह मधुर प्रेम भाव के ही श्री वल्लभ भोक्ता हे। ताते आप मधुराधिपति कहावे हे। सो श्रीहरिरायचरण एक पद में कहत हे,

श्रीवल्लभ मधुराधिपति मेरे,
सदा बसो मन यह जीवन धन,
सब निजजन सुं कहत हु टेरे।।१।।
मधुर वचन ओर नयनन मधुर युग,
मधुर भोंह अलकन की पांत।
मधुर भाल ओर तिलक मधुर अति,
मधुर नासिका कहीयन जात।।२।।
अधर मधुर रस रूप मधुर छबी,
मधुर मधुर दोऊ ललित कपोल।
श्रवण मधुर कुंडल की जलकन,
मधुर मकर दोऊ करत कलोल।।३।।

मधुर कटाक्ष कृपारस पूरण,
मधुर मनोहर वचन विलास।
मधुर उगार देत दासन को,
मधुर विराजत मुख मृदु हास।।४।।
मधुर कंठ आभूषण भूषित,
मधुर उरस्थल रूप समाज।
अति विशाल जानु अवलंबित,
मधुर बाहु परिरंभन काज।।५।।
मधुर उदर कटी मधुर जानु युग,
मधुर चरण गति सब सुखरास।
मधुर चरणकी रेणु निरंतर,
जनम जनम मांगत “हरिदास”।।६।।

यह पदानुसार आप सर्वांग मधुर प्रेम रस ते पूर्ण हे। यह आपको स्वरूप बहोत विलक्षण हे, याको आगे विचार करवे में जीव की बुद्धि यांही **अमल** होय जाय हे, आपकी पूर्ण कृपाते ही आप को मूल स्वरूप (मधुर सुधा अग्नि) जान्यो जाय हे। सो श्रीहरिरायचरण कहत हे, ‘**स्वामिनीभाव भगवद् भाव युक्तं आपि विलक्षणम**’ श्रीगोवर्धनधर सर्व रस के भोक्ता हे। सो गोवर्धन याग में अन्नकोट भोग करते हे। ताही प्रकार भूतलकी सेवा प्रणाली में भक्ति मार्ग के यज्ञरूप अन्नकोट तथा नित्य अरोगायवे को मंडाण प्रकट करते भये, भूतल के विलास में मुख्य अरोगनो यह विधि कबहुं प्रकट नहि भई हती। सो श्री यज्ञ भोक्ता श्रीवल्लभने प्रकट करी यह संपूर्ण भूतल के विलास के कारण रूप यव को चिन्ह धारण कियो

हे, अथवा भूतल में अरोगायवे को विलास यव चिन्ह में ते प्रकट भयो हे (यहां पर स्थुल प्राकृत) दृष्टि वारेन को यह शंका होय के यव चिन्ह में ते भूतल में अरोगायवे को विलास प्रकट भयो यह केसे घटे ? ताके समाधान में अलौकिक विषय लौकिक बुद्धि सुं नहीं समज्यो जाय हे। जेसे कह्यो हे के, दिव्य ददामीते चक्षु दिव्य चक्षुते ही दिव्य लोक को विलास देख्यो जाय हे। तेसे यह पुष्टिमार्ग को सर्व विलास और विलास की सामग्री सब भावात्मक हे। ताते भावात्मक (दिव्य) बुद्धि सुं भावात्मक दिव्य विलास समज में आय शके हे, तामें प्राकृत बुद्धि अप्रयोजनका हे और जेसे आत्मा विना काहु को जीवन नीभे नहीं हे, तेसे श्रीमहाप्रभुजी के संबंध विना सभी विहार अपूर्ण हे अथवा आप श्रीवल्लभ के संबंध बिना युगल स्वरूप के हुं तापकी निवृत्ति नहीं। तब भूतलस्थ दैवी जीव की श्रीवल्लभ के संबंध बिना अथवा श्रीवल्लभ के चरण कमल के आश्रय बिना ताप निवृत्ति केसे होयगी ? ताते संपूर्ण लीलाधाम और भूतल के विलास में कारणरूप सबके आधिदैविक स्वरूप श्रीवल्लभ को ही जाननो। आप श्रीवल्लभ के मूल स्वरूप में रति केली क्रीया विना संपूर्ण विहार सिद्ध हे युगल स्वरूप के हुं आधिदैविक स्वरूप हे।

आधिदैविक कहेवे ते युगल (प्रिया-प्रितम) के आत्म स्वरूप श्रीवल्लभ हे तत्व सूत्र भाष्य के अध्याय प्रथम में आनंदमय अधिकरण में आनंदमय भगवान् की हुं आत्मा स्थायी रति भाव कह्यो हे। रति (प्रेम) को पर्याय नाम आनंद हे। यह प्रेम (सुधा) स्वरूप ही द्विधा श्रृंगारात्मक रसात्मक

लीला परिकर और भगवान् की हुं आत्मा स्वरूप हे। यह प्रेम स्वरूप को ही वेणुगीत के पंचम श्लोक में स्त्रीगूढ़भावो पुष्टिमार्गे परमतत्व कह्यो हे, जाको पर्याय नाम कृष्णास्य हे। ताते शृंगार रस की आत्मा स्थायी रति (प्रेम) होयवे सु श्रीकृष्णास्य स्वरूप श्रीवल्लभ ही प्रिया-प्रितम तथा लीला परिकर समस्त की आत्मा हे, ताते श्रीहरिराय चरण कहत हे, स्वामिनी भगवद् भाव युक्त अति विलक्षणम यह आपके वारे स्वरूप को अनुभव हे सो अनुभव करके विलक्षण सुधा स्वाद में निमग्न भये हे तामें निमग्न होय के पूर्ण प्रमेय बल ते आप को यशोगान करत हे,

श्रीवल्लभ तज अपुनो ठाकुर कहो कोनपे जैये हो।
सब गुण पूरण करुणासागर जहां महारस पैये हो॥१॥
सबहीन ते अति उत्तम जानी चरण पर प्रीति बढैये हो।
काननकाहु की मन धरीये वृत अनन्य एक ग्रहीये हो॥२॥

आपके स्वरूप की विलक्षणता श्रीमत्प्रभुचरण, श्रीगोकुलेशजी, श्रीहरिराय चरण और पद्मनाभदासादि की वाणी में सुं प्राप्त करवे योग्य हें अथवा श्रीवल्लभ प्रभु युगल स्वरूप के तापरूप ते प्रगटे हे। और युगल के ताप निवारक हुं हे। ताते लीलाधाम समस्त परिकर के आधिदैविक स्वरूप श्रीकृष्णास्य-वल्लभ को ही जाननो। या प्रकार जीन के आप युगल चरण कमल को आश्रय करनो और आपके चरण कमलगत यव के चिन्ह को जो जन चिन्तवन करे सो या लोक में सर्वप्रकारते खान-पान मे सुख पावे। (ठोर-मठरी-बुंदी आदि विध विध पकवानादिक सामग्री श्री प्रभुन

को अरोगाय के पश्चात अधरामृत को आस्वाद जो पुष्टि सृष्टि के सेवक जन कुं मिले हे सो गोडीया संप्रदाय वारेन कुं कहां? ताते श्रीवल्लभ को शरण ही सर्वोत्कर्ष हे के सेवक जनो को भौतिक जीवन भी अक्लिष्ट बनायो, जीव की सबी वासना की पूर्ति होय ओर दुराराध्य पुष्टि प्रभुन कुं भी प्राप्त करे ऐसो सुगम मार्ग अन्यत्र कहां ? ओर परलोक (लीलाधाममें) श्रीठाकोरजी की संयोग लीला में तथा विप्रयोगात्मक स्वरूप श्रीवल्लभ के चरण कमल समीप प्रेम लक्षणा भक्ति प्राप्त करे, प्रभु को यह भक्ति अति प्रिय हे काहेते ? श्रीठाकोरजी कुं यव के चिह्न ते भोग सिद्ध भयो हे, और कहत हे के, श्री वल्लभ प्रभु के चरण कमल अति कोमल हे ताते श्रीजी वारंवार पलोटत हे। आपके चरण कमल के स्पर्श सो जो मधुर रसानुभव होय हे सोतो रसिक शिरोमणि श्रीजी ही जानत हे। **प्रितकी रित को पेंडो ही न्यारो। के जानें वृषभान नंदिनी के जाने यह कान्हर कारो।।** मधुर प्रेमके मूर्तिमान घनीभूत स्वरूप श्रीवल्लभ हे। रोम-रोम प्रति मधुर प्रेम (मान) खंडीता के उपाधी रहित के अब्धि बहत हे। जामें ते गौलोक धामकी संयोगात्मीका लीला में अनंत स्वामिनीजी ओर तीन के भावात्मक अनंत कृष्ण प्रगट भये हे ताते श्रीजी कुं आपके चरण कमल के स्पर्श मात्र ते परम मोद होय हे। यह मधुरता को अनुभव करके श्रीजी स्वरूप श्रीमत्प्रभुचरण गुसांईजी ने श्रीसर्वोत्तमजी वल्लभाष्टक और सप्त श्लोकी प्रकट किये हे, जाके महत भाग्य को उदय भयो हे सोई जन यह ग्रंथ में सुं यह स्तोत्र में सुं आप के मधुर स्वरूप को अनुभव करेगो। भाग्यविना तो प्राप्त वस्तुकोभी भोग नहीं होय शके हे, लीला ते विछुरे दैविजीव अपने प्राणनाथ के वियोगमें अहर्निश तलफे हे। ताके भाग्य में यह मधुर प्रैम स्वरूप को अनुभव हे सोई जन उपरोक्त त्रिविध ग्रंथमें ते अपनी सर्वस्व निधि प्राप्त कर लेत हे ।

श्रीठाकोरजी रति सग्राम के महायोद्धा हे अमोघवीर्य हे, अच्युत हे, परन्तु श्रीमहाप्रभुजी की कानी ते आपके सेवकन के वस होय रहे तो स्वयं श्रीमहाप्रभुजी के वश होय रहे तामें कहा आश्चर्य ? आप श्रीवल्लभ रससम्पत्ति के दाता होयवे सुं सगरे निकुंजस्थ भक्तो कुं आप अति प्रिय हे। सब लीला परिकर प्रसन्न रहत हे, तासुं आप सबकुं सुखद और प्रिय हे। सबके मनोरथ कामना पूरण करवेवारे है ताते आपको नाम पूर्णानंदः पूर्णकाम हे। श्रीमहाप्रभुजी की हृदयरूप शैया में अनंतपने अनंत प्रकार की रहस्य लीला होय रही हे ताते श्रीवल्लभ बिना श्रीजी नहीं रह शके, तेसे श्रीजी बिना श्रीवल्लभ नहीं रहे शके। (श्रीजी बिना वल्लभ नहीं रह शके ताको आशय यह हे जो श्रीवल्लभ (सुधारूपते) आधेय स्वरूप हे और श्रीजी आधार स्वरूप हे। ताते आधेय आधार विना नहीं रहे शके हे तामें 'स ऐसोऽग्निवैश्वानरोयतः पुरुषः यो हेनं पुरुषविधं पुरुषांतरे प्रविष्टितं वेद' यह श्रुति प्रमाण हे)

'लक्ष्मी सहस्त्र लीलाभि सेव्यमानं कला निधिम अपरिमित' आधिदैविक लक्ष्मीओको कलानिधि कृष्ण के साथ जो विहार हे सो सब श्री वल्लभ हृदयस्थ हे, ताते सबके मूल स्वरूप श्री वल्लभ विरहाग्नि-सुधाकी सुभग मूर्ति

विना ताकी कृपा विना कछु प्राप्त नहीं होय, जेसे गोपालदासजी को श्रीविट्ठलेश सुधाते दान तेसे पद्मनाभदासादिक को श्रीवल्लभ सुधाते दान, अपनकुंतो या समय श्रीवल्लभ को परोक्ष पनो हे। ताते आपकी वाणी तथा आपके स्वरूप को तथा मार्ग को बोध अत्यंत दुर्बोध हे। सो सुबोध होयवे ताई श्रीविट्ठलेश प्रभुने अष्टोत्तर शत नाम कृपा करी प्रकट किये हे।

सो श्रीसर्वोत्तमजी के सतत पठनसुं श्रीमहाप्रभुजी की प्रसन्नता होयगी प्रसन्न होय के हृदय में पधारे तब भक्ति मार्गाब्ज मार्तंड रूपते दुर्बोध कुं सुबोध कर देय हे। श्रीवल्लभ की प्राप्ति प्रमाण द्वारा और प्रमेय द्वारा उभय प्रकारे होय हे, तामें प्रमेय द्वारा श्रीमद् दमलाजी की कृपा सुं तथा आप श्रीमद् दमलाजी के सम्यक आश्रय सुं होय, और प्रमाण द्वारा श्री मत्प्रभुचरण गुसांईजी की कृपा सुं होय, तामें प्रमेय को अधिकार बहोत दुर्लभ जाननो, कारण के प्रमेय में तो आप श्रीवल्लभ को भावात्मक अमूर्त घनीभूत सुधा स्वरूप ही जीवन के अवलंबन रूप हे। एक क्षण अदर्शन की युग समजाय हे और सर्व परित्याग पूर्वक व्यसन भाव की काष्टापन्न दशा भोग रहे हे। जेसे जन प्रमेय के अधिकारी हे। प्रमेय तो साक्षात्स्वरूप हे ताकुं प्रमेय कहे हे, यह प्रमेय में अधिकार जब होय के पंचपर्वा अविद्याकी निवृति होय पश्चाद् आधिदैविक लक्ष्मी भाव को दान होय। पाछे दृढ़ स्वरूप शक्ति होय, व्यसन भाव होय, तब प्रमेय सिद्ध भयो जानीये, जहां ताई देहाध्यासादि प्रपंच की विस्मृति नहीं भई

हे वहां तांई प्रमेय को अधिकार प्राप्त नहीं होय, अथवा प्रेम-आशक्ति-व्यसन भाव के क्रम ते रसात्मक स्वरूप के प्राप्ति की जो प्रणाली हे सो भूतल लीला संबंधी हे ओर सो साधनात्मक प्रणालीते श्रीवल्लभ की प्राप्ति होय हे, तद्पि श्रीवल्लभ जाके लिये करुणा करे ताकुं यह प्रणाली अतिरिक्त फळ को दान करवे में समर्थ हे। या प्रकार के दान में आपको सर्वतंत्र-स्वतंत्रपनो कर्तुम-अकर्तुम, अन्यथाकर्तुम विरुद्ध धर्माश्रम ऐश्वर्य हे। सो आप अपने स्वतंत्र पूर्ण प्रमेय बलते अपने स्वकीय जन को पुष्टि चतुर्थ पुरुषार्थ रूप कृपा भरी है क्षणते क्षणमात्रामें सिद्ध करवे समर्थ हे और ताही क्षण लीलापयोगी देह दान करके लीलाधाम में प्रवेश करावत हे, और जहां मार्ग मर्यादा ते फलदान करवे की आपकी इच्छा हे, अथवा प्रमाण द्वारा फलदान करवे की इच्छा हे ऐसे जनमें प्रेम आशक्ति व्यसन की प्रणाली ते संघात कुं विरहात्मक सिद्ध करके पाछे आप अपने अदेय स्वरूप को दान करत हे, सो प्रभु की इच्छा कोन प्रकारते दान करवे की हे । सो तो जीव की समज में नहीं आय सके हे। ताते साधन दशावारेन कुं प्रेम, आशक्ति, व्यसन भावकी प्रणालीते अर्थात् या प्रकार की प्रणाली रूप प्रमाण मार्ग ते चलनो हितकर हे, और श्रीमद् प्रभु चरण की जो श्रीवल्लभ स्वरूप संबंधी वाणी हे, सो प्रमेय रूप प्रमाण हे।

सो श्रीसर्वोत्तमजी, वल्लभाष्टक, सप्त श्लोकी यह तीन्योनमें श्रीवल्लभ को यशोगान हे नाम-रुप गुण द्वारा

आपके स्वरूप को ज्ञान करायो हे ताको अहर्निश गुणगान करवे सुं आप श्रीवल्लभ हृदय में बिराजे हे। आपके यशोगान करवेवारेन के हृदय में आप बिराजते होयवे सुं **स्वयशोगान संहृष्ट हृदयांभोज विष्टरः** यह नाम प्रकट कियो हे आप को जो यशोगान हे सो पियूष (अमृत) हे। अमृत के पान कर्ताकुं देहादि अध्यास विस्मरण करावे हे और आधिदैविक (अजर अमर) देह की प्राप्ति करावनी यह अमृत को सहज स्वभाव हे, और यशोगान ते आप जब हृदय में पधारे हे तब प्रेम आशक्ति व्यसन भी सिद्ध होय जाय हे। यामें कहा आश्चर्य ? कारण के प्रेम आसक्ति-व्यसन के मूल अधिष्ठान श्रीवल्लभ हे। ताते श्रीमत्प्रभुचरण की वाणी को आश्रय करके आपको यशोगान करवे सुं प्रमाण द्वारा ही आपके मूल सुधा स्वरूप की प्राप्ति होय हे। श्रीमत्प्रभुचरण ने आप श्रीवल्लभ के मूल (कृष्णास्य) सुधा स्वरूप को जो अनुभव कियो हे सोई तीन्यो ग्रंथ में (स्तोत्रोमें) वाणी द्वारा प्रकट कियो हे। सो वाणी में आदर भाव राखवे सुं श्रीगुसांईजी कृपा करी के अपनो जो अनुभव स्वरूप हे ताको दान करत हे और श्रीविठ्ठलेश चिन्तवन नाम के ग्रंथ में श्रीहरिरायचरण आज्ञा करे हे के जेसे श्रीवल्लभ अदेयदान करवे में समर्थ हे तेसे श्रीविठ्ठलेश प्रभुको हुं जान तो श्रीवल्लभ को अचिन्त्य अनंत शक्ति युक्त जो महिमा हे सो समस्त ऐश्वर्य श्रीमत्प्रभुचरण में स्थापित कियो हे और तीन्यो ग्रंथ द्वारा दया सागर श्री प्रभुचरणे वल्लभी अंतरंग जन कुं अदेय स्वरूप श्रीवल्लभको

वाणी स्वरूप सुं दान कियो हे, वाणी में भावात्मक स्वरूप बिराजमान हे सो भाग्यवान जनकुंही यह रहस्य स्फुरीत होय जाय हे. (यहां एक निगुढ रहस्य यह भी समजवे को हे के, श्रीवल्लभ को एक नाम **'पतितपावनाय नमः'** हे तेसे श्रीमत्प्रभुचरण के १०८ नाममें एक नाम **'महापतितपावनाय नमः'** हे। ताको आशय श्रीवल्लभ के सर्वाज्ञात स्वरूप से जो जीव पतित हे ऐसे पतित जीव को भी दयासागर श्रीविठ्ठलेश प्रभु स्वयंकी वाणी द्वारा श्रीवल्लभ के मूल सुधा स्वरूप को दान करत हे। सर्वाज्ञात श्रीवल्लभ को मूल सुधा स्वरूप ही सबसु पर महान सर्वोत्कर्ष अचिन्त्य महिमा वारे हे। यह स्वरूप को जीन कुं ज्ञान नहीं ताकु ही महापतित कह्यो जाय हे। ताको ज्ञान त्रिविध ग्रंथों (स्तोत्रों) द्वारा करायके सर्वाज्ञात श्रीवल्लभ के स्वरूप को सेवन भजन स्मरण गुणगान श्रीविठ्ठलेश प्रभुने प्रकट कियो। ताते पंचम कुमार श्रीरघुनाथजी नाम रत्नाख्यान में आपको नाम **'महापतितपावनाय नमः'** यह नाम प्रकट किये ताते आधुनिक वल्लभी सृष्टि के लिये तो येही परम हितकारी हे। कारण के देहाध्यास जीनके छुटे नहीं हे ताके लिये उपरोक्त प्रणाली ते चलने फलसाधक हे, ओर गोपीजनों के मन मद सुं प्रभु **अंषर्हित** भये। पश्चात् गोपीजनों ने अणवेशन कियो तोउ प्रभु प्रकट नहीं भये तब सब गोपीजनोंने मिल के यह निश्चय कियो के, हरि कुं गान प्रिय हे। ताते प्रिय की प्रसन्नता के लिये और अपने दोष की निवृत्ति के लिये गुणगान ही करनो ऐसो निश्चय करके

श्री यमुनाजी की पुलीन में आयके सब मीलके प्रणय वेदना युक्त प्रियतम कुं रीझायवेवारो प्रणय भाव युक्त गान कियो तेसे आधुनिक वल्लभी सृष्टि कु अपने प्राणनाथ-प्रेमदेव श्रीवल्लभ कुं रीझायवेके लिये इनको यशोगान करनो, और सेवाफल ग्रंथ की विवृत्ति में श्रीहरिराय चरणने आज्ञा करी हे के, आधुनिक सृष्टि को पुष्टि मर्यादा में अंगीकार हे, तो जितनी मर्यादा तीतनो साधन करनो आवश्यक हे, यहां पर साधनमें सेवा स्मरण गुणगान स्वरूप चिन्तवनादि हे, तामें तापात्मक गुणगान सत्वरे फलोन्मुख करायवे वारो हे ऐसो वर्तमान समये दिखे हे, श्रीहरिराय चरणने (शी.११) आज्ञा करी हे के गुणगान दुःखभावन-दिनता और त्याग यह चतुर्थ साधन सिद्ध भक्तनके कर्त्तव्य रूप हे स्वरूपात्मक गुणगान से, अर्थात् स्वरूपाशक्ति सहित गुणगान से बहुत कालसे विछुरे अपने प्रियतम प्रभु की स्मृति होय हे, फेर प्रभु परोक्ष होयवेसुं ताकुं साक्षात् मिलवे की अभिलाषा सुं दुःख होय हे। यह दुःख सुं दीनता होय हे दीनता सुं प्रसन्न भये प्रभु हृदय में सुं प्रकट होय समग्र प्रतिबंध दूर करी अपुनो स्वरूपानंद दान कर लीला लोकमें प्रवेश करावत हे, ताते स्वरूपात्मक गुणगान सत्वरे प्रभु को प्रकट्य करायवे वारो हे, अब श्रीसर्वोत्तमजी को सतत पठन करनो वेहु गुणगानरूप हे ओर तीन्यो ग्रंथ की टीका को अवलोकन करी आपको स्वरूप ज्ञान प्राप्त करनो सो स्वरूप ज्ञान से महात्म्य पूर्वक सुदृढ़ स्नेहते आपके स्वरूप माधुरी को चिन्तवन ध्यान करनो यह हु न बने तो आपके नाम को

चातक वत अनन्य वृत्त सुं प्रिय वियोग दुःख की व्यथाभरे रटन करते रहेनो ताकुं भी महोदार चरित्रवान स्वामी गुणगान मान चलेंगे, श्रीवल्लभ नाम में हुं अगाध रस भर्यों हे, ताते श्रीहरिरायचरण कहत हे,

श्रीवल्लभ नाम अगाध हे जहां तहां मति बोल।
जब ग्राहक हरिजन मीले तीन आगे तुं बोल॥

उपरोक्त साधनोमें बुद्धि की निश्चियता पूर्वक सतत सानिध्य रहेवेसुं आप निश्चय फलदान करेंगे यामें संदेह नहीं हे, कारण के साधनोमें निश्चय होते ही आपके स्वरूप में निरोध करायवेवारी आपकी कृपा शक्ति को कार्य सरू होय जाय हे, ओर सबके नाम को केसो प्रभाव हे सो श्रीहरिरायजी ने एक पदमें वर्णन कियो हे,

भोर भये भावसो ले श्रीवल्लभ नाम ।
हे रसना तुं ओर वृथा बके क्यों नीकाम॥
सेवा रस स्वाद पावे निशदिन गुणगावे।
ओर सब बिसरावे यह मन आठोयाम॥१॥
हरि वस छिन ही में होत स्फुरत सघळो भक्ति मारग।
रूप हृदय वसे अरु रस समुह धाम॥
रसिकन कछु ओर करे इनही में भाव धरे।
अति रस अनुपान करे और कपट वाम॥२॥

श्रीवल्लभ नाम को कोटि भानु सद्रश उग्र महिमा हे, अपरिमित काल से बिछुरे दैवी जीव के हृदयस्थ अंधकार को दूर करके दिव्य लीला लोक को प्रकाश करे हे, ओर नाम हे सो बीज रूप हे, जेसे बीज में सुं वृक्ष प्रकट होय

हे और वे वृक्ष अनेक शाखा-पत्र पुष्प-फल के विस्तारवारो होय हे। तेसे आपको नाम जब हृदय भूमि कुं सुद्ध करके बाहिर प्रकट होय हे। तब श्रृंगार कल्पद्रुम को अनुभव करावे हे गौलोक धामकी समस्तलीला नाम लेयवेवारे भक्त के हृदय में प्रकट करे हे, ऐसो श्रीवल्लभ नाम को महिमां हे, ताते और कछु न बने तो प्रेम-विरह दिनता सुं आपके नाम को स्मरण सतत करते रहेनो ।

शास्त्रार्थ निबंध में श्रीआचार्य चरण आज्ञा करे हे के, ‘‘कलिकाल स्वभावतः उत्कृष्ट हे स्वल्प साधनते महाफल प्राप्त होय हे, यह स्वल्प साधन आपके नाम को स्मरण हे। कलिकाल के साधन हीन जीवकुं परमहित विचारी के नवरत्न में महामंत्र अष्टाक्षर को आपनो साधन और फल की एकता करके दान कियो हे, ताते ओर कछु साधन न बने तो नाम में पूर्ण निष्ठा राखी के दैन्यभाव संयुक्त आपके नाम को स्मरण करते रहेनो’’, श्रीवल्लभ नाम को यशोगान श्रीहरिराय चरणादि महत पुरुषोने बहोत कियो हे। किम बहुना सब सुकृत को फळ श्रीवल्लभ नाम हे। प्रभु के साथ दैवी जीव को जो वरण हे यह वरण में भगवद् नाम ही कारण रूप हे जेसो स्थान तेसी लीला जेसी लीला तेसो स्वरूप और जेसो स्वरूप तेसो नाम हे तो सर्वाज्ञात के जाकी लीला काऊसो जानी नहीं जाय ऐसे दुराराध्य देव श्रीवल्लभ प्रभु के साथ वरण कुं सिद्ध करावेवारो श्री वल्लभ नाम हे। सर्वाज्ञात स्वरूप व श्रीवल्लभ के बिराजवे को स्थान भी सर्वाज्ञात हे तीनकी लीलाभी सर्वाज्ञात हे और

तीनको स्वरूप हुं सर्वाज्ञात हे। तीनकी भली प्रकार प्राप्ति श्री वल्लभ नाम के वरणीय जन कुं होय हे। ताते सब सुकृत को फल कह्यो और नाम सच्चिदानंद रूप हे। ताते सद्रूपसुं सर्वाज्ञात स्थान प्रकट करे हे, चिद्रूपसुं सर्वाज्ञात के स्वरूप को और सर्वाज्ञात की सर्वाज्ञात लीला के ज्ञान को प्रकाश करे हे, और आनंदरूप सुं सर्व सुं अज्ञात आपको स्वरूपानुभव-आत्मानुभव हे। ताको निज वरणीय जनकुं दान करे हे। या प्रकार आपके नाम में ही स्थान स्वरूप और लीला अव्यक्त रूप ते रहे भये हे और स्वरूप ज्ञान सहित नाम को स्मरण सत्वरे फलित होय हे ताते जो आपकी कृपाते महत पुरुषों की वाणी में समज पडे तो यह वाणी को आदर पूर्वक अवलोकन करनो अथवा कृपापात्र वल्लभीयन के मुखते श्रवण करनो तासुं आपको महात्म्य दृढ़ होय, महात्म्य पूर्वक सुदृढ़ स्नेह अनन्यता सिद्ध करे हे अनन्यता को अर्थ पतिवृत भाव सो पतिवृत भावते आप प्रसन्न होय हे तब अपनो (स्वयं को) जो अदेय स्वरूप हे ताको दान करत हे। पतिवृत भाव बिना स्वरूप दान नहीं होय हे कारण के आप तो पतिवृताके पति हे, ताते आप को महात्म्य दृढ़ करवे के लिये आपको जामें यशोगान हे ऐसी वाणी को अति आदर ताप भाव और दैन्यता पूर्वक अवलोकन करनो यद्यपि महात्म्य ज्ञान को अभाव होय तो पण श्रीवल्लभ नाम को अनन्य आश्रय राखी के स्मरण करते रहेनो तो आपको नाम सब दिव्य सम्पत्ति को प्राप्त कराय देयगो कारण के निःसाधन जनो के लिये ही करुणा

सागर श्रीवल्लभ भूतल प्रादुर्भूत भये हे। तासुं महात्म्य ज्ञान के अभाव में हुं नाम में सर्व स्वतः राखके स्मरण करते रहेनो। नाम की फलीतता कुं सिद्ध करायवे वारी दीनता हे, दीनता विना सेवा-स्मरण-गुणगानादिरूपी अलौकिक साधनो को प्रभु अंगीकार नहीं करे हे, कारण के जेसे पकवानादि सामग्री में केशर-कस्तुरी-अंबर-जायफल-जावंत्री-बदाम-पीस्ता और घृतादि उत्तम वस्तु पधरायी जाय परन्तु मिष्ठान (मिश्री-गुड-चीनी) मिलाई न जाय तो पकवानादि सामग्री फीक्की लगे हे तेसे दीनता बिना अलौकिक साधनों की अंगीकृति प्रभु नहीं करते होयवे सुं अलौकिक साधनो में भाव को दान नहीं होय हे और भाव बिना की जो कृति हे तामें स्वाद नहीं आवत हे। ताते सेवा स्मरणादि जो कछु करनो सो अति दैन्यभाव सहित करनो, दैन्यभाव ते हृदय भूमि आर्द्र रहत हे जेते खेत में बीज बोयो जाय हे सो खेत-जलते आर्द्र भूमि वारो हे तो बीज तामें ते अंकुरीत होय हे पाछे प्रतिदिन जलके सिंचन ते अंकुरीत बीज वृक्षको स्वरूप धारण करी के आम्र फल जेसे मधुर रसको भोग करावत हे तेसे दीनता भावते हृदय भूमि आर्द्र रहवे सुं भगवद नाम को जो स्वरूप हे सो प्रकट होय हे तामे प्रेम भाव अंकुरित होय के वृक्ष तुल्य विस्तार वारो भयो थको फलरूप कोटि कंदर्प लावण्य निधान प्रभुन के स्वरूप को अनुभव करावे हे ताते जो कछु करनो सो दैन्यभाव संयुक्त करनो दैन्यभाव प्रभुन की सत्वरे प्राप्ति करायवे वारो हे। अब दैन्यभावते और चातकवत अनन्य टेक तो श्रीवल्लभ

नाम को स्मरण कियो जाय हे ताकुं केसो ओर कोन प्रकार करुणात्मा श्री वल्लभ प्रभु अपनो स्वरूपानुभव करावत हे। ताको वर्णन दयाराम भाई ने एक पद में कियो हे,

श्रीवल्लभ श्रीवल्लभ श्रीवल्लभ भज,
रटत रति सहज रजनी दिवस जेने।
पुष्टि पथ सकल सिद्धान्त वर्णाश्रम सदा,
वास पूरी रहे हृदय तेने॥१॥

सहज सेवा सिद्ध मानसी मुख्य फल,
प्रेम आसक्ति सह व्यसन भक्ति।
सतत निरोध मन नंदनंदन विषे,
श्री गुरु दृढ़ाश्रय भव विरक्ति॥२॥

श्यामा श्यामा सुधारूप रंजीत मनी,
वज्रपति होय वस वण प्रयासे।
हेतु करुणा कृष्ण दैन्य दासत्व दृढ़,
उचित वस्तु अखिल सहज पांसे॥३॥

राख विश्वास उर शरण बल,
सुद्ध मुख मंत्र गुणगान माने।
पाप संताप प्रतिबंध पलये सकल,
जाय नहीं कदापि धी कु कर्मे॥४॥

लुब्ध सत्संग मन मोह दंपति अति,
गमती गोविंद कृति सद् भासे।
निर्भयानंद निज हृदय सर निरंतर,
प्रसिद्ध प्रियतम दया मन हुल्लासे॥५॥

दयाराम भाईने अपने आध्यात्मिक जीवनमें जो पुरुषार्थ को अनुभव कियो हे सो पुष्टि पथ रहस्य नामके ग्रंथ में प्रकट कियो हे सो ग्रंथ के निष्कर्ष यह पदमें दिये हे, यह पदमें दयाराम भाई श्रीवल्लभ नाम को अतुलित महिमां दिखावत हे के रति कहेते प्रेम सु श्रीवल्लभ नाम को रात्री दिन जो जन रटन करे हे। ताको यद्यपि मारग को ज्ञान तथा प्रभुन के स्वरूप को ज्ञान न होय, और बुद्धिहिन अज्ञानी होय तेसेन कोहुं श्रीवल्लभ नाम स्मरणते पुष्टि मार्ग को दुर्बोध ज्ञान बिना श्रमे होय हे, जेसे विष्णुदास छीपा श्रीमहाप्रभुजी के सेवक हते। सो श्रीगुसांईजी श्रीमद् गोकुलमें जब बिराजते ता समे विष्णुदास छीपा मंदिर की डोढी पे द्वारपाल की सेवा करते। ता समें मायावादी पंडितों श्रीगुसांईजी सो वाद करवे आवते। ता समें विष्णुदास छीपा ताकुं पुछते के तुम काहे को आये हो। तब मायावादी पंडित कहेते के हम श्रीगुसांईजी को प्रश्न करवे आये हे। तब विष्णुदासजी कहेते के इनकुं कहा प्रश्न करनो हे ? सो मोकु कहो तब पंडितलोक विष्णुदासजी को प्रश्न करते ताको प्रत्युत्तर देके मायावादि पंडितो कुं निरुत्तर कर देते। सो पंडितलोक पराजित होय के चले जाते और आपस में पंडित लोक कहेते के जीनके द्वारपाल सेवक में इतनो सामर्थ्य हे तो तीनके स्वामी को सामर्थ्य कितनो होयगो ? ऐसे विचार करके पाछे फीर जाते, वेही विष्णुदास छीपाजी को दूसरो प्रसंग हे के, एक समये श्रीगोकुलेश प्रभु स्नान करके सेवामें पधार रहे हते। तब विष्णुदासजी ने पुछी के

बावा कहां पधार रहे हो ? तब श्रीगोकुलेश प्रभुने कही के सेवा करवे जाय रह्यो हुं। तब छीपाजी ने कही के आप छीवाय गये ऐसे तीन बेर स्नान करके श्रीगोकुलेश सेवा में पधारे ओर तीन बेर छीपाजी ने छीवायेकी ही बात करी। तब श्रीगोकुलेश प्रभुने श्रीगुसांईजी सो यह प्रसंग कह्यो तब श्रीप्रभुचरण ने कही बावा तातजी के सेवक के कहेवे को आशय निगूढ हे। ताते आप ऐसे मत कहो के सेवा करवे जाय रह्यो हुं, परन्तु ऐसे कहो के हाथ पवित्र करवे जाय रह्यो हुं छीपाजी ने श्री गोकुलेशप्रभु को विनंती करी के बावा सेवा तो पिता-पुत्र (श्रीवल्लभ-विठ्ठलेशजी) ही कर जाने हे, या प्रसंग ते श्रीवल्लभ अपने जनमें अद्‌भुत सामर्थ्य को दान करत हे। ताते श्रीवल्लभ नाम स्मरण करवे वारेन के हृदय में पुष्टि मार्ग जो प्रेम मार्ग हे ताको सकल सिद्धान्त ज्ञान आय बिराजे हे, कारण के श्रीवल्लभ स्वयं वाकपति हे वाकपति होयवे ते आप दैन्य भावते प्रसन्न होय के जाके हृदये बिराजे तीनकुं पुष्टि प्रेम मार्ग को सकल सिद्धान्त स्फुरित होय तामें कहा आश्चर्य ? ताते श्रीहरिराय चरणने कह्यो हे के,

श्रीवल्लभ पद वरण कुं सरस होत सुजान।
अधम रटत आनंद सुं करत अमी रसपान।

श्रीवल्लभ के चरण कमल में जो जन को वरण भयो हे और पति भावते आपके भजन करत हे, वे जन पापी-पतित अधम मुरख होय तीनको हुं सरस कहेवे ते तत्सुखी मधुर प्रेम रस सो पूर्ण कर देत हे। कारण के आप मधुर

प्रेम के महासागर हे, जेसे आंबकी गुटली में सु वृक्ष प्रकट होय हे और तामें जो फल लगे हे वेहु मधुर रसको भर्यो होय हे। तेसे बीज रूप वल्लभ नाम हुं मधुर होयवे ते मधुर प्रेम रस कोही अनुभव करावे तामें कहा आश्चर्य ? बहिरंग लीला प्रपंच में जड़ जीव अंतर्यामी को भेद है- तेसे अंतरंग लीला प्रपंच में यह भेद नहीं अंतरंग लीला प्रपंच में तो जड जब अन्तर्यामी में सब आत्मा रूप हे। यह सिद्धान्तते श्रीवल्लभ नाम रूप बीज और बीज में सुं प्रकट होयवे वारो श्रृंगार कल्पद्रुम ओर तीनकी साखा-पत्र-पुष्प-फल सब मधुर प्रेम रस ते पूर्ण हे। और सुजान कहेवे ते मूरख अज्ञानी को पुष्टि प्रेम मार्ग के सकल सिद्धान्त जान सके तेसी सुन्दर बुद्धि वारो बनाय देत हे प्रेम तत्व कुं जाने वेही सुजान हे और श्रीवल्लभ ने यह मार्ग प्रकट कियो हे। सो तो रति पथ और केवल धर्मी स्वरूप के संबंध वारो हे ताते केवल धर्मी स्वरूप श्रीवल्लभमें अनन्य निष्ठा हे, वेही जन सुजान हे सुजान शब्द को निगूढ आशय यह हे के धर्मी स्वरूप श्रीवल्लभ में सुं ही गौलोक धामकी अनंत लीला प्रकट भई हे, ताको स्वरूप ज्ञान भली प्रकार जीन कुं भयो सोई सुजान ओर श्रीगोकुलेश प्रभुने श्री सर्वोत्तमजी की बृहद टीका अन्तरगत **विबुधेश्वर** नाम मे विबुध को स्वरूप ज्ञान करायो हे के विबुध तो व्रजजन ही हे। जीनके धर्मी स्वरूप मात्र ही चतुर्थ पुरुषार्थ रूप हे। ताते सुजान तो वेही के श्रीवल्लभ के स्वरूप लावण्यामृत सिन्धु में डुब गये हे। ओर अधम कहेवे ते श्रीगीताजी (९-३०) में भगवान् पृथा-पुत्र प्रति कहेते हे के, हे पार्थ दुराचारी होते छते जो मेरो अनन्य होय के भजन करत हे ताकु साधु पुरुष जाननो। कारणके विनने यथार्थ निश्चय कियो हे के भगवान् ओर भगवान् के भजन विना ओर सब तुच्छ हे, ऐसे दुराचारी भक्त मेरी भक्ति के प्रभावते सत्वरे धर्मात्मा (निर्मल बुद्धिवारो) होय के परम शान्ति पावत हे, पुष्टि मार्ग में धर्मात्मापनो तो येही के पतिवृत भाव सो अपने स्वामी की सेवा करनी येही पुष्टि भक्त को धर्मात्मापनो हे, ओर यहां जो अधम पद हे सो लोक वेद के धर्म को जीनने त्याग किये हे ओर धर्मी स्वरूप श्रीवल्लभ को अनन्य भजन करे हे। ऐसे अधम जीव हुं श्री वल्लभनाम रूपी अमृतको पान आनंद सहित करत हे, श्रीवल्लभ नाम में प्रेमरूपी अमृत के अनंत समुद्र को समावेश हे । सो श्री मत्प्रभुचरणने वल्लभाष्टक के प्रथम श्लोक में कह्यो हे के **‘स्फुर्जद रासादि लीलामृत जलधि भरा क्रांत सर्वोपि शश्वद रासादि लीलामृत’** के अनेक समुद्र श्रीवल्लभ विग्रहमें आक्रांत होय रहे हे। सो संपूर्ण लीलामृत समुद्रो श्रीवल्लभ नाम में हुं जाननो बहार प्रकट स्वरूप में रहे भये लीलामृत समुद्रो को अनुभव बाहिर रमणादि क्रिया द्वारा होय हे और नाममें रहे भये लीलामृत समुद्रो को अनुभव भक्त हृदयांतर भावात्मक भाव द्वारा होय हे। जेसे महारास में पधारे व्रजरत्नाओं कुं बाहिर प्रकट स्वरूप सुं रास लीला को आनंद प्राप्त भयो, और युगलगीत वारे गोपीजनो कुं गुणगान द्वारा आंतर भावात्मक अनुभव भयो, अथवा नाम

हे सो बीजरूप हे और बीजमें सुं वृक्ष प्रकट होय हे ओर बीजमें सुं वृक्ष प्रकट भये पेहेले वृक्ष बीजके भीतर अव्यक्त रूप ते रह्यो भयो हे। तेसे बीजरूप वल्लभ नाम में ते श्रृंगार कल्पद्रुमरूपे अथवा रासादि लीलामृत समुद्र जो बाहिर प्रकट होय हे। सो प्रकट भये पहेले अव्यक्त रूपते श्री वल्लभ नाम में स्थित हे **'अणुऽपि ब्रह्म व्यापकम भवति अलौकिकेषु धर्मेषु प्रमाणम एव अनुसर्तव्यम न लौकिकी युक्तिः (शा-नि-पंज)'** यह प्रमाणते उपरोक्त कथन को दृढ़ी करण करनो, ताते श्री हरिरायचरण कहत हे श्रीवल्लभ नाम अगाध हे जहां तहां मती बोल अब श्रीवल्लभ नाम के प्रभाव ते आगे जो अनुभव होय हे सो कहत हे, सहज सेवा सिद्ध मानसी मुख्य फल ।

मानसी सेवा अति दुर्लभ हे। मानसी सेवा कुं दुर्लभ क्यों कही ? ताको कारण मानसी सेवा तो नित्य लीला स्वरूप संबंधी हे और व्यसन भाव जेसी काष्टापन्न दशा में सिद्ध होय हे। ताते अति कष्टते प्राप्त होयवे सुं दुर्लभ कही, सो दुर्लभ मानसी सेवा हुं श्री वल्लभ नाम के प्रतापते सहज सिद्ध होय हे, अर्थात् सहज सेवा कुं मानसी कहत हे, सो सहज सेवाको लक्षण नंददासजी कहत हे के,

मनकी गति पिय पे एकतारा,
समुद्र मीली जेसे गंग की धारा।।

गंगाजी को प्रवाह ऐसे अवच्छिन्न (एकधारो) समुद्र में मिली रहत हे। समुद्र में जो प्रवाह मिलत हे सो गंगाजी ओर समुद्र अलग नहीं दिखत हे, तेसे सहज सेवा में मन

चित्त की समस्त वृत्ति ओ रूप धाराओ प्रियतम श्रीवल्लभ के माधुर्य स्वरूप में तदाकार रहत हे। ताकुं सहज सेवा अर्थात् मानसी सेवा कहत हे, **चित्तस्त प्रवण सेवा तत सिद्धये तनुवितजा, मानसी सा परामता।** परा कहेवे ते लीलाधामस्थ स्वरूप में तदात्मकता जाननो, ऐसी जो दुर्लभ मानसी सेवा सो श्री वल्लभ नाम के अतुलित प्रभावते सिद्ध होय जाय हे, ताको प्रमाण चोरासी वैष्णव अंतरगत अच्युतदास हे श्रीमहाप्रभुजी के शरण अच्युतदास जब आये ता बीरीया श्रीवल्लभ ने सेवा करवेकी आज्ञा करी। तब अच्युतदासने विनंती करी के राजा मोकुं आप मानसी सेवा को दान करो। इनकी विनंती सुं आपने मानसी सेवा को दान कियो हे। आपको यह अचिन्त्य सामर्थ्य हे के, सानिध्य मात्रते दुर्लभ मानसी सेवा को दान कर दियो इनकुं तनुजा वितजा सेवा करके मानसी सिद्ध नहीं करनी पड़ी, ताते काहुं प्रकारते जो श्रीवल्लभ करुणा करके अपनी सन्मुखता को दान करे तो प्रयास बिना सब सिद्ध होय जाय हे।

ताते दयाराम भाईने कह्यो हे के, 'श्रीवल्लभ शरण थकी सौ पड़े सहेलुं पुष्टि प्रभुनकी अनंत प्रकार की जो लीला हे ताके अधिपति आप हे।' साधन रहितनमें हुं महाफल दान करवेमें आप समर्थ हे और स्वतंत्र हे, ताते हे वल्लभीओ अपने प्राणपति श्रीवल्लभ जा प्रकार प्रसन्न होय सोई कृति कर्तव्य हे। आप प्रसन्न भये तब कहा दुर्लभ हे ? आगे कहत हे। प्रेम आशक्ति सह व्यसन भक्ति भुतलमें प्रेम भक्ति की चार श्रेणी हे। प्रेम आशक्ति-व्यसन

और तन्मयता जब देह ओर देह के संबंधी तथा जगत प्रपंच सुं राग की निवृत्ति होय जाय तब प्रभु प्रेम अंकुरित होय हे। यह प्रेम की जब वृद्धि होय हे, तब आशक्ति में प्रवेश होय, और आशक्ति की वृद्धि ते व्यसन भाव होय हे और व्यसन भाव में ते तन्मयता में प्रवेश होय। तब दुराराध्य पुष्टि प्रभुन के साक्षात् अनुभव करवे की पात्रता सिद्ध होय, या प्रकार की चार्यो पुष्टि प्रेम भक्ति यह कलि काल में सिद्ध होनी अति दुर्लभ हे। कारण के अवतार लीला के प्रागट्य समय में हुं गोपीजनो कुं ११ वर्ष की कठिन तपस्या ते यह प्रेम भक्ति सिद्ध भई हे, सो हुं श्रीवल्लभ नाम स्मरण करवेवारेन कुं अनायास प्राप्त होय हे, कारण के प्रेम आशक्ति व्यसन तन्मयता ते सिद्ध भयो जो प्रभु प्रेम सो प्रेम के महासागर (स्वतः सिद्ध) मूर्तिमान स्वरूप श्रीवल्लभ हे। ताते श्रीवल्लभ करुणा करी के जाके हृदय बिराजे ताको चार्यो प्रकार की प्रेम भक्ति सहज सिद्ध होय तामें कहा आश्चर्य ? याको प्रमाण श्री सर्वोत्तमजी में **'सानिध्य मात्र दतः श्रीकृष्ण प्रेमा'** यह नाम ते जाननो यह प्रेम की चार्यो अवस्था के ज्ञान की साधकको जो आवश्यकता हे सो तो याते के भगवान् की दैवी गुणमय माया साधक की अपक्क दशा कुं परिपक्व दिखाती हे ओर परिपक्व दशा कुं अपक्क दशा दिखावत हे। जब साधक अपक्क दशाकुं पक्क दशा समजते हे तब आगे प्रवृत्ति नहीं करे हे और अपनी पूर्णता को अनुभव करत हे और प्रतिष्ठा में प्रणीत होय के टोल बनावत हे और टोलके महंत होय के महंताई के आनंद में मग्न रहत हे ऐही दैवी गुणमय मायाकी प्रतारणा (ठगाई) हे ।

प्रेम प्रभु को शिखर स्थान येही हे के श्रीवल्लभ के प्रेमीजन अपनो विश्व निरालो बनावे जहां प्रियतम श्री वल्लभ के साक्षात् स्वरूप विना ओर कछु न दिखवे में आवे येही प्रेम की परिपक्व दशा अथवा प्रभु प्रेम को शिखर स्थान हे, याको प्रमाण श्रीगोकुलेश प्रभु कृत श्री सर्वोत्तमजी की बृहद टीकामें **'वेदपारगः'** नाम में प्राप्त होयगो यह दृश्य विश्व में प्रियतम श्रीवल्लभ को (प्राकृत अध्यासवारे तत्संबंधी जनो में तत) संबंध मानी के आनंद को अनुभव करनो और साक्षात् स्वरूप के अनुभवार्थ प्रयत्न नहीं करनो येही दैवी माया की प्रतारणा हे, ताते भक्ति वर्धनी में आपने प्रेम की यह अवस्था को ज्ञान करायो हे, आगे कहत हे, सतत् निरोध मन नंद नंदन विषे, समस्त साधनो को अंतः मनको निरोध करवे में होय जाय हे, अर्थात् सेवा स्मरणादि जो साधन हे सो मन को रोध प्रभु स्वरूप में होयवे के लिये मन के लिये भगवान् ने गीताजी के विभुति अध्याय में कह्यो हे के, दुर्जय में मन मेरी विभुति हे, मन को वस करनो बहोत कठिन हे अति दुःखते मन को निग्रह होय हे। वैराग्य और अभ्यास विना कब हुं मन को निग्रह नहीं होय हे। वैराग्य में भौतिक समस्त सुखो की और ब्रह्मानंद पर्यंत को त्याग करके साक्षात् स्वरूप के लिये विरह को अनुभव करनो यह वैराग्य और अभ्यास सेवा स्मरण गुणगान चिंतवनादि साधनो में तत्पर रहेनो, जेसे दुधमें जामन डारते

ही गोरस बनवे की क्रिया स्वतः होयवे लगे हे ताके लिये कोइ प्रयास करनो नहीं पड़े हे। तेसे सेव्य स्वरूप के अधरामृत को सेवन करी भजन स्मरणादि करवेवारेन के मन को निरोध प्रभु स्वरूप में स्वतः होयवे लगे हे, भगवद्नाम अलौकिक अग्नि हे। तामें हुं श्रीवल्लभ नाम तो महा प्रज्ज्वलित कोटि सुर्याग्नि समान हे। अनेक जन्म के काइक-वाचिक-मानसिक दोष राशि कुं भस्म कर देयवे में समर्थ हे, ताते कह्यो हे के

'नाम प्रताप प्रकाश भये ते गयी मोह की सांज', सांज नाम रात्रि को अंधकार दैवी जीव के लिये अंधकार। ये ही हे के अपने स्वामी के स्वरूप को अज्ञान और आपके लीलाधाम को तथा दैवीजीव को अपने स्वयं को आधिदैविक स्वरूप को अज्ञान, यह अज्ञान रूपी अंधकार नामरूपी सूर्य दूर कर देय हे। ऐसो श्रीवल्लभ नाम को प्रभाव हे, आगे कहत हे, **'श्री गुरुदृढ़ाश्रय भव विरक्ति'**, श्री गुरु श्रीवल्लभ हे, प्रिया-प्रियतम तथा लीला परिकर तथा भूतल को दैवी परिकर समस्त के मूल गुरु आप श्रीवल्लभ हे। पुष्टि मार्ग रसात्मक मार्ग हे ताके गुरु स्वरूप श्रीमत्स्वामिनीजी हे। सो श्रीस्वामिनीजी स्वरूप वल्लभके आश्रय विना ठाकोरजी की प्राप्ति नहीं होय हे, अर्थात् श्री गुरु स्वरूप ते श्रीवल्लभ अहंता-ममतात्मक संसार अज्ञान रूपी अंधकार को नाश करके नंद नंदनजी श्री ठाकोरजी को मिलाय देत हे। 'हेतु करुणा कृष्ण दैन्य दासत्व दृढ़' श्रीवल्लभ या प्रकार ते साधन हीन अपने आश्रित जन की

एक नाम स्मरण मात्र अल्प साधन ते ऐसो अलभ्य पुरुषार्थ सिद्ध करावत हे। तामें कहा कारण हे ? यह शंका होय ताहं कहत हे के श्रीवल्लभ महाकारुणिक हे कलिकाल के साधन हित जीव को ओर विशेष करके पतित जीव को उद्धार करवे के लिये आप भूतल प्रादुर्भूत भये हे। ताते महाकारुणिक धर्म ते अपने अंगीकृत जन में श्रीकृष्ण के दासत्व को दान करके लीलामध्यपातित्व सिद्ध करत हे। और आप की करुणा उपजे ऐसो दैन्यभाव हुं प्राप्त करावत हे। दैन्य विना पुष्टि प्रभु की प्रसन्नता नहीं होय हे। सो दैन्य की सिद्धि के लिये श्रीवल्लभ अपनो तापात्मक स्वरूप दान करके अंगीकृत जनमें दैन्य सिद्ध करावत हे। दीनता और दासत्व बिना पुष्टि प्रभुनकी दिव्य लीलामें प्रवेश असम्भव है, याते आप महत करुणा धर्म सुं नीज जन में यह उभय भाव सिद्ध करावत हे, और आपके भूतल प्रादुर्भाव में पतित जीव को पक्षपात करके ताको उद्धार करनो येही असाधारण प्रयोजन हे। ताते श्रीहरिराय चरणनते श्रीवल्लभ की १०८ नामावली में **'पतित संग्रणाय नमः'** ऐसो नाम प्रकट कियो हे, दैवी जीव के अनेक अपराध ते जब श्री ठाकोरजी को रोष (अप्रसन्नता) होय हे। वहां भी दैवी जीव को पक्षपात करके प्रभुन की सन्मुख करत हे। ताते श्रीवल्लभ समान महाकारुणिक कोउ नाही, कलिकाल ग्रस्त मूढ दुराग्रह ही जीव के स्वभाव ते प्रभु प्राप्ति में जो विलंब होत हे यह स्वभाव परिवर्तन के विलंब को सहन करके दैवीजीव प्रति आपकी अंगीकृति को नीभावत हे।

ताते आप समान महाकारुणिक ओर कोउ नाही। आगे कहत हे, उचित वस्तु अखिल सहज पासे पुष्टि दैवीजीव के लिये उचित-उत्तमोत्तम-सर्वश्रेष्ठ वस्तु, लीला धाममें प्रवेश करके कोटि कंदर्प लावण्य निधान अगणीतानंद स्वरूप प्रभुन को साक्षात् अनुभव करनो। सोइ उचित वस्तु हे, दैवी जीव के जो लीलाधामते बिछुरे हे ताकु चतुर्विध मुक्ति हुं तुच्छ हे पुष्टि प्रभुन को साक्षात् अनुभव करनो यही परम फल हे। सो श्रीवल्लभ कृपाते सहज प्राप्त होय जाय हे। 'पांसे' पद को अर्थ लीलाधाम सहित प्रभुन के स्वरूप को दैवी जीव के हृदय में प्रादुर्भाव करत हे। सो प्रकार श्री हरिरायचरण ने वैश्वानराष्टक स्तोत्र में दिखायो हे के,

हरिभावात्मानं तद्अखिल विरहानऽपितथा,
समस्तां सामग्री मनुज पशु पक्ष्यादि सहिताम्।
कृपा मात्रेणात्र प्रकट्यति दृक पार करुणः,
समें मूर्धन्यास्तां हरिवदन वैश्वानर विभुः॥१॥

याविध लीलाधाम की समग्र लीला सहित लीलापरिकर सहित श्रीप्रभुन के स्वरूप को आप अपनी करुणा दृक पात मात्र ते निजजन के हृदय में प्रादुर्भूत करत हे। यह 'पांसे' पद को अर्थ हे, और एक पदमें हु श्रीहरिरायचरणने ऐसो ही कह्यो हे के,

हरिवस छीन ही में होत स्फुरत सघलो भक्ति मारग।
रूप हृदय वसे अरुरस समूह धाम॥
भोर भयो भाव सो ले श्रीवल्लभ नाम।

श्रीवल्लभ नाम द्विधा श्रृंगार कल्प वृक्ष को बीज हे,

तामें ते गौलोक धामकी समस्त लीला रूप कल्पवृक्ष प्रकट होत हे। आगे कहत हें, **श्यामा श्याम सुधारूप रंजीत मनी व्रजपति होय वस वणं प्रयासे॥** श्रीवल्लभ तत्सुखी मधुर प्रेम के महासागर रूप हे। आप जाके हृदये बिराजे तामें मधुर प्रेम भाव को दान करत हे। ताते श्रीठाकोरजी वशीभूत होय जाय हे, ताके लिये कोई प्रयास नहि करनो पड़े हे और प्रिया-प्रियतम के स्वरूपात्मक लावण्य सुधापान में मनकुं रंग देवे हे, 'श्यामा' जो श्रीस्वामिनीजी और 'श्याम' श्रीठाकोरजी यह उभय के लावण्य सुधा को पान करके दैवीजीव को मन मत वारो होय जाय हे। यह पुष्टि मार्ग निरालो हे ताकुं परमानंददासजी अपने पदमें जतावत हे,

कमल मुख देखत तृप्ति न होय ।
यह सुख कहा दुहागीन जाने रही नीशाभर सोय॥१॥
ज्यों चकोर चाहत उडुराजे चंद बदन रही जोय।
नेक अकोर देत नहि राधा चाहत पिय ही नींचोय॥२॥
उनतो अपनो सर्वस्व दीनो एक प्राण वपु दोय।
भजन भेद न्यारो 'परमानंद' जानत विरला कोय॥३॥

जेसे चन्द्र को उदय होते ही चकोर चन्द्र के अमृत श्रावी लावण्य तामें निमग्न होय जाय हे। नेत्र की पलक बंध नहीं होय हे। इनकी प्यास मीटे ही नहीं हे, तेसे श्रीमत् स्वामिनीजी प्रियतम श्री ठाकोरजी के श्रीमुख लावण्य को पान एकी रसे करत हे। जेसे जेसे रूपामृत को पान करत हे, तेसे-तेसे प्यास बढ़ती जाय हे भगवान् के संबंध को अमृत ऐसोही अतृप्त स्वभाव वारो हे। ताते कोउ रसिक

भक्त ने कह्यो हे के,

पिवत पिवत रूप रस बढत रहत दिश आश।
दई दई नेही द्रगन अजब अनोखी प्यास॥

प्रियतम के रूपामृत को पान जेसे जेसे करत हे तेसे-तेसे अधिकाधिक प्यास बढ़ती जाय हे। दिव्य प्रेम राज्य की गाथा अर्निवचनीय हे। याको वर्णन वाणी में नहीं आय सके हे। दिव्य प्रेम सर्वाज्ञात गूढ तत्व हे। सो अनुभव वेद्य हे, और जेसे प्रियाजी श्रीठाकोरजी के लावण्यामृत को पान करी तृप्त नहीं होत हे। तेसे श्रीठाकोरजी प्यारीजी के श्रीमुख लावण्य को पान करत हे। यह उभय स्वरूप के श्रीमुख की जो लावण्यता हे तामें दैविजीव के मन को रंजित कर देय हे। श्रीवल्लभ ऐसे अनंत युगलोकी लावण्यामृत सुधाको घनीभूत साकार स्वरूप हे ताते श्रीहरिरायचरण कहत हे के,

श्रीवल्लभ तज अपुनो ठाकुर कहो कोन पे जैये हो।
मुख विधु लावण्य अमृत एक टक पीवत ताही अघैये हो॥

और रामदासजी ने हुं आपको यशोगान कियो हे तामें कहत हे,

श्रीवल्लभ वरनु कहा बडाई।
जाके रोम रोम प्रति प्रकटित कोटि गोवर्धनराई॥१॥
वाके यूथ भये न्यारे न्यारे बरनत बरने न जाई।
रामदास कमला सी दासी सो घर छांड बसाई॥२॥

'सर्वशक्तिधृक' श्रीवल्लभ में सुं ही रसात्मक अनंत

ब्रह्मांड को सर्जन होय हे । ताते रसात्मक अनंत कल्पवृक्ष के मूल श्रीवल्लभ होयवे ते श्रीहरिरायचरण कहत हे के, श्रीवल्लभ को तज के कोन के शरण जैये ? आगे कहत हे राख विश्वास उर शरणबल आश्रित भक्तोनकी आत्मारूपते हृदय में बिराजे हे । सो स्वरूप परोक्ष होयवे ते आपमें विश्वास राखवे को कहत हे। यह पुष्टि मार्ग परोक्ष फलात्मक हे । अवतार लीला में एकादश वर्षकी लीला के अन्त में श्री गोपीजनों कुं भावात्मक (विरहात्मक) स्वरूप जो सिद्ध भयो हे सो भावात्मक सिद्ध स्वरूप को दान श्रीवल्लभ अबकी आधुनिक सृष्टि कुं ब्रह्मसंबंध के साथ ही कर देय हे श्रीवल्लभ के दान की येही विशेषता रही हे ताते कलियुग सब युगते अधिकाई ऐसे महानुभावने कह्यो हे। चोरासी दोसो बावन में भावात्मक स्वतः सिद्ध स्वरूप को दान भयो हे सो दान वर्तमान में हुं गद्यमंत्र में स्थित हे ताके अधिकारी लीलाधाम ते बिछुरे हे विजीत हे। ओर के लिये यह दान नहीं, यह भावात्मक स्वरूप हृदयमें बिराजते होयवे सुं ही दैविजीव इनकी प्रेरणा सुं भगवद् सन्मुखताको अनुभव करत हे। ताते यह भावात्मक स्वरूप कुं ही परोक्ष फलात्मक कह्यो हे। अवतार लीला में वेणुनाद द्वारा यह भावात्मक स्वरूप को गोपीजनों में प्रवेश भयो और सबकी सृष्टि कुं ब्रह्मसंबंध द्वारा दान दे ताते पद्मनाभदासजी गावत हे के
'तब वेणुनाद द्वार अब लक्ष्मण भट भूप कुमार॥'

अवतार लीला में गोपीजनों कुं वेणुनाद द्वारा भावात्मक सुधा स्वरूप को जो दान भयो हे सोई श्रीवल्लभ

सन्मनुष्याकार स्वरूपे भुतल में प्रादुर्भूत भये हे। सो आपने अपनो ही भावात्मक स्वरूप ब्रह्मसंबंध द्वारा निजजन में पधरायो हे। ताको प्रमाण वल्लभाष्टक के प्रथम श्लोक में श्रीहरिराय चरण के विवरणमें जिज्ञासु कुं वहां देखनो ताते यह परोक्ष फलात्मक (विप्रयोगात्मक) मार्ग में भावात्मक स्वरूप में विश्वास राखवे को कहत हे और गोपीजनों के मान मद सुं जब प्रभु अंतर्हित भये पाछे दैन्यते प्रकट भये तब गोपीजनों कुं श्री ठाकोरजी ने कह्यो हे के में तुम्हारो परोक्ष भजन कर रह्यो हतो सोई परोक्ष फलात्मक वियोगाग्नि मार्ग श्रीवल्लभ ने प्रकट कियो हे। ताते आधुनिक दैवि सृष्टि कुं विश्वास राखी के सेवत भजन में तत्पर रहेनो अग्रिम **'सुद्ध मुख मंत्र गुण गान माने।।'** जो ग्रंथो में महत पुरुषो की सिद्ध वाणी बिराज रही हे तामें अथवा अष्ट सखान की सिद्ध वाणीते जो गुणगान नहीं कर शके हे ऐसे अधिकारीनके लिये कहत हे के विशुद्ध बुद्धिते श्रीवल्लभ नाम रूपी मंत्र को दैन्य प्रेम और विरहभाव सहित जो जन रटन करत हे ताकुं महोदार चरित्रवान स्वामी गुणगान मान लेयगे । जो गुणगानते फलात्मक दैन्य प्रकट होय हे सो फलात्मक दैन्यते साक्षात् स्वरूपानुभव की योग्यता होय हे। ऐसो जो गुणगान हे सो श्रीवल्लभ नाम के स्मरण मात्रते सिद्ध होय जाय हे कारण के जेसे गायत्री मंत्र ॐ में सुं चारोंवेद प्रकट भये हे तेसे रसात्मक चार्यो वेद चार्य यूथाधिपति श्रीस्वामिनीजी के विलास रूप हे सो सब श्रीवल्लभ नाम में ते प्रकट भये हे। अथवा जेसे गायत्री

वेदको बीज हे तेसे रसोवैसः की अनंत लीला सर्जक श्रृंगार कल्प वृक्षको बीज श्रीवल्लभ नाम हे। ताते पुष्टि मार्गमें श्रीसर्वोत्तमजी कुं गायत्री रूप कहे हे। सो श्रीवल्लभ नाम में अनंत प्रकार की पुष्टि प्रभुनकी लीला गुणगान को समावेश हे जेसे गोपीजनोते प्रणय विरह व्यथा युक्त गोपीगीत गायो हे यह तापात्मक गुणगानते गोपीजनो के आधिदैविक दोषों की निवृत्ति भई। तब प्रभु प्रादूर्भुत होय गये तेसे वल्लभ नाम कोटि सूर्याग्नि सम होयवे सुं स्मरण करवे वारेन के समस्त दोषों कुं भस्म सात करके प्रभु प्रादुर्भाव की भूमिका सिद्ध करत हे, और दयाराम भाई ने 'पुष्टि पथ रहस्य' में कह्यो हे के,

ले श्री वल्लभ नाम तेज हरि सेवा माने।
कृष्णा धरामृत को स्वाद प्राप्त श्रम घणो नाने।।

हरि जो श्रीगोवर्धन धर सो श्रीवल्लभ नाम के स्मरण ते ही श्रीठाकोरजी सेवामान लेत हे। तो कहा स्वयं की सेवा करवेवारेन की सेवा नहीं मानते होयगे ? यह शंका होय तहां कहत हे, के सेवा इन कुं कही जाय के जीन की सेवा करत हे। सो सेव्य सेवाते प्रसन्न होय सो तो प्रभुन की इच्छा कुं ब्रह्मादिक हुं नहीं जान सके हे। तो जीव केसे जानेगो के प्रभु मेरी सेवा ते प्रसन्न भये हे ? और श्रीवल्लभ नाम ते श्रीजी सेवामान लेय हे ताको रहस्य तो ऐसो हे के जेसे कोई प्रेमी जन के पास तीन के प्रेमीको कोउ स्मरण करे तो स्मरण करवे वारे के ऊपर प्रेमीजन प्रसन्न होय हे। यह तो लोक में हु प्रसिद्ध हे। ताते श्रीवल्लभ नाम के

स्मरण करवे वारे उपर श्रीजी प्रसन्न होय हे, और श्रीजी की प्रसन्नता जामें होय ताको ही नाम सेवा कही जाय, यासु ऐसो नहीं समजनो के श्रीठाकोरजी घर पे बिराजे होय। ताकी सेवा नहीं करनी और श्रीवल्लभ नाम को ही स्मरण करनो ऐसी बुद्धि नहीं राखनी। सेवा मुख्य धर्म हे, सेवा करत मन में श्रीवल्लभ नाम को स्मरण करते रहेनो तासुं प्रभु प्रसन्न होय के सेवा की अंगिकृत करेंगे, श्रीवल्लभ नाम महान् अलौकिक अग्नि को स्वरूप हे। सो सेवा करत में जो अपराध होय हे ताकुं भस्म कर देय हे और प्रभुन की प्रसन्नता प्राप्त करावत हे। ताते श्री हरिरायजी 'निजाचार्याष्टक' स्तोत्र में कहत हे,

श्री गोकुलेशांध्रि सरोज सेवा विशेष दोषादर दोषदाहक:।
संशोध कोऽशुद्धि विबुध चेतसां स वल्लभो वल्लभ एव मेऽस्तु॥५॥

सेवा करतमें जो दोष होय हे ताको दाह करके सेव्य की प्रसन्नता प्राप्त करावत हे, अब 'कृष्णधरामृत को स्वाद प्राप्त श्रम घणो वाने' ऐसो कह्यो यह कृष्णाधरामृत स्वाद अति दुर्लभ पदार्थ हे। याकी दुर्लभता याते हे के, याको भोग स्वयं पुष्टि प्रभु करत हे। ताते लोभ को स्थान जो प्रभु को अधर हे तामें ही कृष्णाधरामृत स्वाद रहत हे। सो तो लोभवारे अपने भोग को पदार्थ अन्य कुं नहि देत हे। परन्तु श्रीवल्लभ प्रभु जापर कृपा दृष्टि ते देखे हे। ऐसे प्रिय वियोगी दिन विरही जन के लिये श्री ठाकोरजी के अधर में सुं यह सुधाकुं पृथक करके अपने आश्रित जन को दान करत हे। ताते ऐसे जो दुर्लभ अधरामृत सो श्रीवल्लभ नाम

के स्मरण रूप अल्प श्रम ते प्राप्त होय हे, ऐसे दान में श्रीवल्लभ प्रभु को महाकारुणिक पनो ही जाननो, और कृष्णाधरामृत स्वाद जो दुर्लभ पदार्थ हे सो श्रीवल्लभ नाम स्मरण के अल्प साधन ते श्रम ते प्राप्त होय हे, ताको कारण ऐसो हे के, जेसे आम्र फल हे सो मधुर रसते ही भर्यो जायो हे। सो आम्रफल आम्रफल के बीज में सुं ही प्रकट होय हे तेसे श्रीवल्लभ मधुर रस के अनंत सागरो को मूर्तिमान स्वरूप हे तेसो ही आप को नाम हे, ताते नाम स्मरण करवेवारे अंगीकृत जन की रोम रोम में मधुर रस पूरित कर देय हे। याको प्रमाण श्री सर्वोत्तमजी की बृहद टीका में '**कृपादृग्वृष्टि संव्हष्ट दास दासी प्रिय**' यह नाम में देखनो, आगे कहत हे, 'पाप संताप प्रति बंध प्रलये सकल जाय नहि धी कदापि कुकर्मे' दैवी जीव जब भगवान् ते बिछुर्यो हे, तबते ही कायिक-वाचिक-मानसिक पाप करतोही रह्यो हे, तीन के पुंज ते 'संताप' त्रिविध प्रकार के दुःख और भगवद् प्राप्ति में काल माया कृत गुणो को प्रतिबंध यह समस्त को श्री वल्लभ नाम के स्मरण मात्रते प्रलय होय जाय हे।

जेसे सूर्योदय होते ही ओस जलकी बिन्दु अदृश्य होय जाय हे तेसे नाम रूपी सूर्य को हृदय में उदय होते ही अनेक जन्म के पाप संताप प्रभु प्राप्ति में प्रतिबंधक हे। ताको नाश होय जाय हे, आपके चरणकमल के आश्रय बिना यह प्रतिबंध दूर नहीं होय हे याको प्रमाण श्री सर्वोत्तमजी को '**स्मृतिमत्रार्तिनाशन:**' नाम हे। यह नाममें

श्रीगोकुलेश प्रभुने श्रीवल्लभ नाम के स्मरण को अतुलित प्रभाव दिखायो हे, जब नाम स्मरण करवे वारे जनकी आर्ति ते आप प्रसन्न होय हे। तब आप वे वज्र की स्मृति करे हे ताही क्षण समस्त दोष राशि कुं भस्म करके वही क्षण निरवधि स्वरूपानंद को दान करे हे। ऐसे नाम को प्रताप हे, आगे कहत हे, लुब्ध सत्संग मन मोह दंपति अति गमती गोविंद कृति सद्य भासे ॥

जब श्रीवल्लभ नाम रूपी सूर्य को हृदय में उदय होय हे तब भगवद् प्राप्ति में समस्त प्रतिबंध और अज्ञान रूपी अंधकार दूरि कर देय हे। तब दैवी जीव निरावरण होय हे। अपने स्वयं के आधिदैविक स्वरूप को ज्ञान होय हे। तब यह जाने हे जो मेरे सर्वस्व प्रभु हे तब प्रभु प्राप्ति की तापाग्नि प्रकट होय हे। युगल स्वरूप की प्रणय लीलाओ के श्रवण की इच्छा करे हे। आपकी लीला में तथा स्वरूपमें मन मोहित होय जाय हे समानशील भक्तनके संग की इच्छा करे हे। युगल लीला विहार श्रवण में मन लुब्ध होय जाय हे। प्रभुन की लोक वेद विरुद्ध लीला-माखन चोरी-पन घटलीला-दानलीला-वस्त्र हरणलीला यह सब कृति अति रुचिकर लागे हे। कारण के निरावरण भये दैवी जीव को जीवन प्रभुनके सेवा-स्मरण गुणगानादि तेही टीके हे। ताते लीला श्रवण अति रुचि पूर्वक करे हे, आगे कहत हे,

निर्भयानंद निज हृदय सर निरंतर,
प्रसिद्ध प्रितम-दया-मन हुल्लासे॥

जहां काल माया को भय नहीं, काल माया के धर्म को जहां प्रवेश नाहीं ऐसे निर्भय स्थान तो प्रभुन को लीलाधाम हे। सो लीलाधाम श्रीवल्लभ नाम स्मरण करवेवारेन के हृदय में प्रकट होय हे और काल माया के भय रहित अखंड आनंद को अनुभव प्रभुन के स्वरूप सुं करत हे, ऐसो दान गोपीजनोंमें तथा चोरासी दो सो बावन में प्रसिद्ध हे। ताते श्रीवल्लभ नाम के प्रताप ते ऐसो निर्भय आनंद प्राप्त करी दैवीजीव सदा हुल्लास में रहत हे। या प्रकार श्रीवल्लभ नाम को अतुलित महिमा हृदय में धारण करी दैन्यभावे चातक जेसी अनन्य टेकते सतत रटन करते रहेनो । अब आगे कहत हे, जो आपकी वाणी हुं साक्षात् स्वरूप सुं बिराजमान हे। सो वाणी आधिदैविक स्वरूप प्रकट करणार्थ बिराज रही हे। जहां तांई आपकी वाणी प्राप्त नहिं तहां ताई आधिदैविक भावार्थ को सुबोध हुं नहिं होय हे, सो वाणी मुख्य स्वामिनीजी समान भाव दान भक्तन को करत हे और श्रीवल्लभ जापर कृपा करे ऐसे भक्त के लिये, भगवान् स्वयं स्वामिनी भाव स्वीकार के भक्ताधीन होय के भक्त भर्तय स्वरूप धारण करत हे, सो निज भक्तन कुं स्वतंत्र पने को दान करे हे, और अपने लिये जा मंगल काल में मूल धामते अतुल करुणा ते भूतल प्रादुर्भूत भये सो निज आत्मानुभव रूप रसात्मक महाम्य प्रकट करवे के लिये, ओर मूल धामते बहोत काल ते विछुरे अपने दैवीजीव को दुःख दूरि करवे प्रगटे हे, भूतलस्थ सृष्टि को दुःख श्रीवल्लभ विना नाहीं होय शक्तो।

श्रीस्वामिनीजी-श्रीठाकोरजी तेहुं भूतलस्थ भक्तो को दुःख दूर नहीं होय सकतो। तब मुखारविंद स्वरूप प्रकट करते भये, जो स्वरूप लीलाधाम में हुं अति गोप्य हे (लीलाधाममें आपको सुधा स्वरूप सर्वाज्ञात 'वल्लवीशांतर हुलसती' वल्लवी-गोपीजन और तीनके इस श्रीठाकोरजी के आंतर विहार करे हे। ताते लीला धाममें हुं लीला परिकर के आंतर गोप्य रूप ते बिराजे हे) ऐसी दुर्लभ निधि भूतल में निजजन के भाग्य सुं सन्मनुष्याकार स्वरूपे प्रकट भये, ताते श्रीविठ्ठलेश्वर आज्ञा करत हे, '**प्रादुरासीद् भूमौ यः सन्मनुष्याकृति अति करुणास्यं प्रपद्येहुताशम॥**' आप अति करुणा धर्म साहित्ये निजजन के दुःख दूरी करणार्थ प्रकट भये हे यह आपकी करुणताकी अवधि को वर्णन कैसे होय शके ? ताते श्रीहरिरायचरण हुं कहत हे,

श्रीवल्लभ तज अपुनो ठाकुर कहो कोन पे जैये हो।
सब गुण पूरण करुणा सागर जहां महारस पैये हो॥

करुणा को पर्याय नाम वात्सल्य प्रेम हे। जेसे माता को प्रेम अपने शिशु में सदा क्षमा युक्त होयवे ते वास्सल्य प्रेम कह्यो जाय हे तेसे आप वात्सल्य प्रेम के महासागर स्वरूप हे। तासु कलिकाल के साधन हिन जीव के अनेक अपराध सहन करे हे आपको अपराध सहन करवे में क्षमा धर्म हुं सागरवत हे। ऐसे वात्सल्य प्रेम ते क्षमा धर्म के सागर स्वरूप विना कलिकाल के जीवको उद्धार नहीं होय शके। तासुं आप भूतल प्रादुर्भूत भये हे महानुभाव सूरदासजी कहत हे,

देखो देखो हरि जुको एक स्वभाव।
अति गंभीर उदार उदधि प्रभु जान शिरोमणिराय॥१॥

दास अपराध जान सिन्धुसम बुंद न ऐको जान।

निजजन के सिन्धु समान अपराधो को एक बिन्दु समान भी नहीं गीने हे ऐसे महाउदार क्षमा वान धर्म ते आपको प्रागट्य कलिकाल के जीव के उद्धार के लिये भयो हे आपकी यह महा उदारता को श्री प्रभुचरण "**अतिकरुणस्तं**" पदते जतावत हे और श्रीगोवर्धनधर को स्वरूप हुं श्रीमहाप्रभुजी के भावते बिराजमान हे ऐसो स्वरूप तो सारस्वत कल्प में हुं धारण नहीं कियो कबहुंक प्रकटता दिखाई हे ताते भगवदीय गावत हे के, 'कलियुग सब युग ते अधिकाई' या प्रकार आपके ग्रंथ आपको निजवंश हस्ताक्षर पादुकाजी और बेठकजी आदि स्वरूपते पुष्टि भक्ति प्रकट करवे बिराज रहे हे। सो श्रीवल्लभ आपनी कीर्ति को प्रगट (प्रसिद्ध) करत हे, सो यह उपरोक्त संपूर्ण प्रकार यव के चिन्ह धारण करि के जतावत हे, सो आपको मार्ग सिद्धान्त स्वरूप सब स्वतंत्र लेख श्रीसर्वोत्तमजी की बृहद टीका में श्री गोकुलेश प्रभुने प्रकट करके दिखायो हे। परन्तु अल्प जीवकी बुद्धि को प्रवेश तामें नहीं होय शके हे (आपको प्रकट कियो मार्ग वियोगात्मक-भावात्मक हे ताको भली प्रकार ज्ञान श्रीगोकुलनाथजीने श्रीसर्वोत्तमजी की बृहद टीका में करायो हे। नित्य लीलाधाम में प्रेम की दोय अवस्था सर्वोत्कर्ष हे, एक धर्मी संयोगात्मक दूसरी धर्मी विप्रयोगात्मक यह दोय अवस्थावारे भक्तों में भावात्मक

स्वरूप की स्थाई स्थिति हे धर्मी संयोग में लीला सहित स्वरूपानुभव हे और धर्मी विप्रयोग में केवल स्वरूप को अनुभव हे। यह दान करणार्थ आप भूतल प्रकट भये हे) और श्रीवल्लभ प्रभु के निजजन के चरित्र हुं श्रीगोकुलनाथजी ने प्रकट किये हे (के जामें धर्मी संयोग-धर्मीविप्रयोग स्वरूप को आपने दान कियो हे) ताके गुणगान सुं श्रीवल्लभ प्रभु की प्रसन्नता होय हे। और आपकी प्रसन्नता सुं आपके दुर्लभ चरण कमल की प्राप्ति होयगी।

या प्रकार दक्षिण चरण के ७ चिन्ह तथा वाम चरण के ८ चिन्ह को धारण मनन, परिशीलन वारंवार करनो। यह चिह्न महिमा को कीर्तन करनो तासु महात्म्य पूर्वक सुदृढ़ स्नेह होयगो और महात्म्य भावकी दृढ़ताते आप में अनन्य पतिवृत भाव सिद्ध होयगो तब आपको अदेय स्वरूप निःसंदेह प्राप्त होयगो, कारण के आप पतिवृता के पति हें ताते पतिभावते सदा अपने चरण कमल के निकट राखी अपुनो निरवधि रसानुभव करावेंगे, चरण कमल भक्त के पक्षपाति हे, समग्र प्रतिबंध निवृत्त करके श्रीवल्लभ प्रभु में नीर्हेतुक भक्ति भाव को दान करत हे। ताते पुरुषार्थ की अवधि रूप आपके (दुर्लभ) युगल चरण कमल को हे वल्लभीओ सदा आश्रय करो ॥

जव चिह्न को धोल

कीर्तिमान जवनु ते चरण जानो रे,
लीला अंतर मांहे सु आनो रे॥

कृपा करी सहुभक्ति दीधी प्रान प्यारे रे,
एज भावे धरे छे ज्वारा रे॥

दश प्रकारनी जे भक्ति कहीये रे,
तेतो चिन्ह जव मां हे सहु लहीये रे॥

वालाजीओ शिश चरण सुदी प्रेम लीधा रे,
दशो भक्ति दान निकुंज ना दीधा रे॥

जव नुं ध्यान हृदय मां हे कीजे रे,
अलौकिक अमृत रस अक्षय पीजे रे॥

ऐ चरण विना बीजू साधन नहीं जानो रे,
प्रभु वश करवाने मन आनो रे॥

...यहां जव चिन्ह के भाव को वर्णन सम्पूर्ण भयो...

॥ युगल चरण कमल के चिन्ह को वर्णन सम्पूर्ण भयो ॥

શ્રી વલ્લભ પુસ્તકાલય
કાંદિવલી મુંબઈ
સુખધામ : ૨૮૦૧૨૮૩૦
સુરેન્દ્ર જ શાહ : ૯૮૩૩૨૭૨૩૮૩
ક્રિષ્ણાબેન શાહ : ૭૫૦૬૦૮૭૪૬૨
No. P 068

राग-केदारो

श्रीवल्लभाधीश के चरण नख चिन्ह क,
ध्यान उर में सदा रहत जीन के ।
कटत सब तीमीर महा दुष्ट कलिकाल के,
भक्ति रस गूढ दृढ़ होत तीनके ॥१॥

जंत्र और मंत्र महा तंत्र बहु भांत के,
असुर ओर सुरन को डरन जीनके ॥
रहत निरपेक्ष अपेक्ष नहीं काहु की,
भजन आनंद में गीने न कीन के॥२॥

छांड इनको सदा ओर को जे भजे,
ते परे संसार मांहे भ्रम के ।
धार मन एक श्रीवल्लभाधीश पद,
करन मन कामना होत जीनके॥३॥

मन उन्मत सो फिरत अभिमान में,
जन्म खोयो वृथा रात दिन के ।
रहत श्रुति सार निरधार निश्चे करी,
सर्वदा शरण 'रघुनाथ' जीनके॥४॥

समाप्त